"उत्तर प्रदेश में बाल श्रम समस्या के विभिन्न आर्थिक आयाम"

(वर्ष 1950 - 2000 तक)
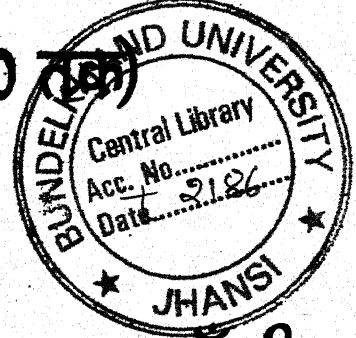
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी

की

कला संकाय (अर्थशास्त्र)

पी०-एच०डी० उपाधि

हेतु प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध

2005

शोध निर्देशक
डा० के०के० श्रीवास्तव
(रीडर)
राजकीय स्ना० महाविद्यालय
हमीरपुर

शोधार्थिनी
शान्ती सचान

प्राक्कथन

वर्तमान समय में जब प्रत्येक देश विकास की असीम सम्भावनायें तलाश कर निरन्तर प्रगति के मार्ग पर अग्रसर है, ऐसे में देश के भावी कर्णधार बालकों की ओर पर्याप्त ध्यान न दिया जाना अत्यन्त चिन्ता एवं दुःख का विषय है। अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय स्तर पर बाल श्रम समस्या के समाधान के लिये जो प्रयास किये जा रहे हैं वे प्रयास समस्या की गम्भीरता को देखते हुये अपर्याप्त सिद्ध हुये है। बाल श्रम समस्या की गम्भीरता एवं नन्हें–नन्हें बच्चों को विवशतावश शोषणकारी परिस्थितियों में काम करते हुये देखकर इस विषय पर शोधकार्य कर उनकी समस्याओं एवं विवशताओं को करीब से जानने की उत्सुकता ने मुझे इस अध्ययन को प्रारम्भ करने की प्रेरणा प्रदान की। मेरी उत्सुकता तथा समस्या के महत्व को समझते हुये मेरे शोध पर्यवेक्षक डा0 किशन कुमार ने मुझे इस कार्य के लिये प्रोत्साहित किया तथा अपना अमूल्य योगदान दिया।

बाल श्रम की समस्या भारत और सम्पूर्ण विश्व की एक बड़ी समस्या है। निर्धन परिवारों के बहुत से बच्चे निर्धनता के कारण काम के लिये भेजे जाते हैं। जिसके कारण वे शिक्षा एवं विकास के लिये आवश्यक सुविधाओं से वंचित रहते है। इस प्रकार उन्हें उस निर्धनता से निकल पाने का कोई अवसर नहीं मिल पाता जिसमें वे जन्म लेते हैं। बाल श्रम उन्मूलन के मुद्दे को लेकर विभिन्न मंचों पर देश के भीतर और बाहर चर्चायें हुई हैं और राज्य की ओर से इस प्रथा के उन्मूलन के लिये अनेक कदम भी उठाये गये हैं, लेकिन इन प्रयासों के बावजूद बाल श्रम की समस्या सम्पूर्ण विश्व के सामने निरन्तर एक बड़ी राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक और नैतिक चुनौती के रूप में विद्यमान है।

वर्तमान अध्ययन का उद्देश्य बाल श्रम समस्या के कारण और परिणाम जानकर उसकी गम्भीरता का पता लगाना तथा शिक्षाविद्‌ों, विद्वानों एवं सरकार का ध्यान इस ओर आकर्षित करना है ताकि इस ज्वलन्त समस्या के समाधान के लिये उपयुक्त नीति तैयार कर कोमल बचपन को देश के भावी विकास में योगदान देने के लिये सुरक्षित किया जा सके। इस विस्तृत समस्या के सन्दर्भ में मेरा यह अध्ययन एक लघु प्रयास है।

शान्ती सचान

आभारिका

"उत्तर प्रदेश में बाल श्रम समस्या के विभिन्न आर्थिक आयाम (1950–2000 तक)" शीर्षक पर प्रस्तुत शोध कार्य मेरा अपना ही प्रयास नहीं वरन् कुछ विद्धान व्यक्तियों की अनुकम्पा का फल है, जिनके माध्यम से मुझे अपने शोध कार्य में पर्याप्त सहायता एवं निर्देशन प्राप्त हुआ है।

मैं सर्वप्रथम अपने शोध निर्देशक आदरणीय डा0 किशन कुमार श्रीवास्तव के प्रति कृतज्ञता के व्यक्त करती हूँ जिन्होने बड़े ही धैर्य व लगन के साथ मेरी भूलों को माफ करते हुए मेरा मार्गदर्शन किया।

मैं विशेष रूप से आरदणी **डा0 देवेन्द्र कुमार अवस्थी** रीडर अर्थशास्त्र विभाग, वी0एस0एस0डी0 कालेज, कानपुर, **डा0 ज्ञान प्रकाश श्रीवास्तव** प्रवक्ता अर्थशास्त्र, **डा0 आर0के0 दीक्षित** रीडर अर्थशास्त्र विभाग पी0पी0एन0 कालेज कानपुर, **डा0 स्वामी प्रसाद** विभागाध्यक्ष समाजशास्त्र विभाग राजकीय स्ना0 महाविद्यालय हमीरपुर, **श्री महेन्द्र सिंह सचान**, **श्री विजय राजपूत** आदि सभी महानुभावों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ। आप सभी ने अपना स्नेहाशीष प्रदान करते हुए मेरे शोध कार्य को गरूता प्रदान की है।

अन्त में मैं अपने देवरूपी पति **श्री दिनेश सिंह सचान** तथा अन्य सभी परिवारीजन एवं मित्रों को विशेष रूप से धन्यवाद देना चाहती हूँ जिन्होंनें समय–समय पर मेरा उत्साहवर्धन किया तथा उपयुक्त सहायता प्रदान की। मैं बाल श्रम विभाग के सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों का भी आभार प्रकट करती हूँ। जिन्होने शोध सामग्री को एकत्रित करने में पर्याप्त सहायता प्रदान की है। इसके अतिरिक्त मैं उन सभी बाल श्रमिकों एवं उनके अभिभावकों का भी आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होने अध्ययन के दौरान सूचनायें एकत्रित करने में मुझे सहयोग प्रदान किया।

घोषणा–पत्र

मैं शान्ती सचान घोषणा करती हूँ कि बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी से सम्बद्ध रीडर डा0 किशन कुमार श्रीवास्तव के निर्देशन में पी0एच0डी0 (अर्थशास्त्र) उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबन्ध **"उत्तर प्रदेश में बाल श्रम समस्या के विभिन्न आर्थिक आयाम (1950–2000 तक)"** मेरी अपनी मौलिक रचना है तथा मेरी सम्पूर्ण जानकारी के अनुसार इसके पूर्व यह शोध कार्य अन्यत्र प्रस्तुत नहीं किया गया है।

शोधार्थिनी :

शान्ती सचान

शान्ती सचान

एम0ए0 (अर्थशास्त्र)

प्रमाण पत्र

मैं प्रमाणित करता हूँ कि शान्ती सचान ने **''उत्तर प्रदेश में बाल श्रम समस्या के विभिन्न आर्थिक आयाम (1950–2000 तक)''** विषय पर बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी के शोध अध्यादेश में उल्लिखित निर्धारित अवधि (200 दिन) तक उपस्थित रहकर मेरे निर्देशन में परिश्रम के साथ शोध कार्य पूर्ण किया है। इनकी विषय सामग्री मौलिक है। यह बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी की पी0एच–डी0 उपाधि के सभी उपबन्धों की पूर्ति करती है। मैं संस्तुति करता हूँ कि यह शोध ग्रन्थ इस योग्य है कि मूल्यांकन हेतु विश्वविद्यालय में प्रस्तुत किया जाये।

निर्देशक,

Kishan Kumar

डा0 किशन कुमार श्रीवास्तव

(रीडर)

राजकीय स्ना0 महाविद्यालय, हमीरपुर

अनुक्रमणिका

पंचम् अध्याय

तालिकाओं का विवरण

प्रथम अध्याय

प्रस्तावना

बच्चे किसी भी राष्ट्र की निधि होते है, देश के भावी नागरिक और कर्णधार होते हैं। आज बालकों को शिक्षा के बदले काम करते हुये पर्याप्त मात्रा में देखा जा सकता है। बाल श्रम वर्तमान समय में भारत तथा विश्व में एक ज्वलंत समस्या है जिसके साथ अनेक राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक मुद्दे जुड़ गये हैं। बालकों की अच्छी अथवा बुरी दशा ही किसी देश के सांस्कृतिक स्तर का सबसे विश्वसनीय मापदण्ड होता है। बालक मानव–जीवन की नींव है। बालक रूपी बीज से ही मानव वृक्ष का निर्माण होता है। यदि किसी समाज में बालक उपेक्षित अथवा तिरस्कृत है, अथवा जैसे ही उनमें कार्य करने की थोड़ी सी भी शक्ति आती है वैसे ही उन्हें कठोर कार्य के कोल्हुओं में जुटना पड़ता है, तो शक्ति का ऐसा दुरूपयोग, उस समाज के आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से पिछड़े होने का प्रत्यक्ष प्रमाण है। इसके विपरीत, यदि देश में बालकों को विशेष स्थान प्राप्त है तथा वहाँ उनके शारीरिक व मानसिक विकास के लिये समस्त सम्भव प्रयत्न किये जाते हैं, तो वह समाज आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से उन्नतिशील समझा जायेगा।

विश्व अर्थव्यवस्था में बाल श्रमिकों का एक बहुत बड़ा योगदान देखने को मिलता है। अधिकांश विकासशील देशों में आज बड़ी संख्या में अप्रशिक्षित श्रम उपलब्ध रहता है। इन अशिक्षित एवं अप्रशिक्षित श्रमिकों को संगठित क्षेत्रों में रोजगार प्राप्त नहीं हो पाता है। अतः बाध्य होकर इन श्रमिकों को असंगठित क्षेत्रों में जीवन यापन के लिये रोजगार तलाश करना पड़ता हैं जिनमें बड़ी संख्या में बाल श्रमिक होते हैं। चूंकि ऐसे अधिकांश श्रमिक अत्यन्त निर्धन होते हैं अतः उनके बच्चे

भी आय अर्जित करने में उनका साथ देते हैं। इस प्रकार बाल श्रम का सबसे प्रमुख कारण अशिक्षा एवं निर्धनता को माना जाता है। बहुत से विकासशील देशों में बच्चे बहुत कम उम्र में ही कार्य करना प्रारम्भ कर देते है।

अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा समय–समय पर कराये गये अध्ययनों में भी बाल श्रम की समस्या को सम्पूर्ण विश्व की अर्थव्यवस्था के लिए हानिकारक माना गया है। इसी संदर्भ में संयुक्त राष्ट्र के 1981 के अधिवेशन में बाल अधिकारों को संरक्षित रखने के लिये विभिन्न दिशा–निर्देश जारी किये गये थे। वैसे तो बाल श्रम की समस्या सम्पूर्ण विश्व के लिये एक चुनौती है परन्तु विशेष रूप से एशिया के संदर्भ में यह अधिक गम्भीर है। एक अध्ययन के अनुसार कुछ एशियाई देशों में वहाँ की कुल श्रम शक्ति का 10 प्रतिशत बाल श्रमिक हैं। भारत की स्थिति भी कामोवेश ऐसी ही है।

वर्तमान समय में एशिया तथा अफ्रीका के अधिकांश विकासशील देशों की सामाजिक, आर्थिक स्थितियों को देखने से ज्ञात होता है कि यहाँ की एक बहुत बड़ी जनसंख्या का जीवन–स्तर अत्यन्त निम्न स्तर का है, तथा कम उम्र में ही बच्चे अपने परिवार के लिये आय अर्जित करने के लिये विवश होते हैं। निर्धन श्रमिकों के बड़े–बड़े परिवारों में एक अकेला व्यक्ति अपनी आवश्यक आवश्यकताओं को पूरा करने में भी असमर्थ होता है, अतः ऐसे में शिक्षा का अभाव उनकी निर्धनता को और अधिक बढ़ाता ही है तथा छोटे–छोटे बच्चों को कम उम्र में ही असंगठित क्षेत्र के विभिन्न व्यवसायों तथा उद्योगों में निम्न मजदूरी दर पर कार्य करना पड़ता है ताकि वे अपने परिवार को सहारा दे सकें। पिछले कुछ दशकों में यदि हम एशिया के कुछ देशों पर नजर डालें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि बड़े पैमाने पर बाल श्रमिक विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत है। यह अनुमान है कि विश्व में लगभग

12 करोड़ बाल श्रमिक है। मौजूदा आर्थिक स्थितियों में इन बच्चों की बहुतायत अफ्रीका, एशिया और लैटिन अमरीका के विकासशील देशों में है, लेकिन बहुत से विकसित देशों में भी बाल श्रमिक मौजूद हैं। ये बच्चे अधिकतर ऐसे व्यवसाय एवं उद्योगों में लगे हुये हैं जो काफी खतरनाक और जोखिम भरे है। ऐसे उधोग जिनमें बाल श्रमिक बड़ी मात्रा में कार्यरत है, मुख्यतः कृषि उद्योग, लघु उद्योग, व्यावसायिक प्रतिष्ठान, दुकानें, रेस्टोरेन्ट एवं होटल तथा घरेलू सेवायें आदि हैं।

बाल श्रमिक कुछ ऐसे औद्योगिक इकाइयों, लघु उद्योगों, खान उद्योग, शिपिंग तथा व्यावसायिक प्रतिष्ठानों में भी बड़ी मात्रा में कार्यरत हैं, जहाँ वर्षो से बाल श्रमिक प्रतिबन्धित हैं। पिछले कुछ वर्षो में संगठित क्षेत्र के उद्योगों में बाल श्रमिकों की संख्या में बड़ी मात्रा में कमी हुई है जिसका प्रमुख कारण लोगों में बढ़ती हुई जागरूकता तथा संवैधानिक कानून हैं। इस कारण वर्तमान समय में अधिकांश बाल श्रमिक असंगठित क्षेत्र के उद्योगों तथा कार्यो में कार्यरत हैं।

औद्योगिक इकाइयों के सेवायोजकों की दृष्टि में बाल श्रमिकों की सबसे प्रमुख विशेषता सस्ते श्रम की उपलब्धता है जिससे तत्काल लाभ प्राप्त किया जा सकता है। श्रम की पूर्ति सदैव मांग से अधिक होती है तथा उनमें मोलभाव की शक्ति का सर्वथा अभाव होता है। लघु उत्पादन इकाइयों में बच्चे मुख्यतः अपने बड़े रिश्तेदारों या मित्रों के साथ कार्य करते हैं जिन्हें सीधे मजदूरी नहीं दी जाती है बल्कि प्रत्यक्ष रूप से 'पूरक मजदूरी' मुख्य श्रमिक के माध्यम से दी जाती है।[1]

इसके साथ ही साथ बच्चे अपने अभिभावकों के साथ निर्माण कार्यो में भी बोझा उठाने तथा पत्थर तोड़ने के कार्यो में लगे होते हैं। इसके अतिरिक्त कृषि

[1] Gerry Rodgers and Guy Standing, The Economic Rules of Children in Low-Income Countries, (Geneva, ILO, 1979) Population and Labour Policies Progamme, Working Paper No. 81, P-15.

कार्यो में बच्चे अपनी क्षमता के अनुसार फसलों को बोने, देख–रेख करने तथा उनकी कटाई के समय सहायक के रूप में कार्य में हाथ बंटाते है। सीमांत कृषकों और भूमिहीन कृषकों के बच्चे बहुत कम उम्र में ही कृषि व्यवसाय में कार्य करने लगते हैं। जहाँ पर बच्चे प्रत्यक्ष रूप से कार्य रोजगार के रूप में नहीं कर रहे हैं वहाँ पर भी जानवरों को चराने, तथा हस्तशिल्प उद्योगों में छोटे–छोटे कार्यो के माध्यम से अपने परिवार की आर्थिक गतिविधियों में हाथ बँटा रहे हैं। वर्तमान समय में एक अन्य ऐसा क्षेत्र जहाँ पर बड़ी संख्या में बाल श्रमिकों की विद्यमानता है वह भिखारी बच्चों का ऐसा वर्ग हैं जहाँ पर बच्चे भीख मांगकर अपने परिवार को आर्थिक सहायता करते हैं।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 24 में यह प्रावधान किया गया है कि "14 वर्ष से कम आयु के किसी भी बालक को किसी भी फैक्ट्री अथवा अन्य खतरनाक उद्योगों में रोजगार नहीं दिया जायेगा।" इसके अतिरिक्त भी बच्चों के दुकानों, रेस्टोरेण्ट, होटलों आदि में कार्य करने के सम्बन्ध में विभिन्न राज्यों ने अपने–अपने कानून बनाये हैं जिनमें 1948 का फैक्ट्री अधिनियम लागू नहीं होता है। पंजाब राज्य में, कोई भी दुकानदार या व्यावसायिक प्रतिष्ठान 14 वर्ष से कम आयु के बालकों को अपने यहाँ काम पर नहीं लगा सकता है।[1]

बाल श्रम पर हुये विभिन्न शोध कार्यो में यह पाया गया है कि उनके कार्य का स्थान तथा काम की दशायें गम्भीर रूप से असंतोषजनक हैं विशेष रूप से अनियमित फैक्ट्रियों एवं अन्य असंगठित क्षेत्र के उद्योगों में ये दशायें अत्यन्त दोषपूर्ण हैं। वे कम रोशनी और गन्दे वातावरण में अधिक घण्टों तक कार्य करते हैं। कानूनी कार्यवाहियों से बचने के लिये बहुत से बालकों को प्रशिक्षणार्थियों के रूप में

[1] The Punjab Shops and Commercial Establishment Act, 1958, Article, 29.

प्रदर्शित किया जाता है। सेवायोजकों द्वारा उनके साथ अत्यन्त बुरा सलूक किया जाता है। बहुत से मामलों में उन्हें सेवायोजकों के घरेलू कार्यो को करने के लिये बाध्य किया जाता है।

असंगठित क्षेत्र में श्रमिकों का मजदूरी स्तर मुख्य रूप से बालकों का मजदूरी स्तर अत्यन्त निम्न होता है। रोजगार का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है जहाँ पर बालकों को काम पर न रखा जाता हो लेकिन कोई ऐसा निर्मित कानून नहीं है जो प्रभावपूर्ण ढंग से कार्य दशाओं और मजदूरी स्तर को निर्धारित कर सकें।

ऐसा इसलिये होता है क्योंकि बाल श्रमिकों को वैधानिक रूप से श्रम शक्ति का हिस्सा नहीं माना जाता है। इस कारण से उसे वयस्क श्रमिकों के समान विधिक सुरक्षा प्राप्त नहीं होती है। उन्हें कोई सामाजिक सुरक्षा प्राप्त नहीं होती, अवकाश अथवा वार्षिक अवकाश के समय की कोई मजदूरी नहीं दी जाती और न ही व्यापार संघों के द्वारा उनकी सुरक्षा की जाती है। जहाँ एक ओर वयस्क श्रमिकों की मजदूरी का निर्धारण जीवन यापन की आदर्श स्थिति को आधार मानते हुये विधायी आधार पर किया जाता है, वहीं दूसरी ओर बाल श्रमिकों की बढ़ती हुई संख्या के कारण उन्हें जीवन–यापन के लिये आवश्यक मजदूरी से भी निम्न मजदूरी दी जाती है और जो शोषण की मात्रा में वृद्धि करती है।[1]

विकासशील देशों में बालकों के माता–पिता की बेरोजगारी, निर्धनता और कर्ज बाल श्रम समस्या का प्रमुख कारण है। प्रायः माता–पिता आवश्यकता होने पर सेवायोजक से कुछ धन उधार ले लेते हैं तथा सुरक्षा की गांरटी के रूप में बालकों को काम पर लगा देते हैं। यह कर्ज बालकों को अपने परिश्रम से चुकाना

---

[1] T.S. Papola, Urban Informal Sector in Developing Economy, Delhi; Vikas Publishing House, 1981, P-4

पड़ता है। देश में ऐसी स्थिति को बंधुआ मजदूरी के रूप में जाना जाता है। भारत में बाल श्रम से सम्बन्धित प्रमाण प्रदर्शित करते हैं कि धनी वर्ग के व्यक्तियों या परिवारों द्वारा बालकों को घरेलू नौकर अथवा श्रमिक के रूप में रखने का व्यापक प्रचलन है। मजदूरी प्रत्यक्ष रूप से माता–पिता को दी जाती है और बालकों को कर्ज की अदायगी के लिये प्रयोग किया जाता है।[1] कुछ मामलों में ऐसे परिवार अपने बालकों को राज्य के दूसरे शहरों या शहरी क्षेत्र में आय अर्जित करने के लिये अस्थाई रूप से भेजने के लिये बाध्य हो जाते हैं। बहुत से मामलों में बालकों को अत्यन्त खराब कार्य–दशाओं में निम्नतम मजदूरी पर 10 से 15 घण्टे तक कार्य करने के लिये बाध्य किया जाता है।

इस प्रकार, बालकों को सभी प्रकार की नियमित अथवा अनियमित शिक्षा से दूर रखा जाता है। उन्हें सम्पूर्ण जीवनकाल के लिये अशिक्षित या गुलाम बना दिया जाता है। इसके अलावा ये बालक विभिन्न प्रकार की बीमारियों से ग्रसित हो जाते है ये बीमारियाँ मुख्य रूप से आँखों, फेफड़ों, मस्तिष्क तथा अन्य आवश्यक अंगों से सम्बन्धित होती है। इन कार्यशील बालकों के लिये किसी प्रकार की चिकित्सीय सहायता की व्यवस्था नहीं होती है, बीमार होने पर उन्हें कार्यमुक्त कर घर भेज दिया जाता है तथा अवकाश के समय का कोई वेतन नहीं दिया जाता है। माता–पिता जो पहले से ही निर्धनता में जकड़े होते हैं उनका नियमित इलाज करा पाने में असमर्थ होते है। जिसका अन्तिम परिणाम यह होता है कि बहुत से बाल श्रमिक जीवनभर गम्भीर रोगों से ग्रसित रहते हैं।

---

[1] Heather and Vijay Joshi, Surplus labour and the City: A Study of Bombay, 1976, PP-44-49

बाल श्रम का अर्थ एवं विस्तृत स्वरूपः

'बालक' को एक ऐसे व्यक्ति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसे शारीरिक, मनोवैज्ञानिक और बौद्धिक विकास के लिये वयस्कों के संरक्षण एवं सुरक्षा की तब तक आवश्यकता होती है जब तक वह स्वयं वयस्कों के इस संसार में स्वतन्त्र रूप से कार्य करने में सक्षम न हो जाये। बच्चों की आवश्यक दशा यह है कि वे बिना सहयोग के जीवित नहीं रह सकते। साधारणतया यह सहयोग उसे परिवार द्वारा तथा शैक्षिक संस्थाओं द्वारा दिया जाता है। इन दोनों व्यवस्थाओं को कानूनी रूप से मान्यता एवं समर्थन प्राप्त होता है।[1]

श्रम अथवा कार्य को साधारण शब्दों में ऐसे शारीरिक एवं बौद्धिक प्रयास के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो मजदूरी अथवा किसी अन्य पुरस्कार की आशा में किया जाता है। सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक परिस्थितियों के आधार पर कार्य की परिभाषा में भिन्नता हो सकती है विशेषतया बच्चों के संदर्भ में। इसी प्रकार सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियों में भिन्नता के कारण भी परिभाषा में अन्तर हो सकता है। सामाजिक विज्ञान के इनसाइक्लोपीडिया के अनुसार "प्रत्येक बच्चे को बचपन से सम्बन्धित उन समस्त विकास के अवसरों की आवश्यकता होती है जिनसे न सिर्फ उनके शारीरिक बल्कि मानसिक तथा व्यक्तित्व के विकास की आवश्यकता पूर्ण हो।"[2] इस प्रकार जो बालक इन अवसरों से वंचित रहकर रोजगार में संलिप्त रहते हैं, उन्हें बाल श्रमिकों की संज्ञा दी जाती है।

---

[1] Labour Problems in America, Ed. Stein, Emanuel and Devis Jerome, PP-112 – 113.
[2] Giri, V.V., Labour Problems in Indian Industry, P-360.

प्रायः 'बाल श्रम' से तात्पर्य रोजगार प्राप्त बच्चों अथवा कार्यरत बच्चों के पर्यायवाची के रूप में जाना जाता है। इस दृष्टि से बाल श्रम का तात्पर्य बच्चों द्वारा किये जाने वाले ऐसे कार्य से है जो लाभ प्राप्त करने के उद्देश्य से किया जाता है। परन्तु सामान्य रूप से 'बाल श्रम' का तात्पर्य इससे भिन्न है। यह ऐसे कार्य की ओर संकेत करता है जो घृणात्मक तथा शोषण से युक्त होते हैं। अतः संयुक्त राष्ट्र के राष्ट्रीय बाल श्रम संगठन के अध्यक्ष होमर फोल्क (Homer Folks) ने बाल श्रम को इस प्रकार परिभाषित किया था, "बच्चों के द्वारा किया जाने वाला कोई भी ऐसा कार्य जो उनके पूर्ण शारीरिक विकास, उनके न्यूनतम शिक्षा प्राप्त करने के अवसरों अथवा उनकी अन्य आवश्यकताओं को पूर्ण करने में अवरोध उत्पन्न करता है, से है।"

वी0वी0 गिरी 'बाल श्रम' को दो अर्थो में परिभाषित करते हैं। 'बाल श्रम' की साधारणतया दो प्रकार से व्याख्या की जा सकती है, प्रथम, आर्थिक प्रयास के रूप में तथा द्वितीय, सामाजिक बुराई के रूप में। प्रथम संदर्भ में इससे तात्पर्य ऐसे बालकों से है जो लाभपूर्ण व्यवसायों में रोजगार प्राप्त कर परिवार के लिये श्रम आय अर्जित करते हैं। द्वितीय संदर्भ में बाल श्रम का अर्थ वर्तमान समय में साधारणतया एक सामाजिक बुराई के रूप में किया जाता है। सामाजिक बुराई के रूप में इसे देखने के लिये यह आवश्यक है कि कार्य अथवा व्यवसाय की प्रकृति का पता लगाया जाये जिनमें बच्चे कार्यरत हैं। यह एक सामाजिक बुराई कहलायेगी यदि कार्य की प्रकृति खतरनाक तथा ऐसी है जिसमें उनके विकास के अवसरों को अवरूद्ध किया जा रहा है।

अतः सीमाबद्ध रूप से बाल श्रम का तात्पर्य बालकों के ऐसे कार्यो से है जिसमें बच्चे इस प्रकार के लाभपूर्ण व्यवसायों में कार्यरत हैं जो उनके स्वास्थ्य के

लिये हानिकारक हैं तथा जहाँ पर उनके विकास के अवसरों की क्षीण सम्भावनायें हैं। इसप्रकार कार्यरत बच्चों को "बाल श्रम" के अन्तर्गत रखने के लिये तीन बातों का होना आवश्यक है। प्रथम, बच्चे किसी लाभपूर्ण व्यवसाय में कार्यरत होने चाहिये, द्वितीय, जिस कार्य में वे कार्यरत हैं निश्चित रूप से खतरनाक, हानिकारक होना चाहिए, और तृतीय निश्चित रूप से ऐसे कार्यो से उनके विकास के अवसरों को अवरूद्ध किया जा रहा हो। किसी पिता के द्वारा बच्चों से कई घण्टों तक लगातार खेतों या व्यवसाय में कराया जा रहा कार्य भी इस परिभाषा में सम्मिलित होगा लेकिन छात्रों के स्कूल वर्कशाप में कार्य करने को 'बाल श्रम' के अन्तर्गत नहीं रखा जा सकता है।

बाल श्रम में केवल ऐसे बच्चों के कार्यो को सम्मिलित नहीं किया जाता है जो केवल उद्योगों में कार्यरत हैं बल्कि ऐसे गैर–औद्योगिक कार्यो में कार्यरत बालकों को भी बाल श्रम के अन्तर्गत रखा जायेगा जो उनके शारीरिक, मानसिक, नैतिक एवं सामाजिक विकास के लिये हानिकारक हैं। बाल श्रम को मुख्यतः दो भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है जैसे– घरेलू कार्य तथा गैर घरेलू या औद्योगिक कार्य इन दोनों को भी दो वर्गो में विभक्त किया जा सकता है, मौद्रिक तथा अमौद्रिक।
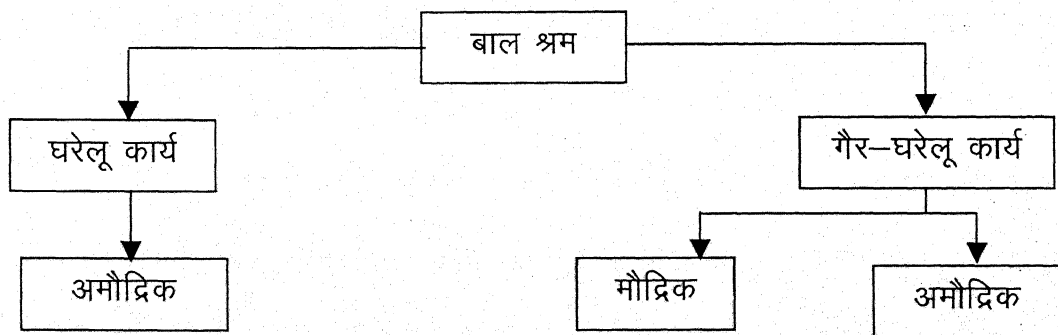
भारतीय संस्कृति में घरेलू कार्यो में बालकों की सहभागिता को सामान्यतः स्वीकार किया जाता है। इसी प्रकार बच्चे अपने माता–पिता के साथ पारिवारिक श्रमिक के रूप में गैर–घरेलू या औद्योगिक कार्यो जैसे–कृषि तथा उससे जुड़े हुये व्यवसाय डेयरी तथा लघु एवं कुटीर उद्योगों में भी कार्यरत होते है। गैर–घरेलू पारिवारिक या कुटीर उद्योगों में बच्चों को या तो कार्य करने के लिये बाध्य किया जाता है अथवा पारम्परिक गुणों या क्षमताओं को उनमें स्थानान्तरित करने के लिये माता–पिता उन्हें अपने साथ काम में लगा लेते है। बाल श्रम का यह भाग पारिवारिक श्रम का एक हिस्सा होता है जो राज्य की व्यवस्थापिका के प्रतिरोध क्षेत्र से बाहर होता है जिस पर कानूनी रूप से रोक नहीं लगाई जा सकती है।

भारत वर्ष में कोई ऐसा निश्चित प्रावधान नहीं है जिसमें बाल श्रम को सही ढंग से परिभाषित किया गया हो। यद्यपि राज्य की व्यवस्थापिका द्वारा कुछ ऐसे प्रावधान हैं जिसमें बालकों के रोजगार में आने की एक न्यूनतम आयु का निर्धारण किया गया है परन्तु यह आयु भी कार्य की प्रकृति के आधार पर अलग–अलग है। व्यवस्थापिका द्वारा सामान्यतः कार्यरत बालकों को ही बाल श्रम के रूप में परिभाषित किया जाता है जो किसी आर्थिक गतिविधि में संलिप्त हैं, परन्तु उनकी आयु 14 वर्ष से कम है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने 1983 में "बाल श्रम" को परिभाषित करते हुये कहा था कि जो बच्चे स्थाई रूप से प्रौढ़ व्यक्तियों जैसी जिन्दगी जीते हैं, लम्बे समय तक कम वेतन पर ऐसी परिस्थितियों में काम करते हैं, जो उनके शारीरिक और मानसिक विकास में बाधक है और उनके स्वास्थ्य पर बुरा असर डालती है, कभी–कभी माता–पिता से दूर रहकर या बिछुड़कर कार्य करते है, अधिकतर उद्देश्यपूर्ण शिक्षा और प्रशिक्षण के ऐसे अवसरों से वंचित रहते हैं जो उनके भविष्य के लिये आवश्यक हैं, 'बाल श्रमिक' कहलाते है।

भारत में बाल श्रमिकों को दो भागों में बांटा जाता है। (1) वैधानिक बाल श्रमिक तथा (2) अवैधानिक बाल श्रमिक। वैधानिक रूप से बाल श्रमिकों के अन्तर्गत वे ही मजदूर आते हैं जो न्यूनतम आयु से अधिक हैं और वयस्क नहीं है। कारखाना अधिनियम[1], 1948 के अनुसार 14 से 15 आयु वर्ग के श्रमिकों को बालक तथा 15 से 18 आयु वर्ग के बालकों को किशोर कहा जाता है। 14 वर्ष से कम आयु के व्यक्तियों की किसी भी काम में नियुक्ति निषेध है। अतः उनको बाल श्रमिक भी नहीं कहा जा सकता। खदानों में 15 से 16 वर्ष के श्रमिकों को बाल श्रमिक कहा जाता है। बागानों में 12 से 15 वर्ष तक के बालकों को बाल श्रमिक कहा जाता है। अवैधानिक बाल श्रमिकों की श्रेणी बहुत विस्तृत है। इसके अन्तर्गत असंगठित उद्योगों में लगे हुये बच्चे, खेतिहर मजदूर तथा वे सब बच्चे आ जाते है जो गैर कानूनी ढंग से कारखानों, खदानों और बागानों आदि में अधिक उम्र दिखाकर भर्ती कर लिये जाते हैं।

बाल श्रमिक भारत में विभिन्न व्यावसायिक प्रक्रियाओं में लगे हुये हैं, जिनमें बीड़ी उद्योग, काँच उद्योग, पीतल उद्योग, कालीन उद्योग, माचिस उद्योग, पटाखा उद्योग, अगरबत्ती उद्योग, स्लेट, हीरा–जवाहरात जैसे अनेक खतरनाक उद्योगों में बाल श्रमिक कार्य कर रहे है। इन श्रमशील बालकों को सबसे अधिक खतरा और नुकसान उनके साथ होने वाली मारपीट और शारीरिक शोषण से होता है। बाल श्रमिक बड़े पैमाने पर ग्रामीण क्षेत्रों के असंगठित क्षेत्रों जैसे कृषि तथा गैर कृषि व्यवसायों में कार्य कर रहे हैं, इसी प्रकार शहरी क्षेत्रों के असंगठित क्षेत्रों में बाल श्रमिकों की सर्वाधिक संख्या काम पर लगी हुई है।

---

[1] V.C. Sinha, Puspa Sinha : Labour Economics, 2004 P. 419.

बाल श्रम के कारण एवं परिणाम:

बाल श्रम को एक सामाजिक–आर्थिक समस्या माना जाता है। यह भी माना जाता है कि निर्धनता, अनदेखी, निम्न आय स्तर, बेरोजगारी, रहन–सहन का निम्न स्तर एवं सामाजिक पिछड़ापन 'बाल श्रम' के कुछ उत्तरदायी कारण है।

बाल श्रम का सबसे महत्त्वपूर्ण कारण व्यापक निर्धनता को माना जाता है। निर्धनता माता–पिता को बाध्य करती है कि वे अपने बालकों को रोजगार की तलाश में भेंजें ताकि वे निम्न पारिवारिक आय स्तर को बढ़ाने में सहायक हो सकें। जीवन यापन के साधनों की अधिक कीमतों के कारण निर्धन परिवारों को जीवन यापन के लिये अधिक आय की आवश्यकता होती है जिस कारण से निर्धन परिवार के बालक बाध्य होकर श्रम बाजार में प्रवेश करने को बाध्य होते हैं। बाल श्रम की समस्या वयस्क मजदूरों की मजदूरी दर तथा कार्य के घण्टों से सह–सम्बन्धित है। अनुपयुक्त मजदूरी दर के कारण वयस्क मजदूर अपने बच्चों को कार्य पर लगाने के लिये बाध्य होते हैं, बीमारियों एवं अन्य दुर्घटनाओं के समय अतिरिक्त धन की आवश्यकता होती है और बालकों को कार्य में भेजकर इस अतिरिक्त धन की आवश्यकता को पूरा करने के लिये निर्धन परिवार बालकों को कार्य करने के लिये भेजने के लिये आसानी से तैयार हो जाते हैं।

लोकमत से सम्बन्धित संस्था द्वारा 1969 में कराये गये एक सर्वेक्षण के अध्ययन में यह प्रदर्शित किया गया कि कुल भारतीय जनसंख्या का 41.2 प्रतिशत भाग निर्धनता रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहा है। इसमें से लगभग

आधे लोग अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के हैं। गांवों के कृषि मजदूरों की एक बड़ी संख्या इस समाज के अन्तर्गत आती है।[1]

अभी हाल ही में मद्रास, मदुरै तथा कोयम्बटूर में हुये एक महत्वपूर्ण अध्ययन में यह पाया गया कि लगभग तीन चौथाई बालक रोजगार में इसलिये लगे हुये है ताकि वे अपनी पारिवारिक आय में सहायक हो सकें तथा 23 प्रतिशत बालक अपने पिता या अभिभावक की मृत्यु हो जाने के कारण श्रम कर रहे है। राष्ट्रीय जन सहभागिता तथा बाल विकास संस्था, नई दिल्ली में 1975 में आयोजित एक सेमिनार में भी यह निष्कर्ष निकाला गया कि लाखों परिवार गरीबी रेखा से नीचे रह रहे हैं, जो जीवित रहने के लिये बाध्य होकर अपने बालकों को कार्य करने के लिये श्रम बाजार में प्रवेश दिलाते है।[2]

मुम्बई, मद्रास, दिल्ली तथा कानपुर जैसे बड़े शहरों में बड़ी संख्या में प्रवासी श्रमिकों को आसानी से देखा जा सकता है। इन प्रवासी श्रमिकों के बालकों की रोजगार में लिप्तता आर्थिक असहायता एवं निर्धनता का दृढ़ उदाहरण है। मुम्बई में बाल श्रमिकों पर हुये एक अध्ययन में पाया गया कि मुम्बई में कुल बाल श्रमिकों का 81 प्रतिशत भाग प्रवासी बालकों का है जबकि केवल 19 प्रतिशत बाल श्रमिक मुम्बई के निवासी है।[3] इसी प्रकार कूड़ा बीनने वाले बच्चों पर हुये एक अध्ययन में पाया गया कि प्रवासी श्रमिकों का एक बड़ा प्रतिशत अशिक्षा एवं अप्रशिक्षित होने के कारण कूड़ा बीनने का कार्य कर रहे हैं, जिसमें उनके बच्चे बराबर उनका सहयोग करते हैं तथा पारिवारिक आय में उनकी भागीदारी वयस्कों के समान ही है।

---

[1] Institute of Public Opinion, monthly Commentry on Indian Economic Condition, December, 1973.
[2] National Institute of Public Co-operation and Child Development – Seminar Recommendations.
[3] Smt. Khandar M. Report on the Situation of Children and Youth in Greater Bombay, 1970.

बाल श्रम की समस्या वयस्क श्रमिकों के मजदूरी स्तर से सह–सम्बन्धित है। वयस्क श्रमिकों की अपर्याप्त मजदूरी के कारण वे अपने बालकों को श्रम बाजार में कार्य पर भेजने के लिये विवश होते हैं तथा सेवायोजक भी उनके बालकों को काम पर रखकर मजदूरो की इस कमजोरी का लाभ उठाते हैं तथा विभिन्न संरक्षण कानूनों की आड़ में उन्हें निम्नतम मजदूरी देते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की एक रिपोर्ट के अनुसार, बाल श्रम स्वयं में एक समस्या नहीं है बल्कि यह समस्या बालकों के रख–रखाव तथा वयस्क श्रमिकों की जीवन निर्वाह मजदूरी के कारण है ताकि वे अपने परिवार के जीवन निर्वाह स्तर को बनाये रख सकें।[1] इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि माता–पिता बालकों को कार्य पर भेजने के लिये इसलिये बाध्य होते हैं क्योंकि उनकी स्वयं की आय सामर्थ्य निम्न होती है। यदि उनकी आय का स्तर बढ़ा दिया जाये तो वे अपने बालकों को काम पर भेजने के लिये सहमत नहीं होंगे।[2]

बड़े पैमाने पर बाल श्रम की विद्यमानता का एक अन्य प्रमुख कारण बेरोजगारी है। लम्पकिन एवं डगलस ने 'अमेरिका में बाल श्रम' नामक पुस्तक में स्पष्ट रूप से इस ओर संकेत किया है कि लगभग 2/5 भाग बालक अपना काम ढूढ़ लेते हैं क्योंकि उनके परिवार के वयस्क व्यक्ति बेरोजगार होते हैं तथा लगभग दो तिहाई बालक काम पर इसलिये लगे होते हैं क्योंकि उनके परिवार के वयस्क व्यक्ति या तो बेरोजगार होते हैं या उनके पास अल्पकालीन काम होता है तथा एक तिहाई बालक इसलिये काम करते हैं क्योंकि उनके वयस्क किसी गम्भीर घटना का शिकार हो गये हैं।

---

[1] Report of ILO, "Needs of Children" Published by UNICEF, P – 144.
[2] Recommendations of Seminar on Employment of Children, Organised by NIPCCD, New Delhi, Held in Nov. 1975.

ग्रामीण श्रम बाजार भी वर्ष भर श्रमिकों को रोजगार देने में असमर्थ होते हैं। खेतों में कृषि कार्य न होने के मौसम में ग्रामीण श्रमिक अपने बच्चों के साथ शहरों की ओर प्रवास कर जाते हैं तथा उन्हें छोटे–छोटे व्यवसाय जैसे–होटल, रेस्टोरेण्ट, सर्विस सेन्टर आदि में काम पर लगा देते हैं। बच्चे शहरी असंगठित क्षेत्र के उद्योगों में तब तक काम पर लगे रहते हैं जब तक उनके माता–पिता गांवो को वापस नहीं जाते।

पद्मनी सेन गुप्ता[1] ने अपने अध्ययन में कहा कि कृषि कार्य में श्रमिक वर्ष में औसतन 189 दिन व्यस्त रहते हैं, ग्रामीण क्षेत्रों में कुछ अन्य रोजगार साधन भी होते है परन्तु फिर भी वर्ष में औसतन 100 दिन की बेरोजगारी विद्यमान होती है। बेरोजगारी की इस स्थिति में बहुत सी स्त्रियाँ अपने परिवार के साथ शहरों की ओर पलायन कर जाती हैं, और अपने बच्चों को गोद में लेकर भीख माँगने का कार्य करती हैं। वे इस प्रकार अपने बच्चों को शैश्वावस्था से ही भीख माँगने के कार्य में लगा देती हैं तथा बालकों के ये समूह बड़े बालकों द्वारा शोषण का शिकार हो जाते हैं जो पहले से शहर के प्रत्येक हिस्से के साथ–साथ रेलवे स्टेशनों पर भी विद्यमान होते हैं जहाँ कानूनी रूप से भीख माँगना मना होता है। इन स्थानों पर ही यह धन्धा उन्नति करता है तथा प्रशासनिक अधिकारियों के बहरे कानों तक इन बालकों का करूण क्रन्दन सुनाई नहीं पड़ता है।

तीसरी दुनियां के अधिकांश देशों में निर्धन परिवारों के बेरोजगार व्यक्तियों की सामाजिक सुरक्षा के लिये कोई निश्चित प्रावधान नहीं है। हमारे देश में भी निर्धन परिवारों की सामाजिक सुरक्षा के लिये कोई भत्ता देय नहीं है और इसी

[1] Smt. Gupta, Padmini Sen: Child Labour as a Social Problems.

कारण उनकी कोई निर्धारित आय न होने के कारण वे अपने बालकों को श्रम–बाजार में भेजने को बाध्य होते हैं।

श्रम बाजार में बालकों की उपस्थिति के कारण वयस्कों के लिये रोजगार के अवसर कम हो जाते हैं जिससे उनकी मजदूरी दर में निराशापूर्ण प्रतिकूल प्रभाव पड़ते हैं जिसके परिणाम स्वरूप माता–पिता निर्धनता के निवारण तथा परिवार के जीवन यापन के लिये बालकों को काम पर भेजने के लिये प्रोत्साहित होते हैं। इससे यह दोषपूर्ण चक्र और अधिक शक्तिशाली होता जाता है तथा असन्तुलित भोजन के कारण उनके स्वास्थ्य, शिक्षा, कार्यकुशलता आदि को कम करके उनकी उत्पादकता तथा आय को घटा देता है, जिससे वे पुनः अपने बालकों को जीवन यापन के लिये श्रम बाजार में भेजने को बाध्य होते हैं।

भारत सहित एशिया के अधिकांश देशों में कुछ सामाजिक–आर्थिक निर्धारक तत्व जैसे जाति और धर्म का स्थान, माता–पिता की व्यावसायिक योग्यता और परिवार के आकार तथा निम्न आय स्तर के मध्य स्पष्ट सम्बन्धों की उपस्थिति भी बाल श्रम की समस्या का एक प्रमुख कारण है। बाल श्रम की उपस्थिति का एक अन्य प्रमुख कारण श्रमिकों के बड़े परिवार भी हैं। यदि परिवार का आकार छोटा तथा पूर्व निर्धारित हो तो कभी बालकों को श्रम बाजार में भेजने की आवश्यकता ही न पड़े बल्कि उनकी शिक्षा एवं शारीरिक विकास पर ध्यान दिया जा सकता है परन्तु अशिक्षित और निर्धन माता–पिता इसके ठीक विपरीत सोंचते हैं। वे साधारणतया भाग्य सिद्धान्त पर विश्वास करते हैं। उनके लिये अधिक बालक अतिरिक्त आय का स्रोत होते हैं लेकिन वे यह भूल जाते हैं कि–

वरमे को गुणी पुत्रों, न च मूर्खशतान्यपि।
एकश्चन्द्र स्तमो हन्ति, न च तरोगणोऽपि च।।

अर्थात् केवल एक योग्य एवं समझदार पुत्र सैकड़ों मूर्खों से अच्छा होता है। जैसे लाखों तारे मिलकर भी उस अन्धकार को नहीं मिटा पाते जिसे अकेला चन्द्रमा दूर कर देता है। अतः यदि किसी के एक या दो बच्चे हैं, तो वह उन्हें वे सारी सुविधायें उपलब्ध करा सकता है जो उनके बच्चों के मानसिक, शारीरिक एवं सामाजिक विकास के लिये आवश्यक है परन्तु वे इस तथ्य की ओर जागरूक नहीं होते है।

अधिकांश सेवायोजक यह मानते हैं कि बालकों से बहुत सा काम लिया जा सकता है। वयस्क श्रमिकों की अपेक्षा बाल श्रमिकों को सस्ता साधन माना जाता है इससे सेवायोजकों को कम विनियोग पर अधिक से अधिक लाभ की आशा रहती है। हमारे देश में, बच्चे बहुत कम आयु से घरेलू कार्यो में लिप्त हो जाते है। कम आय वर्ग वाले परिवार छोटे बालक और बालिकाओं जिनकी आयु 8 से 14 वर्ष तक होती है, को घरेलू नौकरों के रूप में रख लेते हैं। उन्हें केवल थोड़ा सा जेब खर्च एवं भोजन दिया जाता है।

समाज में बाल श्रम की उपस्थिति का एक अन्य प्रमुख कारण अनिवार्य शिक्षा सम्बन्धी किसी प्रावधान का न होना भी है। माता–पिता द्वारा अपने बच्चों को स्कूल न भेजने तथा उनकी शिक्षा के प्रति उपेक्षा के दृष्टिकोण को बाल श्रम का कारण माना जाता है। बाल श्रमिकों के सम्बन्ध में कहा जाता है कि "आज के बाल श्रमिक कल के भिखारी होंगे," ये वे बालक एवं बालिकायें हैं जो किसी नियमित शिक्षा अथवा व्यावसायिक ज्ञान के बिना बढ़ेंगे, कुछ ही दिनों में उनकी युवा शक्तियाँ नष्ट हो जायेंगी, वे असहाय तथा कमजोर हो जायेंगे। 14 वर्ष से कम आयु के बालकों की अनिवार्य शिक्षा सम्बन्धी प्रावधान से माता–पिता अपने बच्चों को

स्कूल भेजने के लिये बाध्य होंगे तथा इस प्रकार बालकों की रोजगार में उपस्थिति पर रोक लगाई जा सकेगी।

निर्धन परिवारों में कर्ज की समस्या भी उन्हें अपने बालकों को काम पर भेजने के लिये बाध्य करती है, तथा वे बालकों को घरेलू नौकर, कृषि मजदूर तथा रोजनदारी मजदूर के रूप में कार्य करने की अनुमति दे देते हैं। कभी–कभी बन्धन या इकरारनामे के कारण कुछ परिवार बालकों को भू–स्वामी या महाजनों के यहाँ कार्य पर लगा देते हैं।

यह एक ज्ञात तथ्य है कि पारिश्रमिक के रूप में बाल श्रमिकों का शोषण किया जाता है। बाल श्रमिकों पर पूर्व में हुये विभिन्न अध्ययनों से यह स्पष्ट है कि लघु औद्योगिक इकाइयों, असंगठित क्षेत्र के अन्य उधोगों एवं कृषि कार्यो में बाल श्रमिकों की अधिक उपलब्धता के कारण उन्हें बहुत कम मजदूरी दी जाती है। बाल श्रमिकों पर खराब एवं असुरक्षित कार्य–दशाओं के कारण पड़ने वाले प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से समाज पर भी बुरा प्रभाव डालते हैं। कृषि क्षेत्र में बाल श्रमिकों को बहुत से कठिन तथा खतरनाक कार्यो को करना पड़ता है। निश्चित शारीरिक प्रयास एवं ज्ञान के अभाव में फर्टिलाइजर तथा रसायनिक उत्पाद उद्योगों में काम करने से उनके स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। निर्माण कार्यो में भी बालकों से उनकी आयु एवं कार्यक्षमता से अधिक कार्य लिया जाता है जिसके कारण वे विभिन्न दुर्घटनाओं का शिकार होते रहते हैं। पत्थर की खदानों में कार्य करने वाले मजदूर पत्थरों की कटाई के समय उत्पन्न धूल के सांस के साथ फेफड़ों में घुस कर जम जाने से सांस की अनेक बीमारियाँ जैसे खाँसी, दमा, टी0बी0 आदि रोग से ग्रसित हो जाते हैं। बच्चों में इस प्रकार की बीमारियाँ जल्दी घर कर जाती है। इसके कई कारण हैं उदाहरणार्थ– बालकों के अंगों का कोमल होना, रोग से प्रतिरक्षण की क्षमता कम

होना, पौष्टिक आहार की कमी आदि। मशीनों से सम्बन्धित कार्यो में भी प्रशिक्षण तथा अनुभव की कमी के कारण औजारों के प्रयोग, मशीनों के प्रयोग, बिजली के असुरक्षित प्रयोग, हाथ के दस्तानों की कमी, चश्मों एवं अन्य सुरक्षा उपकरणों के अभाव में प्रायः दुर्घटनायें होने का भय बना रहता है। खराब रोशनी और हवादार रोशनदारों का अभाव दुर्घटनाओं एवं बीमारियों का मुख्य कारण होता है।

वी0वी0 गिरि[1] ने उचित ही लिखा है कि बाल श्रमिक शब्द की व्याख्या सामान्यतः दो प्रकार से की जाती है, एक–आर्थिक व्यवसाय के रूप में और दूसरी सामाजिक बुराई के रूप में। प्रथम सन्दर्भ में बाल श्रमिक आर्थिक क्षेत्र में लाभप्रद रोजगार को व्यक्त करता है क्योंकि इससे परिवार की आय में वृद्धि होती है। दूसरे सन्दर्भ में बाल श्रमिक उन बुराइयों या शोषण की अभिव्यक्ति है जो कि बालकों को रोजगार में लगाने के कारण पनपते हैं। आधुनिक समय में बाल श्रम शब्द सामाजिक बुराइयों को ही बताता है। बाल श्रम का प्रयोग सामान्यतः बुरा नहीं है, परन्तु जिन परिस्थितियों एवं जिन शर्तों पर इन्हें कार्य में लगाया जाता है वह बुरा है। इस सम्बन्ध में यह कहावत ठीक जान पड़ती है : "बचपन में काम करना सामाजिक अच्छाई है और राष्ट्रीय हित में है लेकिन बाल श्रम एक सामाजिक बुराई और राष्ट्रीय अपव्यय भी है।" सामाजिक अच्छाई अथवा बुराई से आशय यह है कि जब तक किसी भी वस्तु का सदुपयोग होता है, वह सामाजिक हित कहलाती है। परन्तु जब उनका दुरूपयोग होने लगता है तब वह सामाजिक बुराई का कारण बन जाती है। समाज के लिये यह अच्छी बात है कि समाज में कोई व्यक्ति बेकार न बैठे, सभी व्यक्ति कुछ न कुछ कार्य करें। बच्चे भी कार्य करें यह सामाजिक हित की बात है और इससे राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है। परन्तु बाल श्रमिकों को काम

---

[1] V.V. Giri. : Labour Problems in Indian Industries.

पर लगाकर जिस रूप में उनका शोषण किया जाता है, व्यक्तित्व के विकास के लिये आवश्यक सुविधाओं से उन्हें दूर रखा जाता है और जिस रूप मे उनके नैतिक पतन का मार्ग प्रशस्त किया जाता है वह वास्तव में एक भयंकर सामाजिक बुराई है। यदि बच्चों की कोमलता को निर्दयता से कुचला जाये, उनकी महात्वाकांक्षाओं का गला घोंट दिया जाये तो हम उससे औद्योगिक समृद्धि की आशा नहीं कर सकते। बच्चों के श्रम से उनके स्वास्थ्य पर कुप्रभाव पड़ता है। बच्चों के इस प्रकार के काम करने से परिवार के सामान्य जीवन में बाधा पहुँचती है व सामाजिक नियन्त्रण टूटने लगता है जो वर्तमान सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखने के लिये आवश्यक है। बच्चों को उचित शिक्षा नहीं मिल पाती और उनका बौद्धिक विकास रूक जाता है। इस प्रकार अन्तिम रूप से देखने पर बच्चे नागरिकता के अधिकारों और कर्तव्यों में अत्यधिक लाभदायकपूर्ण ढंग से भाग नहीं ले पाते हैं।

श्रम बाजार में बच्चों की सहभागिता विद्यालयों एवं शिक्षा के तीव्र विकास में भी बाधक है। वास्तव में निर्धन परिवार के बच्चों को वैसी शिक्षा सुविधायें नहीं मिल पाती हैं जैसी सुविधायें समृद्ध परिवार के बच्चों को मिलती हैं। फिर भी यदि शैक्षिक सुविधायें उपलब्ध भी हों तो भी निर्धन बच्चें उसका पर्याप्त लाभ नहीं उठा पाते क्योंकि उनके माता–पिता स्कूलों की अन्य प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष लागत को उठाने में अक्षम होते हैं। इस प्रकार शिक्षा के अभाव में बालक कुशल नौकरियों एवं उच्च आय प्राप्त करने के अवसरों से स्थाई रूप से वंचित हो जाते हैं। बढ़ती हुई जनसंख्या को अच्छी विद्यालयी एवं प्रशिक्षण सुविधायें प्रदान करने से समाज को कुशल श्रम उपलब्ध होगा जो श्रम बाजार के साथ ही साथ समाज के स्तर को भी ऊँचा उठाकर विकास के मार्ग पर अग्रसर करेगा।

बाल श्रमिकों का अर्थव्यवस्था में योगदान :

किसी भी राष्ट्र के विकास में वहाँ की मानवीय सम्पदा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान होता है। कृषि एवं औद्योगिक दोनो ही अर्थव्यवस्थाओं में श्रम शक्ति के रूप में प्रयोग की जाने वाली मानवीय सम्पदा का योगदान उल्लेखनीय है। बाल श्रम भी उसी मानवीय सम्पदा का एक अंश है। एक ओर तो बाल श्रम एक सामाजिक बुराई है क्योंकि इससे किसी भी राष्ट्र की भावी पीढ़ी का जीवन अन्धकारपूर्ण हो सकता है। बालकों के सामाजिक, सांस्कृतिक, शारीरिक एवं मानसिक विकास से ही राष्ट्र विकास के पथ पर अग्रसर हो सकता है। दूसरी ओर बाल श्रमिकों के द्वारा किये जाने वाले कार्य राष्ट्रीय आय में वृद्धि करते हैं जो एक सामाजिक अच्छाई है तथा राष्ट्रीय हित में है।

घरेलू एवं लघु उद्योगों में बाल श्रमिकों द्वारा किये जाने वाले उत्पादक कार्यो का कुल उत्पादन में बहुत अधिक योगदान होता है। सभी प्रकार के कृषि उत्पादन कार्यो में अनेक ऐसे कार्य होते हैं जो बालकों द्वारा ही संचालित किये जाते हैं। इसी प्रकार के अन्य कार्यो जैसे मछली पालन, दुग्ध उत्पादन, काश्तकारी आदि में भी अनेक कार्य सिर्फ बच्चों द्वारा ही संचालित किये जाते हैं। जानवरों को चराने एवं उनकी देखभाल करने, फसलों की देखभाल करने का कार्य भी प्रायः बालकों के द्वारा ही किया जाता है। शिल्पकारी एवं दस्तकारी कार्यो में बालकों का सहयोग अत्यन्त आवश्यक होता है। इन समस्त कार्यो में संलग्न बाल श्रमिक न केवल परिवार की आय बल्कि सेवायोजकों एवं राष्ट्र की आय में भी वृद्धि करते हैं।

घरेलू एवं लघु उद्योगों में प्रायः संसाधनों की कमी दृष्टिगत होती है। इन उद्योगों में बाल श्रमिक मुख्य मानवीय संसाधन के रूप में कार्य करते है तथा

कुछ उद्योग तो इन बाल श्रमिकों पर ही निर्भर है। उदाहरण के लिये कृषि कार्यो, बीड़ी उद्योगों, कढ़ाई उद्योगों तथा फिरोजाबाद के चूड़ी उद्योग बड़ी संख्या में बाल श्रमिकों द्वारा ही संचालित है। इन लघु औद्योगिक इकाइयों में बच्चे नियमित कार्यशील सदस्यों की तरह कार्य कर रहे है। ये समस्त, उद्योग राष्ट्र की आय में एक बहुत बड़ा योगदान देते है। निश्चित रूप से बाल श्रमिकों का भी इस राष्ट्रीय आय में एक बड़ा हिस्सा होता है।

कृषि एवं औद्योगिक इकाइयों के अतिरिक्त बाल श्रमिकों की घरेलू कार्यो में सहभागिता भी सर्वाधिक है। प्रत्येक प्रकार के समाज में घरेलू कार्यो जैसे घर की सफाई, खाना पकाने, बच्चों की देखभाल करने जैसे कार्य प्रायः बालकों द्वारा ही किये जाते है। प्रत्यक्ष रूप से देखने पर तो इन बाल श्रमिकों का योगदान स्पष्ट नहीं होता है परन्तु अप्रत्यक्ष रूप से कार्य करने वाले ये बालक न सिर्फ परिवारों को सामाजिक एवं आर्थिक सहयोग प्रदान करते है बल्कि राष्ट्र की अर्थव्यवस्था में भी अपना अमूल्य योगदान देते हैं।

बाल श्रम की वर्तमान स्थितिः

बच्चे किसी भी समाज के लिये न केवल खिलते हुये पुष्प के समान हैं बल्कि राष्ट्र के निर्माता भी हैं। अतः कोई भी समुदाय, समाज अथवा देश इन खिलते हुये पुष्पों की अनदेखी नहीं कर सकता है। यदि वह ऐसा करता है तो वह खुद अपनी कब्र खोद रहा है और भावी पीढ़ी के भविष्य को विस्तृत रूप से नष्ट कर रहा है।

बाल श्रम की समस्या केवल आधुनिक समाज की समस्या ही नहीं है बल्कि यह समस्या मानव सभ्यता के विकास के समय से है। जैसे–जैसे समय

व्यतीत होता गया इस समस्या के उत्तरदायी कारणों में भी निरन्तर वृद्धि होती गई। तकनीकी एवं औधोगिक क्रान्ति के साथ लाइफ स्टाइल में परिवर्तन हुये जिसने इस सम्पूर्ण समस्या में और अधिक वृद्धि की। वास्तव में यह समस्या इतनी अधिक व्यापक हो गई कि यह किसी विशेष प्रकार की अर्थव्यवस्था की विशेषता नहीं रह गई बल्कि सम्पूर्ण विश्व की समस्या बन गई। विश्व के अति विकसित देशों में भी यह समस्या अत्यधिक बुरी दशाओं के साथ विद्यमान है। यद्यपि असंगठित क्षेत्र के उद्योग एवं व्यवसायों में यह समस्या अधिक गम्भीर है।

राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में बालश्रम की स्थिति :

बाल श्रमिकों की संख्या से सम्बन्धित सांख्यिकीय आँकड़े अत्यन्त सीमित मात्रा में उपलब्ध हैं। हमारे देश की एक महत्वपूर्ण जनांककीय विशेषता यहाँ की पर्याप्त युवा जनसंख्या है। 1951 की जनगणना के अनुसार देश में 14 वर्ष से कम आयु के बालकों की संख्या 134 मिलियन थी जो कि कुल जनसंख्या का 37.5 प्रतिशत था। 1961 में यह संख्या बढ़कर 180 मिलियन हो गई जो कि कुल जनसंख्या का 41.02 प्रतिशत था। इसमें से 14.5 मिलियन बाल श्रमिक थे जिसमें से 93 प्रतिशत ग्रामीण एवं 7 प्रतिशत शहरी क्षेत्रों से सम्बन्धित थे।[1] 1971 की जनगणना के अनुसार 14 वर्ष से कम आयु के बालकों की संख्या 230 मिलियन थी जो कि कुल जनसंख्या का 42.01 प्रतिशत था जिनमें से 10.1 मिलियन बालक बाल श्रमिकों के रूप में विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत थे। 1981 की जनगणना के अनुसार देश की कुल जनसंख्या का 39 प्रतिशत भाग बालकों का था जिनमें से लगभग 88 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करते थे जबकि केवल 12 प्रतिशत शहरी क्षेत्रों में

---

[1] Malivika Patiaaik – Child Labour in India – Size and Occupational Distribution, Indian Journal of Public Administration, Vol XXV, No. 3, July – Sept. 1979, P-2.

निवास करते थे। 1981 की जनगणना के अनुसार बाल श्रमिकों की कुल संख्या 14.5 मिलियन थी जो कि कुल कार्यशील जनसंख्या का 5.5 प्रतिशत था।[1]

1991 की जनगणना के अनुसार भारत में बाल श्रमिकों की संख्या 112.8 लाख थी जिनमें से 90 लाख बाल श्रमिक मुख्य श्रमिक तथा 20.8 लाख बाल श्रमिक आंशिक रूप में कार्यरत थे। यह संख्या भारत की कुल जनसंख्या का 1.34 प्रतिशत तथा कुल श्रमशक्ति का 3.64 प्रतिशत है। इसके अतिरिक्त ऐसे बालकों जो किसी भी प्रकार की शिक्षा प्राप्त नहीं कर रहे हैं कि संख्या लगभग 10 करोड़ थी।

भारत की लगभग 37 प्रतिशत जनसंख्या पन्द्रह वर्ष से कम आयु के लोगों की है अर्थात् प्रत्येक पाँच में से दो लोग 15 वर्ष से कम उम्र के है। 1991 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या में 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों की संख्या 29.7 करोड़ थी। इनमें से 20.3 करोड़ बच्चे पाँच से चौदह वर्ष की आयु के थे इनमें से 11.2 करोड़ बच्चे औपचारिक शिक्षा वाले विद्यालयों में दाखिला लिये हुये थे और 70 लाख बच्चों को अनौपचारिक शिक्षा मिलती थी किन्तु लगभग 10 करोड़ बच्चे ऐसे थे जो शिक्षा व्यवस्था के दायरे से बाहर ही थे। भारत के अनुमानतः 77 प्रतिशत बच्चे गांवों में निवास करते है। एक अन्य अनुमान के अनुसार 9.94 करोड़ अर्थात् भारत के कुल बच्चों का लगभग 40 प्रतिशत हिस्सा ऐसी स्थितियों में जीवन यापन करता है जिन्हें जीवन के लिये खतरनाक माना जाता है। उनमें से 4.85 करोड़ अर्थात् लगभग आधे बच्चों की उम्र छह वर्ष से कम है।[2]

यूनीसेफ की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में बालक एवं बालिका बाल श्रमिकों (10–14 वर्ष) की संख्या विश्व में सर्वाधिक है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम

[1] Meena Galliara – Profile of an Indian Child, Social Welfare, Vol. XXXVI, No. 6, Sept. 1989, P – 33.
[2] Laxmidhar Mishra : Child Labour in India ; Deshkal Publication, Sep. 2000 P. – 38.

संगठन (ILO) की रिपोर्ट में यह कहा गया था कि वर्ष 1975 के दौरान भारत में महिला बाल श्रमिकों की संख्या विश्व के अन्य देशों की अपेक्षा सर्वाधिक है। इसके अतिरिक्त इस आयु वर्ग की कुल बालिकाओं की संख्या के प्रतिशत के रूप में भी यह विश्व में सर्वाधिक है। भारत में बड़ी संख्या में महिला बाल श्रमिकों की संख्या से यह स्पष्ट है कि भारत सामाजिक एवं आर्थिक रूप से विश्व का सर्वाधिक पिछड़ा राष्ट्र है।[1]

भारत में इस समय लगभग 6 करोड़ बाल श्रमिक हैं, जिनकी आयु पांच से चौदह वर्ष के मध्य है। ये बच्चे हथकरधा, होटल, रेस्टोरेण्ट, साइकिल, मोटर, मरम्मत, मछली पालन, जूता पालिश, चर्मकारी तथा इसी प्रकार के अन्य उद्योग धंधों में लगे हुये हैं। श्रम मंत्रालय के एक सर्वेक्षण में बताया गया है कि हर तीसरे परिवार में एक बाल श्रमिक होता है और पाँच से पन्द्रह वर्ष की आयु में हर चौथा बच्चा श्रमिक होता है। कुछ कारखानों में तो 90 प्रतिशत तक मजदूर बच्चे ही है। मेघालय की खानों तथा देश की माचिस फैक्ट्रियों में काम करने वाले 28 हजार बच्चे ऐसे हैं जिनकी आयु मुश्किल से पांच वर्ष है। दिल्ली के विभिन्न उद्योग–धन्धों में अत्यन्त दयनीय स्थिति में लगभग तीस हजार बाल श्रमिक कार्यरत है। अकेले मध्य प्रदेश के बीड़ी उद्योग में ही दो लाख से भी अधिक बाल श्रमिक लगे हुये हैं। भोपाल में 6 हजार से अधिक बच्चे होटलों, बीड़ी बनाने के कारखानों, लुहारी, चर्मकारी आदि में अत्यन्त अस्वास्थ्यकर वातावरण में कार्यरत हैं।

समस्या की गहराई और गम्भीरता का अनुमान तमिलनाडु राज्य के रामनाथपुरम जिले में स्थित शिवकाशी के दियासलाई व पटाखों के कारखानों में

---

[1] Meera Verma and Neetha Verma – 'Incidence of Female Child Labour in India' in Children at work Problems and Policy Options, B.R. Publication Corporation, Delhi, 1993, P – 106.

कार्य करने वाले बच्चों से लगाया जा सकता है। यहाँ 14 वर्ष से कम आयु के 40,000 बाल श्रमिक कार्यरत है। इनमें से 1/ 5 भाग 4 से 5 वर्ष की आयु के हैं। इन्हें संकरे और गन्दे, टीन शेडों में आतिशबाजी बनाने का काम प्रातः 6 बजे से 7 बजे तक करना पड़ता है! इनका कमजोर शरीर, मैले–कुचैले कपड़े, निस्तेज चेहरा इनकी करूण स्थित को व्यक्त करता है।

शिवकाशी के माचिस उद्योग पर डी0वी0पी0 राजा [1] द्वारा किये गये एक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि इस उद्योग में कार्यरत अधिकांश बाल श्रमिकों के माता–पिता वहीं के निवासी है और तीन पीढ़ियों से अधिक समय से है और खेतिहर मजदूर के तौर पर काम कर रहे जिनकी औसत मासिक आय 200 से 300 रू0 के मध्य है। बच्चों के माता–पिता की निर्धनता उनके बाल श्रमिक बनने का सबसे बड़ा कारण है। अधिकांश माता–पिता स्कूल जाने वाली उम्र वाले बच्चों को स्कूल भेजने की जगह काम पर भेजना पसन्द करते है। जिससे उनकी आमदनी में बच्चे भी कुछ योगदान कर सके। वहाँ के माता–पिता लड़कियों को परिवार पर बोझ मानते है और जबरन उनको काम पर भेजते है। अनेक माता–पिता थोड़ा भी कमाऊ काम देखते ही बच्चों को स्कूल भेजने की जगह उसमें लगा देते है। अध्ययन में पाया गया कि बाल श्रमिकों का एक–तिहाई भाग 12 से 14 आयु वर्ष के है जबकि लगभग इतना ही हिस्सा 15 और उससे अधिक आयु के बच्चों का है।

अध्ययन में पाया गया कि अधिकांश बच्चों को काम का पहले से कोई अनुभव नहीं होता और वे सीधे दियासलाई उद्योग में आ जाते है। जिन बच्चो को पहले से अनुभव होता है वे भी, उनका कार्य भी मुख्यतः तीलियों को छांटने और सजाने का ही रहता है। चूँकि ये बच्चे तेजी से काम करते है और उनकी नाजुक

---

[1] D.N.P. Raja : Research study on child labour in Match Industries in Shivakashi, 1993

उगलियाँ तेजी से चलती है इसलिये वे बहुत कम गलतियां करते है। ऐसा करने के पीछे उनका तर्क होता है कि बाल श्रम (बंदी और नियमन) कानून के भाग–'ब' के तहत दियासलाई कारखाने में बाल श्रमिक रखने की मनाही है। इन उद्योगों में मजदूरी तय करने का तरीका बहुत ही अजीबोगरीब है। जैसे प्रति 150 दियासलाइयों की तीलियों को सजाने और छांटने की मजदूरी 70 पैसे है तो तीलियां भरने की मजदूरी 90 पैसे। एक सामान्य बाल श्रमिक प्रतिदिन 1000 से 1500 दियासलाई की डिब्बियाँ भर सकता है और इस प्रकार वह 6 से 9 रू0 प्रतिदिन कमा लेता है।

हैदराबाद विश्वविद्यालय के समाज विज्ञान केन्द्र की महिला अध्ययन कक्ष की डा0 रेखा पाण्डेय ने 1995–96 में श्रम मंत्रालय के वित्तीय सहयोग से 'आन्ध्र प्रदेश के बीड़ी उद्योग में बाल श्रम' विषय पर अध्ययन किया।[1]

अध्ययन में पाया गया कि आन्ध्र प्रदेश में देश के 8.5 प्रतिशत बाल श्रमिक है। लगभग 92 प्रतिशत बाल श्रमिक ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करते है। चूँकि ग्रामीण क्षेत्रों में वयस्क श्रमिकों की आय घटती–बढ़ती रहती है इसलिये जब माता–पिता को कम काम और कम मजदूरी मिलती है तब बच्चे परिवार की आमदनी में योगदान करने के लिये काम करने लगते है। सबसे अधिक बाल श्रमिक प्रदेश के तेलंगाना क्षेत्र के है। अध्ययन में पाया गया कि 86 प्रतिशत ग्रामीण बाल श्रमिक तथा 94 प्रतिशत ग्रामीण महिला श्रमिक निरक्षर है।

बीड़ी उद्योग में काम करने वाले अधिकांश श्रमिक बहुत ही बुरी स्थिति में काम करते है। अधिकांश नियोक्ता बीड़ी उद्योग से जुड़े विभिन्न प्रावधानों को लागू नहीं करते और राज्य का श्रम विभाग भी कानूनों को लागू करा पाने में

---

[1] Laxmidhar Mishra : Bharat Men Bal Mazdoor : 'Nazuk Bachpan, Muskil Zimedari ; Deshkal Publication, Sep. 2000, P. 70-71

अक्षम साबित हुआ है। बीड़ी के व्यवसाय में बीड़ी बनाना, उसके मूठ (पैकेट) बनाना तथा उन पर लेबल चिपकाने का काम शामिल है और इन सभी में कुछ विशेष प्रकार का कौशल चाहिये। चार वर्ष की आयु से ही बच्चे-बच्चियों से बीड़ी बनवाना शुरू कर दिया जाता है। अधिकांश बच्चे 5 से 11 वर्ष की आयु में तथा कुछ बच्चे 11 से 15 वर्ष की आयु में इस पेशे में आते है। बीड़ी उत्पादन की प्रक्रिया और यह पूरा उद्योग इस तरह बना हुआ है। कि इसके हर चरण में मजदूरों के शोषण की गुंजाइश रहती है। 1000 बीड़ियाँ बनाने के लिये 800 ग्राम तेंदूपत्ता और 350 ग्राम तम्बाकू की आवश्यकता होती है। अक्सर इन दोनो वस्तुओं की कमी रहती है और यदि माल उपलब्ध भी हो तो उसके घटिया होने का खतरा रहता है। ऐसे में उससे तैयार बीड़ी खराब हो जाती है। ऐसी बीड़ी जब न खरीदी जाये तो उसकी मजदूरी इन श्रमिकों को नहीं दी जाती है। इस बीड़ी की मजदूरी निर्माता उसके पासबुक में दर्ज नहीं करते। कच्चे माल की कमी, काम में घट-बढ़ या काम न मिलने की स्थिति में मजदूर स्थानीय सूदखोरों से बहुत ऊँची दरों पर कर्ज लेने को विवश होते है। यह कर्ज प्रायः ऐसा होता है कि इसे चुकाने में मजदूर और उसके बच्चे नियोक्ता या सूदखोर के बंधुआ बन जाते है। एक ही स्थिति में बैठकर घंटों काम करना, गन्दी जगह में बैठना और दिन रात तम्बाकू के सम्पर्क में रहने के कारण बाल श्रमिकों का स्वास्थ्य बुरी तरह प्रभावित होता है।

अक्टूबर 1988 में यूनीसेफ के दक्षिण मध्य एशिया क्षेत्रीय कार्यालय नई दिल्ली के आर्थिक सहयोग से 'कार्पेट वीभिंग इण्डस्ट्रीज इन जम्मू ऐंड कश्मीर'[1] पर किये गये एक अध्ययन में पाया गया कि कालीन उद्योग में काम करने वाले लोगों में 15 वर्ष से कम आयु के बाल श्रमिकों का हिस्सा लगभग 25 प्रतिशत है।

---

[1] Sudesh Nangia : 'Carpet Weaving Industry in Jammu and Kashmir', 1988.

इसमें आठ वर्ष से कम आयु के बच्चों की संख्या कुछ श्रमिकों का एक तिहाई है। बाल श्रमिकों में एक तिहाई हिस्सा लड़कियों का पाया गया। यहाँ पर बच्चों को अधिक आसानी से काम मिल जाता है क्योंकि वे बड़ों की तुलना में इस कौशल को जल्दी सीख लेते है, ज्यादा तेज काम करते है तथा करघे पर बैठने के लिये उन्हें कम स्थान की आवश्यकता होती है। अध्ययन में पाया गया कि लगभग एक चौथाई बाल श्रमिकों को काम के बदले कोई मजदूरी नहीं दी जाती है। उन्हें काम सीखने के लिये रखा जाता है। इस उद्योग में काम करने वाले अधिकांश बच्चे 8 से 12 आयु वर्ष के है जिनमें से लगभग 40 प्रतिशत बाल श्रमिक पूरी तरह से निरक्षर है।

अध्ययन में पाया गया कि अधिकांश बाल श्रमिकों को छः माह से एक वर्ष तक कालीन की बुनाई, गांठ डालने, फंदा लगाने और कालीन को नरम बनाने का प्रशिक्षण दिया जाता है तथा प्रशिक्षण समाप्त होने के बाद जब बाल मजदूर गांठ डालने में कुशल हो जाता है तभी उसे मजदूरी देना प्रारम्भ किया जाता है। 12 से 13 वर्ष के बाल श्रमिकों को वयस्क मजदूरों की तरह 8 से 10 घण्टे प्रतिदिन तक काम करना होता है। यहाँ के कालीन उद्योग में काम करने वाले बाल श्रमिक विभिन्न प्रकार की बीमारियों से ग्रस्त रहते है। आँखों की कई तरह की समस्यायें, श्वांस सम्बन्धी समस्यायें, बदन दर्द, सिर दर्द, सीने और फेफड़े की कई तरह की बीमारियाँ आम होती है। इसके अतिरिक्त एक ही स्थिति में घण्टों बैठकर काम करने से भूख नहीं लगती है तथा सुस्ती आती है। उंगलियों से धागों को निरन्तर ऊपर नीचे करते रहने के कारण उंगलियों में खरोंच और भद्दापन आता है। काम का दवाब, पेशे से जुड़ी बीमारियों की मार के साथ ही पर्याप्त पोषक आहार न मिलने के कारण इन श्रमिकों के काम करने की उम्र भी बहुत कम समय में ही समाप्त हो जाती है। जिस आयु में बाकी लोग वयस्क दिखते हैं, ऐसे श्रमिक बूढ़े

दिखने लगते हैं और इसके चलते उनके छोटे–छोटे बच्चों को काम में प्रवेश करना पड़ता है। इसी प्रकार पीढ़ी दर पीढ़ी बर्बादी का यह चक्र चलता रहता है।

सूरत शहर के हीरा उद्योग में भी बड़ी संख्या में बाल श्रमिक पाये जाते हैं। ये बाल श्रमिक मुख्यतः सौराष्ट्र और उत्तर गुजरात से आये होते हैं। इस उद्योग में बाल श्रमिक अपने मन से या माता–पिता की प्रेरणा से आते हैं। माता–पिता के साथ या अकेले पलायन करके सूरत पहुँचने वाले बच्चों के लिये कम उम्र में ही काम शुरू करने का एक आकर्षण हीरा उद्योग में मिलने वाली अच्छी मजदूरी भी है। अधिकतर बाल श्रमिक 12 से 14 आयु वर्ष के होते है। जिन्हें प्रतिदिन 12 घण्टे तक ऐसे स्थानों पर काम करना पड़ता है जहाँ पर्याप्त रोशनी और शुद्ध हवा का अभाव होता है। इन बाल श्रमिकों को कार्य के दौरान प्रतिदिन दो घण्टे का अवकाश दिया जाता है। प्रतिमाह औसतन 600 से 1000 रू0 तक आय अर्जित करने वाले बच्चे प्रायः कई प्रकार की बीमारियों से ग्रस्त रहते हैं। इन उद्योगों में कार्यरत अधिकांश बाल श्रमिक या तो निरक्षर है या प्राथमिक शिक्षा प्राप्त।

जयपुर शहर का जवाहरात निर्यात् उद्योग सम्पूर्ण विश्व में प्रसिद्ध है। यहाँ पर देश का 95 प्रतिशत रंगीन जवाहरात और पत्थरों का उत्पादन और प्रसंस्करण होता है। 1979 में प्रकाशित एक रिपोर्ट[1] के अनुसार यहाँ पर लगभग 10,000 बाल श्रमिक काम करते हैं। बाल श्रमिक मुख्यतः कम कीमती पत्थरों वाले कामों में है और वे उन्हें जोड़ने, नया आकार देने और पालिश चढ़ाने का काम करते हैं। टाटा इंस्टीट्यूट आफ सोशल साइंसेज, मुम्बई की डा0 ऊषा नायडू ने 1989 में इस उद्योग में कार्यरत बाल श्रमिकों की संख्या 15000 बताई जबकि

[1] Gurupad Swami Committee – A Report of the committee on child labour, 1979.

इंस्टीट्यूट आफ डेवलपमेन्ट स्टडीज जयपुर के अनुसर 1990 तक यहां पर लगभग 20,000 बाल श्रमिक कार्यरत थे। इस उद्योग की अधिकांश इकाइयाँ मकान के अन्दर के बरामदों या सड़कों के किनारे स्थित बरामदों में स्थित हैं जहाँ पर न तो पीने के स्वच्छ पानी की व्यवस्था है न ही शौचालय। दिन की रोशनी ही अधिकांश इकाइयों में काम का समय तय करती है। बाल श्रमिकों को प्रतिदिन लगभग 8 से 10 घण्टों तक काम करना पड़ता है। तेजी से नाचती हुई चक्की के सहारे कीमती पत्थर को काटने, घिसने और चमकाने के काम में कई बार उंगलियाँ कट जाती है। या घिस जाती है। पत्थरों को रसायन युक्त पानी में डुबोकर रखा जाता है तथा घाव वाली उंगलियों को बार–बार उसमें डुबोना पड़ता है। इससे घाव और बिगड़ जाता है। इसके अलावा एक ही स्थिति में आठ से दस घण्टे बैठकर काम करते रहने के कारण पीठ एवं कमर में दर्द की समस्या हो जाती है। अधिकांश बाल श्रमिक आंखों की कम रोशनी से ग्रस्त रहते हैं।

बाल श्रमिकों की एक भारी संख्या देश के विभिन्न अनियन्त्रित उद्योगों में लगी हुई है। उद्योगों में चमड़ा उद्योग, छापाखाना और चूड़ी उद्योग आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। चूँकि ये उद्योग लघु उद्योगों की श्रेणी में आते है इसलिये ये कारखाना अधिनियम के अन्तर्गत नहीं आते। यही कारण है कि हमारे देश में अनेक अनियन्त्रित उद्योगों में बाल श्रमिकों का बुरी तरह शोषण होता है।

श्रम ब्यूरों ने सन् 1954 में घरेलू उद्योगों में बाल श्रम की मात्रा का अनुमान लगाने के उद्देश्य से राज्य सरकारों से सूचनायें एकत्रित की थीं जिसका महत्वपूर्ण तथ्य इस प्रकार है (I) आसाम में बीड़ी व कपड़ा बुनाई उद्योग में बाल श्रम का उपयोग होता है। (II) बाल श्रम का अत्यधिक उपयोग बिहार में बीड़ी, चमड़ा, अभ्रक, तथा कांच उद्योगों में होता है। (III) केरल राज्य के ट्रावनकोर

–कोचीन क्षेत्र में 17000 से अधिक बाल श्रमिक केवल कॉयर (Coir) उद्योग में लगे हुये हैं। (IV) बंगाल के वस्त्र बुनाई उद्योग में लगभग 50 हजार बाल श्रमिक नियुक्त हैं। (V) उत्तर प्रदेश में बाल श्रमिक खिलौना, बीड़ी, कांच, कपड़ा बुनाई तथा चमड़ा उद्योग में लगे हैं।

वी0वी0 गिरि राष्ट्रीय श्रम संस्थान नोयडा के द्वारा 'गृह आधारित उद्योगों में बाल श्रम' विषय पर वर्ष 1999–2000 के दौरान कराये गये एक अध्ययन से यह महत्वपूर्ण तथ्य उभर कर सामने आया है कि जोखिमपूर्ण व्यवसायों में उत्पादन प्रक्रिया को सेवायोजकों द्वारा इस प्रकार वर्गीकृत किया जाता है। कि उत्पादन की कुछ विशिष्ट अवस्थाओं में बच्चों का उपयोग किया जा सके। यह तथ्य जयपुर के रत्न पालिश उद्योग और फिरोजागाद के कांच चूड़ी उद्योग में खासतौर पर देखने को मिला जहाँ महिलाओं और बच्चों को केवल कुछ प्रक्रियाओं में ही नियोजित किया गया था। इसी तरह की स्थिति शिवकाशी के माचिस उद्योग में भी देखी गई जहाँ बाल श्रम को उद्योग की मांग बनाया गया है और उद्योग का ढांचा ही ऐसा रखा गया है कि बच्चों को नियोजित किया जा सके। उद्योग का सीमित स्वरूप और इसके उत्पादन की विकेन्द्रित प्रकृति दोनो ने मिलकर इस उद्योग में सस्ते बाल श्रम को फलने–फूलने का मौका दिया है।[1]

इन व्यवसायों में बाल श्रम की मौजूदगी उनकी मांग के फलस्वरूप है, इस विचार की जाँच उद्योग के संगठनात्मक ढाँचे का अध्ययन करके की जा सकती है। तिरूपुर (तमिलनाडु) के निटवियर उद्योग के ढाँचे का उदाहरण लें। सबसे ऊपर निर्यातक है, बीच में उपठेकेदार है और सबसे नीचे सहायक उत्पादक है, उपठेकेदारों का वर्चस्व संख्या और कार्य की मात्रा दोनो रूपों में है। इस प्रकार

---

[1] Ruma Ghosh, Nikhil Raj, Helen R. Seker : ' Child labour in small scale Industries" A study of V.V. Giri National labour organisation, Noida. P.2 and 3.

यह वर्ग निरन्तर प्रयास करता है कि विभिन्न प्रक्रियाओं की लागत कम से कम हो ताकि उपठेकेदारी प्रथा चलती रहे। इसका सबसे अधिक असर सबसे निचले स्तर के उत्पादक को दी जाने वाली मजदूरी पर पड़ता है। ट्रेड यूनियनों की सीमित भूमिका का लाभ यह होता है कि लगभग प्रत्येक तीन वर्षों के अन्तराल में श्रमिकों की मजदूरी में वृद्धि की जाती है। किन्तु यहां प्रश्न यह उठता है कि यदि मजदूरी में प्रत्येक तीन वर्ष में संशोधन किया ही जाना है तो बच्चों को नियोजित करने की क्या आवश्यकता है ? इस प्रश्न का उत्तर इस वास्तविकता में निहित है कि ये संशोधन मुख्यतः वयस्क श्रमिकों की मजदूरी में किये जाते है। अतः नियोक्ता वयस्क श्रमिकों की तुलना में बच्चों को नियोजित करना अधिक लाभदायक समझता है क्योंकि वयस्क श्रमिकों को दी जाने वाली मजदूरी में प्रत्येक तीन वर्ष के अन्तराल पर संशोधन करना होता है।[1]

इसके अतिरिक्त फिरोजाबाद के कांच उद्योग, मिर्जापुर के गलीचा उद्योग, मुरादाबाद के पीतल उद्योग, अलीगढ़ के ताला उद्योग, मंदसौर के स्लेट उद्योग आदि में भी बाल श्रमिकों की दयनीय स्थिति आसानी से देखी जा सकती है। औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप कारखानों और उद्योगों का विस्तार हुआ। प्रारम्भ में इन कारखानों में बाल श्रमिकों की संख्या बहुत अधिक थी, परन्तु अधिनियमों के नियन्त्रण के कारण इनकी संख्या में कुछ कमी आई है।

खनिज उद्योगों में भी पर्याप्त मात्रा में बाल श्रमिकों की उपस्थिति दर्ज की गई है। वर्ष 1952 के खान अधिनियम के पश्चात इस संख्या में अवश्य कुछ कमी दर्ज की गई है परन्तु फिर भी यह संख्या अभी भी काफी अधिक है। यद्यपि

---

[1] Ruma Ghosh, Nikhil Raj, Helen R. Seker : ' Child labour in small scale Industries" A study of V.V. Giri National labour organisation, Noida. P.2 and 3.

इस अधिनियम के प्रावधान के अनुसार 15 वर्ष से कम आयु के बालकों के खानों में कार्य करने पर रोक लगा दी गई है परन्तु फिर भी यह अनुभव किया गया है कि बिहार, तमिलनाडु और राजपूताने में 15 वर्ष से कम आयु के बालक खानों में काम कर रहे है। यद्यपि अब 15 वर्ष से अधिक आयु के बच्चे ही खदानों में काम कर सकते हैं परन्तु श्रम जाँच समिति के अनुसार अधिनियम के प्रावधानों की अवहेलना बड़े पैमाने पर की जाती है। भारतीय बागानों में भी बड़ी संख्या में बाल श्रमिक काम करते है। 1948 के बागान अधिनियम के अनुसार बागानों के काम में 12 वर्ष से कम आयु के बालक कार्य पर नहीं लगाये जा सकते हैं, परन्तु ऐसे बच्चों की संख्या कम नहीं है। झूठे प्रमाण पत्रों के आधार पर अभी भी 8 से 9 वर्ष के बच्चे काम करते हैं। आंकड़ों से पता चलता है कि कुल कर्मचारियों का बंगाल में 25.7 प्रतिशत, दार्जिलिंग में 12 प्रतिशत, असम में 14.4 प्रतिशत, सुरमा की घाटी में 16 प्रतिशत तथा दक्षिण भारत में चाय व काफी के बागानों में 11 प्रतिशत बालक कार्य करते हैं।[1]

भारतवर्ष में कारखानों का प्रसार औद्योगिक क्रान्ति के बाद शुरू हुआ और तभी से बालकों को कारखानों में बाल श्रमिकों की संख्या बहुत अधिक थी परन्तु अधिनियमों के नियन्त्रण के कारण इनकी संख्या में निरन्तर कमी होती जा रही है। तालिका संख्या 1.1 भारतीय कारखानों में कार्यरत बाल श्रमिकों की संख्या तथा सम्पूर्ण श्रम शक्ति में बाल श्रमिकों को प्रतिशत को व्यक्त करती है।

[1] Child Labour in India, Ministry of Labour Bureau, 1954, P-8.0-72

तालिका संख्या 1.1
कारखानों में बाल श्रम

वर्ष	बाल श्रमिकों की संख्या	सम्पूर्ण श्रमशक्ति में बाल श्रमिकों का प्रतिशत
1950	7.764	0.31
1955	4.975	0.10
1960	3.220	0.10
1970	2.800	0.09
1980	1.800	0.07
1990	3000	0.08

तालिका को देखने से स्पष्ट होता है कि कारखानों में बाल श्रमिकों की काफी बड़ी संख्या कार्यरत है। श्रम ब्यूरो के एक सर्वेक्षण में कहा गया है कि ''कारखाना अधिनियम के अन्तर्गत प्राप्त सूचना द्वारा बाल श्रमिकों का विवरण सत्य होने में संदेह है। कारखाने के निरीक्षकों का यह अनुभव है कि जैसी ही वे निरीक्षण के लिये पहुँचते है वैसे ही बहुत से बाल श्रमिक कारखानों से हट जाते हैं। इनमें बहुधा न्यूनतम आयु से कम के मजदूर होते हैं।'' तात्पर्य यह है कि कारखाना अधिनियम में न्यूनतम आयु 14 वर्ष है परन्तु उससे कम आयु के बालकों को भी कार्य पर रखा जाता है और उनका कोई विवरण कागजों पर नहीं होता। बहुत से बालकों को डाक्टरी झूठे–प्रमाण पत्रों के द्वारा अधिक उम्र का दिखाकर इन्हें किशोर श्रेणी में दिखा दिया जाता है।

वर्तमान शताब्दी के प्रारम्भिक चरण में कुल औद्योगिक श्रमिकों में बाल श्रम का प्रतिशत 6 था जो 1973 में घटकर 0.8 रह गया। बाल श्रमिकों की संख्या सबसे अधिक तमिलनाडु में हे और फिर क्रमशः आसाम, महाराष्ट्र, गुजरात,

बंगाल व बिहार में है। बालकों को अधिक संख्या में काम में लगाने वाली औद्योगिक इकाइयां रासायनिक पदार्थ, पेय पदार्थ, तम्बाकू व खनिज उद्योग हैं।[1]

भारत में बड़ी संख्या में बाल श्रमिक कृषि कार्यों में भी संलग्न हैं जो कि अर्थव्यवस्था का सबसे बड़ा क्षेत्र है। कृषि कार्यों में बाल श्रमिकों का लगभग 80 प्रतिशत भाग कार्यरत है। ये बच्चे अपने माता–पिता के साथ खेतों में बुवाई, निराई, कटाई, फलों एवं फसलों को एकत्रित करने, फसलों की देखभाल करने जैसे कार्यों में संलग्न होते हैं। इनमें से अधिकतर बालक निर्धन भूमिहीन तथा सीमान्त कृषकों के परिवारों के होते हैं जो अपने बालकों को विद्यालय भेजने में असमर्थ होते हैं। भारत में बाल श्रम का एक पहलू यह भी है कि इनकी संख्या शहरों की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक है। ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 90 प्रतिशत बाल श्रमिक कृषि तथा इससे सम्बद्ध गतिविधियों में कार्यरत है। लगभग 85 प्रतिशत बाल श्रमिक कृषि, कृषि मजदूरी, पशुपालन, वानिकी तथा मत्स्य पालन जैसे व्यवसायों में लगे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में बाल श्रमिकों की स्थिति को देखने से ज्ञात होता है कि लगभग 90 प्रतिशत बाल श्रमिक कृषि एवं कृषि सम्बन्धी अन्य कार्यों में लगे है। तालिका संख्या 1.1 इस तथ्य की पुष्टि करती है।

[1] V.C. Sinha, Puspa Sinha : "Labour Economics" Mayur Paperbox Noida, 2004. P. 422

तालिका 1.2

ग्रामीण क्षेत्रों में बाल श्रमिकों की स्थिति

क्रम संख्या	व्यवसाय	प्रतिशत
1.	कृषक	35.93
2.	कृषि मजदूर	42.75
3.	पशुपालन, वानिकी, मत्स्य	6.30
4.	खान और पत्थर	0.24
5.	विनिर्माण प्रक्रिया	8.74
6.	सेवा, मरम्मत तथा भवन निर्माण कार्य	0.72
7.	वाणिज्य एवं व्यापार	2.19
8.	अन्य कार्य	3.13
	कुल	**100.00**

तालिका से स्पष्ट है कि लगभग 85 प्रतिशत ग्रामीण बाल श्रमिक एवं उससे सम्बन्धित कार्यों सें संलग्न हैं।

कृषि के अतिरिक्त बाल श्रमिक जिन अन्य कार्यो में संलग्न हैं वे निम्न हैं: कोयले एवं पत्थरों की खानों में काम करने वाले बाल श्रमिक 2.34 प्रतिशत, उत्पादन उद्योग 4.04 प्रतिशत, घरेलू लघु एवं कुटीर उद्योग 5.75 प्रतिशत, निर्माण कार्य 2.46 प्रतिशत, व्यापार 1.84 प्रतिशत, यातायात, भण्डारण एवं संचार कार्यो में 0.57 प्रतिशत तथा अन्य सेवाओं में 1.76 प्रतिशत बाल श्रमिक कार्यरत हैं।[1]

---

[1] Indra Sharma, Bipin Kumar and K.B. Padma Deo – 'Child Labour in India – An Anatomy, in Children at Work Problems and Policy Options, B.R. Publishing Corporation, Delhi, 1993, P – 17.

भिन्न–भिन्न राज्यों अथवा एक ही राज्य के ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में बाल श्रमिकों के रोजगार का भिन्न–भिन्न महत्व हैं। सम्पूर्ण भारत के बाल श्रमिकों की कुल संख्या में से 59.83 प्रतिशत पुरूष बाल श्रमिक ग्रामीण क्षेत्रों में पाये जाते हैं। सभी राज्यों में से ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले कुल पुरूष बाल श्रमिकों की संख्या पंजाब राज्य में सर्वाधिक है जो लगभग 83.36 प्रतिशत है। ग्रामीण पुरूष बाल श्रमिकों की संख्या दिल्ली में निम्नतम 5.87 प्रतिशत हैं। सम्पूर्ण भारत में शहरी क्षेत्रों में पुरूष बाल श्रमिकों की संख्या के मामले में दिल्ली प्रथम स्थान पर हैं जहाँ लगभग 80.12 प्रतिशत बाल श्रमिक हैं तथा निम्नतम हिमांचल प्रदेश में (1.12 प्रतिशत) है।[1]

सम्पूर्ण भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाली स्त्री बाल श्रमिकों की संख्या कुल श्रमिक संख्या का 31.31 प्रतिशत है। राज्यों के संदर्भ में यह संख्या हिमांचल प्रदेश में सर्वाधिक 58.04 प्रतिशत तथा चण्डीगढ़ में निम्नतम 1.23 प्रतिशत है। जबकि 2.26 प्रतिशत स्त्री बाल श्रमिक भारत में शहरी क्षेत्रों में निवास करती है। राज्यों के संदर्भ में यह संख्या चण्डीगढ़ में सर्वाधिक 17.77 प्रतिशत तथा हिमांचल प्रदेश में निम्नतम 0.53 प्रतिशत है।[2]

उत्तर प्रदेश में बाल श्रमिकों की वर्तमान स्थिति :

यदि हम उत्तर प्रदेश में बाल श्रमिकों की संख्या पर नजर डालें तो यह स्पष्ट होता है कि प्रदेश की कुल जनसंख्या अथवा कुल श्रमिक संख्या में इनका प्रतिशत काफी अधिक है। वर्ष 1971 में प्रदेश की कुल जनसंख्या

---

[1] K. Shiv Prasad and B. Ramachandran Yogi – Magnitude of Child Labour in India, Some Policy Prescriptions in Children at Work Problems and Policy Options, B.R. Publication Corporation, Delhi, 1993, P – 55.
[2] Ibid, P – 56.

8,83,41,144 वर्ष 1981 में 11,08,62,013 तथा वर्ष 1991 में 13,87,60,417 थी। इसमें बाल श्रमिकों की संख्या वर्ष 1971 में 13,26,726, वर्ष 1981 में 14,34,675 तथा वर्ष 1991 में 14,10,086 आंकी गई है। निश्चित तौर पर इस संख्या में निरन्तर वृद्धि होती रही है। प्रदेश के संदर्भ में बाल श्रमिकों की इतनी बड़ी संख्या निश्चित ही चौंकाने वाली हैं।

बाल श्रमिकों की वास्तविक संख्या निश्चित तौर पर स्पष्ट नहीं है, क्योंकि इसके विभिन्न आकार व स्रोत हैं। एक ओर कानून की दृष्टि से यह संख्या कम हो सकती है, किन्तु दूसरी ओर उदारवादी अभिमत के परिप्रेक्ष्य में, शिक्षा से विरत 14 वर्ष से कम आयु के सभी बच्चे सम्भावित श्रमिक हैं। इसके अतिरिक्त विभिन्न स्वैच्छिक संगठनों द्वारा भी इस समस्या को जिस तरह बढ़ा–चढ़ाकर प्रचारित किया गया है, वह बाल श्रमिकों की संख्या करोड़ों में दर्शाते हैं। इन सब मत–मतान्तरों के बावजूद यह स्पष्ट है कि प्रदेश में बाल श्रम की समस्या अत्यन्त गम्भीर है क्योंकि प्रदेश की सामाजिक संरचना के कारण गरीबी, अशिक्षा, जनसंख्या वृद्धि, बेरोजगारी जैसे कारक जो इस समस्या को बढ़ावा देते हैं, मौजूद हैं।

उत्तर प्रदेश के विभिन्न जनपदों में खतरनाक एवं गैर खतरनाक उद्योगो में कार्यरत बाल श्रमिकों के सन्दर्भ में कराये गये सर्वेक्षणों से यह तथ्य उभरकर आता है कि प्रदेश में बाल श्रम समस्या गम्भीर रूप से विद्यमान है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय के आदेश (1996) के बाद प्रदेश सरकार द्वारा खतरनाक और गैर–खतरनाक उद्योगों में कार्यरत बाल श्रमिकों पर कराये गये सर्वेक्षण रिपोर्ट को देखने से ज्ञात होता है कि प्रदेश के विभिन्न जनपदों में बड़ी संख्या में बाल श्रमिक कार्यरत है।

तालिका संख्या 1.3 उत्तर प्रदेश के विभिन्न जनपदों में कार्यरत बाल श्रमिकों की संख्या

संख्या	जनपद का नाम	1997		1998–99		1999–2000		2000–2001		2001–02		2002–03		2003–204	
		खतरनाक	गै0 ख0	खतरनाक	गै0 ख0	खतरनाक	गै0 ख0	खतरनाक	गै0 ख0	खतरनाक	गै0 ख0	खतरनाक	गै0 ख0	खतरनाक	गै0 ख0
1	मेरठ	32	456	491	82	25	00	00	26	74	76	07	22	07	103
2	बागपत	00	00	95	40	22	00	30	04	07	49	00	24	01	61
3	मुजफ्फरनगर	08	293	24	227	24	00	03	11	24	112	00	68	20	33
4	जे0पी0 नगर	00	00	88	219	91	02	90	00	92	00	04	10	08	30
5	रामपुर	06	64	147	341	39	00	00	00	10	33	01	06	178	36
6	बिजनौर	04	258	64	173	39	02	03	00	14	53	18	41	01	42
7	बरेली	00	409	50	201	00	59	08	13	00	213	00	148	00	49
8	बदाऊँ	00	109	08	203	01	21	00	52	00	63	00	33	00	27
9	पीलीभीत	00	97	26	201	00	26	00	25	00	103	00	88	00	75
10	प्रतापगढ़	06	129	457	11	11	00	00	00	00	04	00	02	00	46
11	ललितपुर	05	13	20	41	00	02	00	06	03	13	01	04	00	19
12	हाथरस	107	116	23	32	08	40	01	00	08	18	00	00	04	45
13	एटा	12	156	09	22	16	28	00	00	00	00	00	00	02	41
14	बस्ती	48	472	00	04	10	16	08	07	00	02	10	01	13	34
15	संतकबीरनगर	00	00	00	19	00	00	00	04	00	04	04	01	06	32
16	कुशीनगर	28	190	00	47	00	06	00	00	00	00	00	03	11	27
17	फैजाबाद	09	48	80	341	50	03	15	10	05	27	00	00	02	62
18	बाराबंकी	21	116	41	200	21	11	02	10	04	02	03	00	01	54

19	बलरामपुर	00	00	23	95	11	00	00	00	02	10	00	00	00	22
20	गाजियाबाद	41	441	14	129	13	00	00	00	12	82	03	20	24	41
21	बुलन्दशहर	88	444	33	398	156	00	00	00	00	00	03	08	06	06
22	वाराणसी	649	312	589	265	117	10	86	05	103	33	90	23	69	55
23	जौनपुर	211	158	294	65	18	06	22	04	125	35	24	22	56	22
24	लखनऊ	19	3114	64	219	35	28	21	321	50	368	11	101	38	139
25	फर्रूखाबाद	1677	249	00	00	00	112	00	00	00	10	00	00	01	12
		2881	7644	2530	3570	707	372	289	498	533	1310	179	625	448	1113

तालिका संख्या 1.3 में विभिन्न वर्षो के दौरान चिहिन्त बाल श्रमिकों की संख्या को व्यक्त किया गया है। तालिका के अनुसार प्रदेश के 25 जनपदों में वर्ष 1997 के दौरान खतरनाक उद्योगों में कार्यरत लगभग 2881 बाल श्रमिकों का चिन्हांकन किया गया जबकि गैर–खतरनाक उद्योगों में यह संख्या 7644 आंकी गई। वर्ष 1998–99 के दौरान खतरनाक उद्योगों में कार्यरत बाल श्रमिकों की संख्या 2530 तथा गैर खतरनाक उद्योगों में कार्यरत बाल श्रमिकों की संख्या 3570 बताई गई। वर्ष 1999–2000 के मध्य इन उद्योगों में कार्यरत बाल श्रमिकों की संख्या क्रमशः 707 तथा 372 बताई गई जबकि वर्ष 2000–2001 के दौरान यह संख्या 289 तथा 498 पाई गई। वर्ष 2001–2002 में विभिन्न जनपदों में खतरनाक उद्योगों में कार्यरत बाल श्रमिकों की संख्या 533 तथा गैर–खतरनाक उद्योगों में कार्यरत बाल श्रमिकों की संख्या 1310 आंकी गई। वर्ष 2002–2003 तथा 2003–04 में यह संख्या क्रमशः 179 और 625 तथा 448 और 1113 पाई गई। इन विभिन्न जनपदों में से जिन जनपदों में बाल श्रमिकों की संख्या सर्वाधिक पाई गई उनमें गाजियाबाद, बुलन्दशहर, वाराणसी, जौनपुर तथा फर्रूखाबाद है।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र उत्तर प्रदेश का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है परन्तु आर्थिक एवं सामाजिक रूप से पिछड़ा हुआ होने के कारण यहाँ का पर्याप्त विकास नहीं हो पाया। सम्पूर्ण क्षेत्र को सात जनपदों में विभक्त किया गया है। इन विभिन्न जनपदों में कृषि व्यवसाय ही महत्वपूर्ण व्यवसाय के रूप में आर्थिक विकास का आधार है। इसके अतिरिक्त औद्योगिक इकाईयों की संख्या क्षेत्र के झाँसी तथा जालौन जनपदों में सर्वाधिक है। आर्थिक रूप से पिछड़ा हुआ होने के कारण क्षेत्र में व्यापक निर्धनता की स्थितियाँ विद्यमान हैं। ऐसे में निर्धन परिवारों के बच्चे भी विभिन्न व्यवसायों में जीवन–यापन के लिये रोजगार में संलग्न है। क्षेत्र में बाल श्रमिकों की सर्वाधिक संख्या कृषि व्यवसाय में दृष्टिगत होती है। इसके अतिरिक्त यहाँ पर अधिकांश औद्योगिक इकाईयाँ ग्रह आधारित लघु उद्योगों के रूप में विद्यमान हैं जिनमें बड़ी संख्या में बाल श्रमिक कार्यरत हैं।

इन विभिन्न जनपदों में स्थित बड़े–बड़े कारखानों एवं छोटी–छोटी गृह आधारित औद्योगिक इकाइयों में बड़ी संख्या में बाल श्रमिक कार्यरत हैं। हाँलाकि ये बड़ी औद्योगिक इकाइयाँ प्रायः गृह आधारित लघु औद्योगिक इकाइयों को उपठेके पर अपने कार्य सौंप देते हैं, ऐसी स्थिति में इनके विरूद्ध कोई कानूनी कार्यवाही नहीं हो पाती क्योंकि ये इकाइयाँ कानून के दायरे से बाहर हैं। माननीय सर्वोच्च न्यायालय के आदेश पर बाल श्रमिकों के चिन्हाँकन हेतु कराये गये सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड क्षेत्र में बड़ी संख्या में बाल श्रमिक कार्यरत हैं। बुन्देलखण्ड क्षेत्र में बाल श्रम की स्थिति को निम्नलिखित तालिका द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।

तालिका संख्या–1.4

बुन्देलखण्ड क्षेत्र में बाल श्रम सर्वेक्षण का विवरण

जनपद का नाम	सर्वेक्षण वर्ष 1997–98		सर्वेक्षण वर्ष 1998–99		सर्वेक्षण वर्ष 1999–2000		सर्वेक्षण वर्ष 2003–04	
	खतरनाक	गैर–खतरनाक	खतरनाक	गैर–खतरनाक	खतरनाक	गैर–खतरनाक	खतरनाक	गैर–खतरनाक
झाँसी	51	198	406	70	10	8	14	23
उरई (जालौन)	28	127	70	42	2	1	2	28
ललितपुर	5	13	20	41	0	2	0	19
बांदा	2	60	15	60	8	0	0	20
महोबा	0	20	19	11	2	0	0	5
हमीरपुर	0	47	32	11	2	0	0	14
चित्रकूट	1	16	0	0	0	0	1	9
योग–	**87**	**481**	**562**	**235**	**24**	**11**	**17**	**118**

स्रोतः श्रम विभाग उत्तर प्रदेश

तालिका संख्या–1.4 को देखने से ज्ञात होता है कि वर्ष 1997–98 के दौरान क्षेत्र में खतरनाक उद्योगों में कार्यरत कुल 87 बाल श्रमिकों का चिन्हांकन किया गया जिनमें सर्वाधिक संख्या झाँसी और जालौन जनपदों में पायी गई। वर्ष के दौरान गैर–खतरनाक उद्योगों में कुल 481 बाल श्रमिकों का चिन्हांकन किया गया जिसमें झाँसी में 198, जालौन में 127, बांदा में 60 तथा हमीरपुर में 47 बाल श्रमिक चिन्हांकित किये गये थे। वर्ष 1998–99 में सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड परिक्षेत्र में खतरनाक उद्योगों में कुल 562 तथा गैर–खतरनाक उद्योगों में 235 बाल श्रमिकों का चिन्हांकन किया गया जिनमें खतरनाक उद्योगों में बड़ी संख्या में बाल श्रमिक कार्यरत पाये गये। सरकार द्वारा किये गये प्रयासों के परिणामस्वरूप विगत कुछ वर्षो में बाल श्रमिकों की संख्या में कमी आई है। वर्ष 1999–2000 के दौरान खतरनाक तथा गैर–खतरनाक उद्योगों में चिन्हांकित किये गये बाल श्रमिकों की संख्या क्रमशः 24 एवं 11 है। वर्ष 2003–04 के दौरान चिन्हांकित किये गये बाल श्रमिकों की संख्या खतरनाक उद्योगों में 17 तथा गैर–खतरनाक उद्योगों में 118 पायी गई है।

हाँलाकि सर्वेक्षण के दौरान चिन्हित किये गये बाल श्रमिकों की संख्या वास्तविक संख्या से बहुत कम हैं। परन्तु छोटी–छोटी गृह आधारित इकाइयों में नियोक्ता के बच्चों और बाल श्रमिकों के मध्य अन्तर करना निरीक्षकों के लिये अत्यन्त कठिन होता है क्योंकि यह साबित करने की जिम्मेदारी नियोक्ता की नहीं बल्कि प्रवर्तन अधिकारी की है कि काम करने वाला बच्चा बाल श्रमिक है न कि मालिक का अपना बच्चा।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र में बाल श्रमिकों के पुनर्वास के लिये समय–समय पर प्रयास किये गये हैं। वर्ष 2003–04 के दौरान उनके शैक्षिक पुनर्वास के लिये किये गये प्रयासों का विवरण तालिका संख्या–1.5 से व्यक्त किया जा सकता है।

तालिका संख्या–1.5

बुन्देलखण्ड क्षेत्र में बाल श्रमिकों का शैक्षिक पुनर्वास (2004)

क्र0 सं0	जनपद का नाम	खतरनाक उधोग				गैर–खतरनाक उधोग			
		चि0बा0 श्रमिक	विद्या0 में प्रवेश	प्रवासी व अन्य	प्रवेश हेतु अवशेष	चि0बा0 श्रमिक	विद्या0 में प्रवेश	प्रवासी व अन्य	प्रवेश हेतु अवशेष
1.	झाँसी	526	342	184	0	356	292	64	0
2.	उरई (जालौन)	103	62	40	1	222	153	69	0
3.	ललितपुर	29	24	4	1	98	58	40	0
4.	बांदा	26	11	15	0	178	104	74	0
5.	महोबा	25	24	1	0	64	64	0	0

6.	हमीरपुर	34	23	11	0	77	60	17	0
7.	चित्रकूट	2	2	0	0	33	33	0	0
	योग—	**745**	**488**	**255**	**02**	**1028**	**764**	**264**	**0**

स्रोतः श्रम विभाग उत्तर प्रदेश

वर्ष 2004 के दौरान क्षेत्र में खतरनाक उद्योगों में कार्यरत 745 बाल श्रमिकों का चिन्हांकन किया गया जिसमें से 488 बाल श्रमिकों को विद्यालयों में प्रवेश दिलाया गया तथा उनकी भावी समस्त शिक्षा खर्चो को सरकार स्वयं वहन करेगी। 255 बाल श्रमिक जो अन्य क्षेत्रों में प्रवास करके आये थे उन्हें उनके पैतृक स्थानों में वापस भेजकर उनके पुर्नवास हेतु प्रयास जारी हैं। 02 बाल श्रमिकों को किन्हीं कारणों से विद्यालयों में प्रवेश नहीं दिलाया जासका है परन्तु उनके पुर्नवासन के लिये प्रयास जारी है। इसी प्रकार गैर—खतरनाक उद्योगों में कुल 1028 बाल श्रमिकों का चिन्हांकन किया गया जिनमें से समस्त का पुर्नवासन कियां जा चुका है। इनमें से 764 बाल श्रमिक जो क्षेत्र के ही निवासी थे उनके शैक्षिक पुर्नवासन हेतु उन्हें विद्यालयों में प्रवेश दिलाया जा चुका है जबकि 264 प्रवासी बाल श्रमिकों को उनके पैतृक स्थानों में भेजा जा चुका है।

राष्ट्रों में बाल श्रम की वर्तमान स्थितिः

विकसित एवं विकासशील दोनों अर्थव्यवस्थाओं में बाल श्रम की समस्या का सम्बन्ध पूँजीवादी शक्तियों के विकास से रहा है। बाल श्रमिकों की समस्या केवल वर्तमान समय की समस्या नहीं है बल्कि प्राचीन समय में भी कृषि और औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप बड़ी संख्या में जनसंख्या की उपलब्धता के कारण कम आयु के बालकों को घर एवं बाहर के कठिन कार्यो में रखा जाता था।

बाल श्रमिकों के कार्यो के बुरे परिणाम इंग्लैण्ड में हुयी औद्योगिक क्रान्ति के परिणामस्वरूप देखने में आये।[1]

फ्रान्स, जर्मनी, बेल्जियम और संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे विकसित देशों में भी औद्योगीकरण के प्रारम्भिक दिनों में बाल श्रम की समस्या एक सामाजिक बुराई के रूप में विधमान थी तथा श्रम कानूनों द्वारा उसे नियंत्रित करने के प्रयास किये जा रहे थे। औद्योगिक विकास के प्रारम्भिक चरण में बाल श्रमिकों का प्रयोग बड़े लाभ की आशा से किया जाता था क्योंकि बाल श्रम वयस्क श्रमिकों की अपेक्षा सस्ता होता था।[2] मेण्डेलविच ने ठीक कहा है कि "प्रत्येक प्रकार के मानव समाज में कम या अधिक रूप में बालकों की हिस्सेदारी होती है, और उन आर्थिक गतिविधियों में भी उनका आवश्यक योगदान होता है जिस समूह में वे सेवा कार्य कर रहे हैं।"[3]

विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में बाल श्रम की समस्या व्यापक रूप से विद्यमान है, विशेषकर दक्षिण–पूर्वी एशिया के देशों में। सम्पूर्ण विश्व में लगभग 40 प्रतिशत बालकों की प्रति वर्ष मृत्यु हो जाती है जिनमें से लगभग 45 प्रतिशत कुपोषण के शिकार होते है, 35 प्रतिशत ऐसे बालक होते हैं जो कभी विद्यालय नहीं गये, तथा 50 प्रतिशत से अधिक बालक ऐसे होते हैं जो अत्यधिक निर्धन होते है।[4] उपरोक्त स्थिति केवल तीन देशों भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश पर हुये अध्ययन में पाई गई है। लगभग यही स्थिति एशिया एवं अफ्रीका के अन्य देशों में भी है।

अधिकांश विकासशील देशों में बालकों को शहरी क्षेत्र में सभी संगठित और असंगठित क्षेत्रों की सभी प्रकार की औद्योगिक इकाईयों एवं सेवा क्षेत्र

---

[1] National Pollicy for Children, Department of Social Welfare, August, 1974, Indian Labour Journal, Vol. 27, December, New Delhi 1986, P – 173.
[2] Ibid, P – 9.
[3] National Policy for Children, Department of Social Welfare, August, 1974, Indian Labour Journal Vol. 27, December, 1986, P – 3.
[4] Ibid, P – 178.

से सम्बन्धित कार्यो में कार्य करते हुये आसानी से देखा जा सकता है। व्यावसायिक कृषि कार्यो में भी बड़े पैमाने पर बाल श्रमिकों की विद्यमानता है। वे कम मजदूरी पर अधिक घण्टों तक कार्य करते हैं। शहरी क्षेत्र की गतिविधियों को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि अधिकांश बालक लघु उधोगों एवं असंगठित क्षेत्र के उद्योगों में रोजगार प्राप्त हैं। ऐसे उद्योग या तो बाल श्रम कानून की सीमा से बाहर हैं अथवा निरीक्षण से दूर और सेवा क्षमताओं के प्रभावशाली निर्धारण से परे हैं। इन उधोगों को जीवित रखने में इन सस्ते और लचीले बाल श्रमिकों का अत्यधिक महत्वपूर्ण योगदान होता है। औद्योगीकरण के कारण औधोगिक एवं शहरी क्षेत्रों के उत्पादन में वृद्धि, ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों की ओर प्रवासी प्रवृत्ति की दर में वृद्धि और शहरी वयस्क युवकों में बेरोजगारी की दर में वृद्धि के कारण शहरी आधारित गतिविधियों में बाल श्रमिकों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हुई है। इस प्रकार बहुत से बाल श्रमिक औद्योगिक या अर्द्ध औद्योगिक इकाईयों में मजदूरी या अर्द्ध मजदूरी वाले रोजगारों में कार्यरत होते हैं। एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में कुल राष्ट्रीय उत्पाद (GNP) का लगभग 20 प्रतिशत उत्पादन बाल श्रमिकों के द्वारा उत्पादित किया जाता है।[1]

विकसित देशों में बाल श्रम विकासशील देशों की अपेक्षा कम महत्वपूर्ण है। एशियाई देशों की वर्तमान सामाजिक–आर्थिक स्थिति में एक बड़ी जनसंख्या का रहन–सहन का स्तर अत्यन्त निम्न है। इसलिये बालक अपने परिवार के आर्थिक सहयोग के लिये कम उम्र में ही कस्बों में परम्परागत रूप से कार्य करने लगते हैं। पिछले कुछ दशकों में शहरीकरण की तीव्र प्रक्रिया के फलस्वरूप छोटे कस्बों में भी उनके लिये रोजगार की पर्याप्त उपलब्धता रहती है।

---

[1] Amma Joseph - Child Labour cannot Wait. The Hindu, 10th Nov. 1991.

यदि हम आंकड़ों पर दृष्टिपात करें तो यह स्पष्ट होता है कि विश्व में बाल श्रमिकों की सर्वाधिक संख्या एशिया में है जहाँ के कुछ देशों में कुल श्रम शक्ति का 10 प्रतिशत बाल श्रमिक हैं। अफ्रीका के कुछ देशों में कुल श्रम शक्ति का 20 प्रतिशत बाल श्रमिक है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार विकासशील देशों में 5 से 14 आयु समूह के कार्यरत बच्चों की संख्या 250 मिलियन है जिसमें से पूर्णकालिक कार्यशील बच्चों की संख्या 12 करोड़ है। कुल कार्यशील बाल श्रमिकों में पूर्णकालिक कार्यशील बच्चों का प्रतिशत एशिया में 61 प्रतिशत अफ्रीका में 32 प्रतिशत तथा लैटिन अमेरिका में 7 प्रतिशत है।[1]

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की एक रिपोर्ट के अनुसार पाकिस्तान में बुनाई उधोग में बाल बंधुआ श्रमिकों के रूप में कार्यरत 50,000 बच्चों में आधे बच्चे 12 वर्ष की अवस्था नहीं प्राप्त कर सके तथा इसे पूर्व ही विभिन्न बीमारियों तथा कुपोषण का शिकार हो गये। थाईलैण्ड में निजी मकानों रेस्तराओं, कारखानों तथा वेश्यालयों में काम करते हुये बच्चे खरीदे एवं बेचें जाते है।

इण्डोनेशिया में काँच के कारखानों में बच्चे सप्ताह में छः दिन तथा प्रतिदिन कम से कम आठ घण्टे काम करते हैं। इसी प्रकार अफ्रीका में प्रत्येक तीन बच्चों में से एक बच्चा कार्यशील है। यहाँ पर बच्चों की कार्यशीलता कृषि क्षेत्र में सर्वाधिक है। ग्रामीण क्षेत्रों में बाल श्रमिकों की संख्या शहरी क्षेत्रों से अधिक है।[2]

1999 में हुये एक अध्ययन के अनुसार भारत में 5 से 14 वर्ष आयु समूह की कुल बाल जनसंख्या 297 मिलियन थी। इनमें से 116.2 मिलियन बच्चे पूर्णकालिक विद्यार्थी 12.7 मिलियन पूर्णकालिक बाल श्रमिक, 10.5 मिलियन बाल श्रमिक तथा 74.4 मिलियन बच्चे न तो विद्यार्थी और न ही कामकाजी थे। भारत में

---

[1] Koshis – IIIrd Addition, July – Aug – Sept. 1999.
[2] Helan R. Sekar – Child Labour: A Preview, V.V. Giri, National Labour Organisation, Noida, U.P.

सम्पूर्ण श्रम शक्ति का 5.2 प्रतिशत बाल श्रमिक हैं। कुल श्रम शक्ति में बाल श्रमिकों का प्रतिशत कुछ अन्य देशों में निम्न प्रकार है। तुर्की में 27.3 प्रतिशत, थाईलैण्ड में 20.7 प्रतिशत, बांग्लादेश में 19.5 प्रतिशत, मिस्र में 8.2 प्रतिशत, श्रीलंका में 4.4 प्रतिशत तथा ब्राजील में 18.8 प्रतिशत है।[1]

भारत में बच्चे अपनी क्षमता के अनुसार कृषि क्षेत्र में बुआई, निराई, कटाई और फसल की देख–रेख आदि में सहायक के रूप में कार्य करते हैं। इसके अतिरिक्त बच्चे विभिन्न फैक्ट्रियों जैसे माचिस फैक्ट्री, बीड़ी उद्योग, फर्नीचर कार्यो, प्रिन्टिंग प्रेस प्रकाशन उद्योग, चमड़ा और चमड़ा आधारित उद्योग तथा रबर एवं रबर आधारित उद्योगों में कार्य करते हुये आसानी से देखे जा सकते हैं। बीड़ी उद्योग में बच्चे पत्तियों की कटाई एवं सफाई तथा बीड़ी लपेटने आदि कार्य करते हैं।

भारत में बड़ी संख्या में बच्चे असंगठित क्षेत्रों में कार्य करते है वे फुटपाथ में चाय की दुकानों में, आटोमोबाइल वर्कशाप में, फल विक्रेता के रूप में, कूड़ा बीनने के कार्यों में, निर्माणाधीन भवनों में, बुनाई एवं कताई कारखानों में, कालीन उद्योग में, जरी के कामों में, बेल्डिंग कारखानों में, कुम्हार तथा दूसरे मौसमी व्यवसायों में कार्य करते हैं। निर्माणाधीन भवनों में मजदूरी करने वाले श्रमिक भी अपने बच्चों को साथ ले जाते हैं जहाँ वे बोझा ढोने तथा पत्थर तोड़ने आदि का कार्य करते हैं।

एक अध्ययन के अनुसार बाल श्रमिकों की कुल वैश्विक जनसंख्या का 90 से 95 प्रतिशत भाग एशिया अफ्रीका और दक्षिण अमेरिकी के 59 देशों में पाया जाता है। इनमें से 38.1 प्रतिशत बाल श्रमिक सिर्फ एशियाई देशों में पाये जाते हैं जो विश्व में सर्वाधिक है। एशियाई देशों में भारत का प्रथम स्थान है जहाँ

---

[1] Ibid.

पर बाल श्रमिकों का प्रतिशत 25 है। भारत में बाल श्रमिकों की इतनी बड़ी संख्या इस कारण है क्योंकि यहाँ विश्व जनसंख्या का 14 प्रतिशत भाग निवास करता है। इसी प्रकार विकासशील देशों की कुल जनसंख्या का 22 प्रतिशत भाग भारत में हैं।[1]

अध्ययन क्षेत्र का संक्षिप्त परिचय :

वर्तमान अध्ययन उत्तर प्रदेश में बाल श्रम समस्या की विद्यमानता एवं उसके उन्मूलन हेतु प्रदेश सरकार द्वारा किये जा रहे प्रयासों पर आधारित है। अतः अध्ययन क्षेत्र का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करना आवश्यक होगा। उत्तर प्रदेश का इतिहास अति प्राचीन एवं सुरूचि पूर्ण है। दो महान काव्यों–रामायण एवं महाभारत का प्रेरणा स्रोत उत्तर प्रदेश ही रहा है। रामायण में कौशल राजघराने का उल्लेख है जबकि महाभारत में हस्तिनापुर के राजवंश का उल्लेख है। दोनो स्थान उत्तर प्रदेश में ही हैं ईसा पूर्व छठी शताब्दी में उत्तर प्रदेश में नए सम्प्रदाय जुड़े– जैन और बौद्ध। कहा जाता है कि जैन धर्म के प्रवर्तक महावीर ने अपनी अन्तिम सांस उत्तर प्रदेश में ही ली। इसी प्रकार बुद्ध ने अपना पहला उपदेश सारनाथ में दिया। पूर्व बौद्ध काल में उत्तर प्रदेश में कई केन्द्र जैसे– अंयोध्या, प्रयाग, वाराणसी और मथुरा विद्याध्ययन के प्रसिद्ध केन्द्र बन गये थे महान सुधारवादी श्री शंकराचार्य ने भी अपना एक आश्रम उत्तर प्रदेश में स्थापित किया। अंग्रेजों ने आगरा और अवध नामक दो प्रान्तों को मिलाकर एक प्रान्त बनाया जिसे आगरा और अवध संयुक्त प्रदेश के नाम से पुकारा जाने लगा। बाद में 1935 में इसे संक्षेप में संयुक्त प्रान्त कर दिया गया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात जनवरी 1950 में संयुक्त प्रान्त का नाम उत्तर प्रदेश रखा गया।

---

[1] P.N. Shah – Working Children – Health Problems in Child Labour, Edited by Usha, S. Naidu and Kamini R. Kapadia, T.I.S.S., Bombay, 1985, P. – 65.

उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ है। यहाँ की शासकीय भाषा हिन्दी है। तथा उर्दू एवं पंजाबी अन्य भाषाओं के रूप में बोली जाती हैं। क्षेत्रफल की दृष्टि से प्रदेश देश का चौथा सबसे बड़ा राज्य है। यहाँ का कुल क्षेत्रफल 238566 वर्ग किलोमीटर है यहाँ पर जिलों की संख्या 70 है। जनसंख्या की दृष्टि से प्रदेश देश का सर्वाधिक बड़ा राज्य है। वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार यहाँ की कुल जनसंख्या 16,60,52,589 थी। जिसमें 8,74,66,301 (52.67 प्रतिशत) पुरूष और 7,85,86,558 (47.33 प्रतिशत) महिलायें हैं। यह पड़ोसी देश पाकिस्तान की कुल जनसंख्या 15.7 करोड़ से अधिक है। इस तथ्य के बावजूद कि इसका एक भाग नये राज्य उत्तरांचल के रूप में बट गया है। उत्तर प्रदेश देश की जनसंख्या में 16.17 प्रतिशत का योगदान करता है। सन 1991 की जनगणना के अनुसार 2,64,91,698 के विपरीत 2001 की जनगणना 3,40,54,055 की दशकीय वृद्धि प्रदेश में हुई है। इन दोनो दशकों की दशकीय वृद्धि क्रमशः 25.55 प्रतिशत तथा 25.80 प्रतिशत है। उत्तर प्रदेश में सर्वाधिक दशकीय वृद्धि दर वाले जिले गाजियाबाद (47.47 प्रतिशत), सोनभद्र (36.13 प्रतिशत), गौतम बुद्ध नगर (35.70 प्रतिशत), चित्रकूट (34.33 प्रतिशत) तथा फिरोजाबाद (33.44 प्रतिशत) है। राज्य में न्यूनतम दशकीय वृद्धि दर वाले जिले बागपत (13.00 प्रतिशत), औरैया (14.70 प्रतिशत), हमीरपुर (17.85 प्रतिशत), हाथरस (18.32 प्रतिशत) तथा बांदा (18.49 प्रतिशत) है।

वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार यहाँ प्रतिवर्ग किलोमीटर जनसंख्या घनत्व 548 था इसके विपरीत 2001 की जनगणना में यह 689 जन प्रतिवर्ग किलोमीटर हो गया है। इस प्रकार बीते एक दशक में प्रदेश में जनसंख्या का दबाव प्रतिवर्ग किलोमीटर में 141 तक बढ़ा है। उत्तर प्रदेश में सर्वाधिक जनसंख्या घनत्व वाले जिले वाराणसी 1995 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर, गाजियाबाद – 1682 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर, लखनऊ–1456 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर, संत

रविदास नगर– 1409 व्यक्ति वर्ग किलोमीटर तथा कानपुर नगर – 1366 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर है। राज्य में न्यूनतम जनसंख्या घनत्व वाले जिले ललितपुर–194 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर, हमीरपुर–241 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर, महोबा–249 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर तथा चित्रकूट 250 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर है।

1991 की जनगणना के अनुसार प्रदेश में लिंग अनुपात 876 था अर्थात् 1000 पुरूषों पर 876 महिलायें थी। 2001 की जनगणना में यह लिंग अनुपात बढ़कर 898 हो गया है। राज्य में सर्वाधिक लिंगानुपात वाले जिले हैं : आजमगढ़ (1026), जौनपुर (1021), देवरिया (1003), मऊ (984) तथा प्रतापगढ़ (983)। राज्य में न्यूनतम लिंग अनुपात वाले जिले हैं शाहजहाँपुर (838), बदायूँ (843), मथुरा (841), गौतम बुद्ध नगर (842) तथा हरदोई (843)।

उत्तर प्रदेश में साक्षरता दर वर्तमान में 57.36 प्रतिशत है। इस समय प्रदेश में 70.23 प्रतिशत पुरूष और 42.28 प्रतिशत महिलायें साक्षर हैं। 1991 में यह साक्षरता दर 40.71 प्रतिशत थी। इस तरह पिछले 10 वर्षों में साक्षरता की दर में 16.65 फीसदी का इजाफा प्राप्त करने में सफलता मिली है। उत्तर प्रदेश में सर्वाधिक साक्षरता वाले राज्य हैं– कानपुर नगर (77.63 प्रतिशत), औरैया (71.50 प्रतिशत), गाजियाबाद (70.89 प्रतिशत), इटावा (70.75 प्रतिशत) तथा गौतमबुद्ध नगर (69.78 प्रतिशत)। राज्य में न्यूनतम साक्षरता दर वाले जिले हैं – श्रावस्ती (34.24 प्रतिशत), बलरामपुर (34.71 प्रतिशत), बहराइच (35.79 प्रतिशत), बदायूँ (38.95 प्रतिशत) तथा रामपुर (38.95 प्रतिशत)।

उत्तर प्रदेश में विश्व में तीर्थ यात्रियों का सबसे बड़ा मेला 'कुंभ' प्रत्येक बारहवें वर्ष में आयोजित होता है। प्रत्येक 6 साल में हरिद्वार में भी अर्द्ध कुंभ

मेले का आयोजन होता है। इलाहाबाद में प्रत्येक वर्ष जनवरी में माघ मेला आयोजित होता है, जहां लोग एक माह का नित्य प्रातः संगम में डुबकी लगाते है। कार्तिक पूर्णिमा के अवसर पर गंगा में डुबकी लगाना पवित्र माना जाता है। इस अवसर पर विशाल संख्या में भक्तगण गढ़मुक्तेश्वर, सोरन, राजघाट, काकोरी, बिठूर, कानपुर, इलाहाबाद, वाराणसी, अयोध्या और हरिद्वार में एकत्रित होते है। आगरा जिले के बटेश्वर कस्बे में पशुओं का प्रसिद्ध मेला लगता है। बाराबंकी जिले का मेला मुस्लिम संत वासिशाह के कारण प्रसिद्ध है।

सिंचाई की दृष्टि से उत्तर प्रदेश का स्थान देश में तृतीय है। जबकि प्रथम पंजाब व द्वितीय हरियाणा का स्थान है। प्रदेश में नलकूपों द्वारा सिंचाई सर्वाधिक होती है। यहाँ पर अनेक बांध परियोजनाओं का निर्माण किया गया है जो इस प्रकार हैं – (i) मौदहा बांध परियोजना – इस परियोजना से जिला हमीरपुर लाभान्वित है। (ii) चम्बल डाल सिंचाई परियोजना– इस परियोजना से लाभान्वित होने वाले जिले आगरा एवं इटावा है। (iii) बेवर फीडर परियोजना–इस परियोजना से लाभान्वित होने वाला जिला एटा है। (iv) गुन्टा नाला बांध–इस परियोजना से लाभान्वित होने वाला जिला बांदा है। (v) पुनरीक्षित टोन्स पम्प नहर–इस नहर से प्रयागराज (इलाहाबाद) जिला लाभान्वित है। (vi) चित्तौड़गढ़ जलाशय–इससे लाभान्वित जिला जय प्रकाश नगर (गोंडा) है। (vii) सरयू नहर परियोजना–इस परियोजना से लाभान्वित जिले है बहराइच, जयप्रकाश नगर (गोंडा), बस्ती, सिद्धार्थ नगर एवं गोरखपुर (viii) शारदा सहायक परियोजना– इस परियोजना से लाभान्वित जिले लखीमपुर, सीतापुर, लखनऊ, रायबरेली तथा वाराणसी आदि। (ix) पूर्वी गंगा नहर परियोजना–इस परियोजना से लाभान्वित होने वाले जिले हैं

मुरादाबाद, बिजनौर। (x) राजघाट बांध परियोजना–इस परियोजना से लाभान्वित होने वाले जिले हैं–झांसी, जालौन एवं हमीरपुर। (xi) लखवाड़ व्यासी परियोजना–इस परियोजना से लाभान्वित होने वाले जिले हैं–सहारनपुर, मुजफ्फर नगर, मेरठ। (xii) जमरानी बांध परियोजना–इस परियोजना से लाभान्वित जिले हैं–रामपुर व बरेली। (xiii) देवकली पम्प नहर पुनरोद्धार परियोजना। (xiv) कनहर सिंचाई परियोजना। (xv) वाण सागर नहर परियोजना।

उत्तर प्रदेश में लगभग 78 प्रतिशत जनसंख्या का मुख्य व्यवसाय कृषि है। यहां सबसे ज्यादा खाद्यान्न गन्ना और तिलहन की पैदावार होती है। वर्ष 1994–95 में 8995 हजार हेक्टेयर भूमि पर 22560.2 हजार टन गेहूँ एवं 5421.9 हजार हेक्टेयर भूमि पर 10123.8 हजार टन चावल पैदा हुआ। राज्य में कुल खाद्यान्न उत्पादन 20150.1 हजार हेक्टेयर भूमि पर 38708.6 हजार टन हुआ। वर्ष 2001–2002 में उत्तर प्रदेश में शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल 16.812 हजार हेक्टेयर तथा कुल बोया गया क्षेत्रफल 25,447 हजार हेक्टेयर था। वर्ष 2001–2002 में राज्य में खाद्यान्न का उत्पादन 441.36 लाख मी0टन, दालें 23.77 लाख मी0 टन, तिलहन 7.25 लाख मी0 टन, गन्ना 1179.82 लाख मी0 टन तथा आलू का उत्पादन 95.83 लाख मी0 टन हुआ।

उत्तर प्रदेश में चीनी, सीमेन्ट, वनस्पति, सूती कपड़ा और सूती धागों का उत्पादन बड़ी मात्रा में किया जाता है। इसके अतिरिक्त कुछ स्थान ऐसे भी हैं जहाँ पर विशिष्ट चीजों का उत्पादन किया जाता है। उनमें भदोही में हाथ से बने हुए कालीन, लखनऊ का चिकन, गोरखपुर का टेराकोटा, सहारनपुर की नक्काशीदार लकड़ी, मुरादाबाद का पीतल का सामान, फिरोजाबाद का कांच का

सामान और फर्रूखाबाद की हाथ की प्रीटिंग इस राज्य के कारीगरों की कुशलता का उत्कृष्ट नमूना है।

सार्वजनिक क्षेत्र के अन्तर्गत चूना पत्थर, मैगनेसाइट, कोयला, फास्फेट, डोलोनाइट और सिलिकान रेत की खानों का खनन आता है। खनिजों पर आधारित कुछ महत्वपूर्ण उद्योगों में सोनभद्र का बड़ा सीमेन्ट संयत्र, लखनऊ, देहरादून और अल्मोड़ा के छोटे संयंत्र, अल्मोड़ा और पिथौरागढ़ का देहरादून का कैल्सियम कारबाइट संयंत्र, बांदा का सिंथैटिक एमरी संयंत्र हैं। बांदा में फ्लोट कांच संयंत्र, इलाहाबाद में सिलिका रेत संयंत्र तथा ललितपर में तात्विक फास्फोरस संयंत्र का निर्माण कार्य चल रहा है। राज्य में फैक्टरी सेक्टर के अन्तर्गत वर्ष 1992–93 तक 10313 फैक्ट्रियों में 786168 व्यक्तियों को रोजगार मिला हुआ था। 21202 करोड़ रूपये की पूंजी निवेश की। इन फैक्ट्रियों में लगभग 33926 करोड़ रूपयें का उत्पादन हुआ।

खनिज उत्पादन की दृष्टि से प्रदेश का स्थान सम्पूर्ण भारत में सर्वाधिक है। भारत के कुल खनिज उत्पादन का 3.7 प्रतिशत भाग उत्तर प्रदेश से प्राप्त होता है। डायस्फोर (58 प्रतिशत) के उत्पादन में उत्तर प्रदेश देश में अग्रणी है। भदोही, कानपुर, ग्रेटर नोएडा, आगरा तथा मुरादाबाद प्रदेश के विशेष आर्थिक क्षेत्र है। इसी प्रकार प्रदेश में सर्वाधिक बड़ा उद्योग हथकरधा उद्योग भी है। चीनी उत्पादन की दृष्टि से प्रदेश देश में प्रथम स्थान पर है। कानपुर को प्रदेश का मैनचेस्टर कहा जाता है। इसी प्रकार यहाँ के अन्य प्रमुख उद्योग फिरोजाबाद का चूड़ी उद्योग, सोनभद्र का एल्यूमिनियम उद्योग, चुर्क व डाला का सीमेण्ट उद्योग, बरेली का रबड़ उद्योग, अलीगढ़ का ताला उद्योग, कानपुर का चमड़ा उद्योग आदि प्रमुख है।

रेलवे के उत्तरी क्षेत्र का मुख्य जंक्शन लखनऊ है अन्य महत्वपूर्ण जंक्शन है– आगरा, कानपुर, इलाहाबाद, मुरादाबाद, मुगल सराय, वाराणसी, टूण्डला, गोरखपुर, गोंडा, फैजाबाद, बरेली और सीतापुर। राज्य में कुल रेल मार्गो की लम्बाई वर्ष 1995 तक 8934 किमी. थी। राज्य में वर्ष 1992 तक कुल सड़कें 222502 किमी. थी। वर्ष 1996 में राज्य में व्यावसायिक एवं गैर–व्यावसायिक वाहनों की कुल संख्या 229079 थी।

प्रदेश में लखनऊ, कानपुर, वाराणसी, इलाहाबाद, आगरा, झाँसी, बरेली, हिडेन (गाजियाबाद), गोरखपुर, सरसावां (सहारनपुर) और फुर्सतगंज (रायबरेली) में हवाई अड्डे है। राज्य में वर्ष 1995 तक भारत सरकार के पर्यटन विभाग द्वारा अनुमोदित होटलों की संख्या 74 थी, जिनमें 3811 कमरे उपलब्ध थे।

वाराणसी पौड़ी, विंध्याचल, अयोध्या, चित्रकूट, प्रयाग, बागेश्वर, जागेश्वर, नैमिषारण्य, मथुरा, वृंदावन, नानकमट्टा, हेमकुण्ड साहिब, देवा शरीफ, पीरांकलार, फतेहपुर में शेख सलीम चिश्ती की दरगाह, सारनाथ, कुशीनगर, संकिसा, कम्पिल, पिपरहवा, मखदूम शाह औलिया (कानपुर) और कौशाम्बी प्रमुख तीर्थ स्थान है। आगरा, अयोध्या, सारनाथ, वाराणसी, लखनऊ, मथुरा, प्रयाग, झाँसी, गोरखपुर, जौनपुर, कन्नौज, महोबा, देवगढ़, बिठूर और विंध्याचल में हिन्दू एवं मुस्लिम भवन शिल्पकला और संस्कृति के महत्वपूर्ण खजाने है।

राजधानी लखनऊ में 260 किमी. एवं पलिया से 10 किमी. दूरी पर दुधवा राष्ट्रीय पार्क है। यह फरवरी से अप्रैल तक लोगों के भ्रमण हेतु खुला रहता है। दूसरा राष्ट्रीय पार्क कार्बेट राष्ट्रीय पार्क है जो रामनगर से 19 किमी. दूरी पर स्थित है तथा पर्यटकों के लिए दिसम्बर से अप्रैल तक खुला रहता है। राज्य में 1996 में 28 विश्वविद्यालय 549 स्नातक तथा परास्नातक महाविद्यालय 6988

उच्चतर माध्यमिक, 19148 माध्यमिक व 86436 प्राथमिक विद्यालय थे। जिनमें छात्रों की कुल नामांकन संख्या 26095100 थी। राज्य में वर्ष 1995 में एलोपैथिक औषधालयों एवं अस्पतालों की संख्या 735 थी, जिनमें 47278 शय्यायें उपलब्ध थी।

इस प्रकार हम देखते है कि उत्तर प्रदेश सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक दृष्टि से देश का सर्वाधिक महत्वपूर्ण राज्य है। औद्योगिक दृष्टि से समृद्ध होने के वावजूद राज्य का विकास अपर्याप्त रहा है। जिस कारण निर्धनता एवं बेरोजगारी की स्थितियाँ विद्यमान रही है। इस निर्धनता का परिणाम है कि प्रदेश में बाल श्रम समस्या गम्भीर रूप से विद्यमान है।

अध्ययन के उद्देश्य:

किसी भी अध्ययन का प्रारम्भ किये जाने से पूर्व उसके उद्देश्यों का निर्धारण किया जाना आवश्यक होता है। पूर्व निर्धारित उद्देश्य के अभाव में अध्ययनकर्ता अपने मार्ग से भटक सकता है।

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य उत्तर प्रदेश के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में निवास कर रहे परिवारों के कामकाजी तथा गैर–कामकाजी बच्चों की शैक्षिक स्थिति की जानकारी और उनकी शैक्षिक प्रगति की आवश्यकताओं के परिप्रेक्ष्य में शिक्षा के सुरलभीकरण हेतु प्रस्ताव तैयार करने से पूर्व उनके विवरण का एकत्रीकरण किये जाने और उसके आधार पर ठोस एवं समस्या के स्थायी निदान के कार्यक्रम को तैयार किया जाना है।

प्रस्तुत अध्ययन उत्तर प्रदेश के विभिन्न शहरों में स्थित औद्योगिक इकाइयों में कार्यरत बाल श्रमिकों पर आधारित है। प्रदेश की प्रकृति, इसकी बढ़ती जनसंख्या, व्यापक निर्धनता तथा श्रमिक परिवारों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति का

अध्ययन भी प्रस्तुत शोध का प्रमुख उद्देश्य है। प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्दश्य बाल श्रमिकों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति, मजदूरी और कार्य–दशाओं का अध्ययन करना है। संक्षेप में प्रस्तुत अध्ययन निम्नलिखित प्रमुख उद्देश्यों पर आधारित हैं–

1. बाल श्रमिकों के कार्य में प्रवेश के कारणों का पता लगाना।
2. अध्ययन क्षेत्र के बाल श्रमिकों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति का पता लगाना।
3. बाल श्रमिकों की शिक्षा एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं का पता लगाना।
4. बाल श्रमिकों की आय–व्यय तथा पारिवारिक आय में उनके योगदान का पता लगाना।
5. कार्यक्षेत्र में बाल श्रमिकों की कार्य–दशाओं का पता लगाना।
6. कार्य क्षेत्र में व्यवसाय की प्रकृति और प्रकार का विश्लेषण करना।
7. बाल श्रमिकों का अर्थव्यवस्था में योगदान का पता लगाना।
8. विभिन्न राष्ट्रों में बाल श्रमिकों की वर्तमान संख्या एवं स्थिति का पता लगाना।
9. बाल श्रमिकों से सम्बन्धित विभिन्न कानूनों एवं प्रावधानों का अध्ययन कर उसमें सुधार एवं परिवर्तन की आवश्यकता के सम्बन्ध में सुझाव देना।

शोध विधिः

शोध एक व्यापक प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत प्रारम्भ से लेकर अन्तिम रिपोर्ट तैयार करने तक विभिन्न चरणों से गुजरना पड़ता है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को सुचारू एवं क्रमबद्ध रूप से आगे बढ़ाने के लिये अन्वेषणात्मक पद्धति को प्रयोग में लाया जायेगा। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के समंको का प्रयोग किया गया है, परन्तु अन्वेषणात्मक कार्य में प्राथमिक समंकों को आधार

बनाकर अध्ययन विषय को वास्तविक रूप देने का प्रयास किया गया है। समंको का संकलन उत्तर प्रदेश में विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत बाल श्रमिकों से साक्षात्कार के माध्यम से किया गया है। समंकों के संकलन हेतु शोधकर्ती द्वारा निम्न सात क्षेत्रों में कार्यरत बाल श्रमिकों को आधार बनाया गया है ये सात क्षेत्र होटल एवं रेस्टोरेण्ट, घरेलू सेवायें, कृषि, दुकानें एवं अन्य लघु उद्योग, घरेलू उद्योग तथा कूड़ा बीनने के कार्य में संलग्न बालकों तथा भीख मांगने वाले बच्चों पर आधारित हैं।

प्राथमिक समंकों के संकलन के लिये उपुर्यक्त लक्षित समूहों में कार्यरत बाल श्रमिकों से सम्बन्धित अनुसूची का निर्माण करके उनकी समस्या से सम्बन्धित जानकारियाँ प्राप्त करने का प्रयास किया गया है। इन जानकारियों को प्राप्त करने के लिये साक्षात्कार की विधि को अपनाया गया है। समंकों के संकलन के लिये 14 वर्ष से कम आयु के बाल श्रमिकों को ही चुना गया है। बाल श्रमिकों की विद्यमानता वाले क्षेत्रों में चल रही विभिन्न योजनाओं का भी अध्ययन किया गया है ताकि सम्बन्धित विषय की जानकारी प्राप्त करने में मदद मिल सके। इस क्षेत्र से सम्बन्धित अन्य लोगों से भी विचार–विमर्श करके जानकारियाँ प्राप्त करने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में द्वितीयक समंकों का भी आवश्यकतानुसार प्रयोग किया गय है। द्वितीय समंक प्रकाशित स्रोतों जैसे अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशन, सरकारी प्रकाशन, अर्द्धसरकारी संस्थाओं के प्रकाशन, आयोग व समितियों की रिपोर्टें, अध्ययन विषय पर हुये पूर्व अनुसंधान तथा विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं एवं संगठनों द्वारा प्रकाशित आंकड़ों के आधार पर किया गया है। इसके अलावा अप्रकाशित प्रलेखों (सरकारी रिकार्ड एवं विभाग के शोध प्रतिवेदन) को भी आंकड़े एकत्रित करने में प्रयोग किया गया है।

द्वितीय अध्याय

बाल श्रमिकों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति

प्रस्तुत अध्याय का प्रमुख उद्देश्य उत्तर प्रदेश में विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत बाल श्रमिकों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये से सर्वेक्षण तकनीकी का प्रयोग किया गया है। विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत बाल श्रमिकों से व्यक्तिगत रूप से प्रश्नावली भरवाकर आंकड़ों का संकलन किया गया है। आयु तथा वर्गानुसार बाल श्रमिकों की स्थिति, उनका पारिवारिक स्तर, शिक्षा एवं स्वास्थ्य का स्तर, आवास का स्तर, शिक्षा का स्तर तथा अन्य सामाजिक सुविधाओं के स्तर आदि से सम्बन्धित प्रश्नों को प्रश्नावली में सम्मिलित किया गया है ताकि बाल श्रमिकों की समस्याओं का व्यवस्थित प्रस्तुतीकरण किया जा सके तथा उन समस्याओं के स्थायी समाधान हेतु सुझाव प्रस्तुत किये जा सकें। संकलित आंकड़े विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत 400 बाल श्रमिकों द्वारा भरवाई गई प्रश्नावलियों एवं व्यक्तिगत साक्षात्कार पर आधारित हैं।

प्रस्तुत अध्ययन प्रमुख रूप से अलीगढ़ के ताला उद्योग, फिरोजाबाद के चूड़ी उद्योग, वाराणसी एवं भदोही के कालीन उद्योग, लखनऊ के चिकन उद्योग एवं विभिन्न शहरों एवं ग्रामीण क्षेत्रों में दुकानों, रेस्टोरेण्टों एवं होटलों तथा रिपेयरिंग की दुकानों में कार्यरत बाल श्रमिकों पर आधारित है। इन विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत अधिकांश बाल श्रमिक प्रदेश के विभिन्न गांवों एवं कस्बों में निवास करने वाले वे बच्चे हैं जिनके माता–पिता या तो कृषक हैं या कृषि श्रमिक तथा औद्योगिक श्रमिक हैं। कुछ परिवार अपना स्वयं का कोई लघु व्यवसाय कर रहे हैं। प्रस्तुत अध्ययन में पाया गया कि इनमें से अधिकांश परिवार निर्धनता में जीवन यापन कर रहे हैं। ग्रामीण परिवेश में रहने वाले इन परिवारों में शिक्षा के प्रति जागरूकता का सर्वथा अभाव दृष्टिगत होता है। अशिक्षा, परिवारों में सदस्यों की अधिक संख्या तथा

वर्ष भर कार्य की उपलब्धता न होने के कारण ये परिवार निर्धनता में जीवन यापन करने को विवश हैं तथा इसी विवशता के कारण इनके बालकों को पारिवारिक आय में वृद्धि करने के लिये श्रम बाजार में प्रवेश करना पड़ता है। बालकों के कार्य में प्रवेश करने के अन्य प्रमुख कारण शैक्षिक सुविधाओं की अनुपलब्धता, मनोरंजन के साधनों की कमी तथा आवश्यक सुविधाओं का अभाव आदि हैं। बाल श्रमिकों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति का अध्ययन हम यहाँ विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत प्रस्तुत कर रहे हैं।

आयु तथा वर्गानुसार बाल श्रम की स्थितिः

विभिन्न व्यवसायों एवं कार्यो में संलग्न 14 वर्ष से कम आयु के बाल श्रमिकों को प्रस्तुत अध्ययन का आधार मानकर आंकड़ों का संकलन किया गया है। आयु के अनुसार बाल श्रमिकों का प्रतिशत वितरण तालिका संख्या–1.6 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका–1.6

बाल श्रमिकों का आयु के अनुसार प्रतिशत वितरण

क्रम संख्या	आयु वर्ग	बाल श्रमिकों की संख्या	प्रतिशत
1.	4–6	10	2.5
2.	6–8	36	9.0
3.	8–10	60	15.0
4.	10–12	170	42.5
5.	12–14	124	31.0
	कुल	**400.00**	**100.00**

तालिकां के अनुसार बाल श्रमिकों का सर्वाधिक 42.5 प्रतिशत भाग 10 से 12 वर्ष के बालकों का है जबकि 31.0 प्रतिशत बाल श्रमिक 12 से 14 आयु वर्ग के है। अध्ययन में 8 से 10 आयु वर्ग के बालकों का प्रतिशत भी 15 पाया गया जो कि मुख्य रूप से वयस्क श्रमिकों के सहायक के रूप में कार्य कर रहे थे। ये बाल श्रमिक अधिकतर कृषि कार्यों एवं लघु व्यवसायों में कार्यरत थे। अध्ययन में आश्चर्यजनक रूप से अत्यन्त कम आयु वर्ग के बाल श्रमिकों की उपस्थिति दर्ज की गई। 14 से 8 आयु वर्ग के ये बाल श्रमिक मुख्यतः होटल, रेस्टोरेण्ट एवं दुकानों में कार्य करते हुये पाये गये। इनमें से कुछ बाल श्रमिक बाजारों एवं सड़कों पर छोटा–मोटा सामान बेंचकर आय अर्जित करते हुये पाये गये।

बाल श्रमिकों के धर्म के आधार पर प्रतिशत वितरण को देखने से स्पष्ट होता है कि हिन्दू धर्म को मानने वाले श्रमिकों का प्रतिशत सर्वाधिक था। तालिका संख्या 1.7 उत्तरदाताओं के धर्म के आधार पर प्रतिशत वितरण को व्यक्त करती है।

तालिका संख्या–1.7

बाल श्रमिकों का धर्म के आधार पर प्रतिशत वितरण

क्रम संख्या	धर्म	बाल श्रमिकों की संख्या	प्रतिशत
1.	हिन्दू	254	63.5
2.	मुस्लिम	132	33.0
3.	सिख	02	0.5
4.	ईसाई	08	2.0
5.	अन्य	04	1.0
	कुल	**400.00**	**100.00**

तालिका से स्पष्ट है कि विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत बाल श्रमिकों में हिन्दू धर्म के श्रमिकों का प्रतिशत सर्वाधिक 63.5 प्रतिशत है। 33.0 प्रतिशत बाल श्रमिक मुस्लिम धर्म को मानने वाले तथा 2 प्रतिशत बाल श्रमिक ईसाई धर्म को मानने वाले हैं। सिख धर्म के श्रमिकों का प्रतिशत सबसे कम 0.5 प्रतिशत है जबकि 1.0 प्रतिशत श्रमिक अन्य धर्मों को मानने वाले हैं।

हिन्दू एवं मुस्लिम धर्म के श्रमिकों में एक बड़ा प्रतिशत ऐसे श्रमिकों का पाया गया जो कि अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं अन्य पिछड़ा वर्ग से सम्बन्धित थे। समाज के इन वर्गों के अधिकांश परिवार निर्धनता एवं पिछड़ेपन में जीवन यापन कर रहे हैं। जाति के आधार पर बाल श्रमिकों का प्रतिशत वितरण तालिका संख्या–1.8 में व्यक्त किया गया है।

तालिका संख्या–1.8

बाल श्रमिकों का जाति के आधार पर प्रतिशत वितरण

क्रम संख्या	जाति	बाल श्रमिकों की संख्या	प्रतिशत
1.	अनुसूचित जाति	194	48.5
2.	अनुसूचित जनजाति	06	1.5
3.	पिछड़ा वर्ग	154	38.5
4.	सामान्य वर्ग	46	11.5
	कुल	**400.00**	**100.00**

तालिका से स्पष्ट है कि अधिकांश बाल श्रमिक अनुसूचित जाति एवं पिछड़ा वर्ग से सम्बन्धित हैं। अनुसूचित जाति के बाल श्रमिकों का प्रतिशत सर्वाधिक

48.5 तथा अन्य पिछड़ा वर्ग के श्रमिकों का प्रतिशत 38.5 है। 11.5 प्रतिशत बाल श्रमिक सामान्य वर्ग के हैं।

विभिन्न उद्योगों एवं व्यवसायों में कार्यरत बाल श्रमिकों के जन्म के स्थान पर प्रतिशत वितरण को देखने से ज्ञात होता है कि अधिकांश श्रमिक कार्य की तलाश में विभिन्न नगरीय क्षेत्रों में प्रवास करके आते हैं। ये अधिकांश बाल श्रमिक ग्रामीण क्षेत्रों से सम्बन्धित होते हैं जहाँ पर रोजगार सुविधाओं का सर्वथा अभाव दृष्टिगत होता है। प्रस्तुत अध्ययन में विभिन्न जनपदों में स्थित उद्योगों एवं व्यवसायों में कार्यरत बाल श्रमिकों के जन्म स्थान के आधार पर प्रतिशत वितरण को तालिका संख्या 1.9 में व्यक्त किया गया हैं :–

तालिका संख्या – 1.9

बाल श्रमिकों का जन्म स्थान के आधार पर प्रतिशत वितरण

क्रम संख्या	बाल श्रमिकों की प्रकृति	बाल श्रमिकों की संख्या	प्रतिशत
1.	स्थानीय निवासीं	107	26.75
2.	नव प्रवासी	131	32.75
3.	स्थाई निवासी	162	40.50
	कुल	**400**	**100.00**

तालिका को देखने से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 40.50 प्रतिशत बाल श्रमिक अपने जन्म स्थान को छोड़कर कार्य स्थल वाले स्थान पर आकर स्थाई रूप से बस गये हैं। 32.75 प्रतिशत बाल श्रमिक ऐसे पाये गये जो कार्य की तलाश में ऐसे स्थानों पर प्रवास करके कुछ समय पूर्व ही आये हैं। अध्ययन में 26.75

प्रतिशत बाल श्रमिक ऐसे पाये गये जो वहीं के स्थानीय निवासी थे जहाँ पर वे कार्य कर रहे हैं।

इन श्रमिकों से अपने जन्म स्थान को छोड़कर कार्य स्थल की ओर प्रवास करने का कारण पूँछने पर ज्ञात होता है कि अधिकांश बाल श्रमिक कार्य की अनुपलब्धता तथा निर्धनता के कारण अपने जन्म स्थान को छोड़कर कार्य की तलाश में कार्य स्थल वाले स्थानों पर आने को विवश होते है। तालिका संख्या 2.0 श्रमिकों की प्रवासी प्रवृत्ति के कारणों को व्यक्त करती है।

तालिका संख्या – 2.0

प्रवासी प्रवृत्ति के कारणों का प्रतिशत वितरण

क्र0सं0	कारण	परिवारों की संख्या	प्रतिशत
1.	निर्धनता	137	34.25
2.	माता–पिता की मृत्यु	26	6.50
3.	माता या पिता का बुरा व्यवहार	21	5.25
4.	कार्य की अनुपलब्धता	197	49.25
5.	अन्य	19	4.75
	कुल	**400.00**	**100.00**

तालिका के अनुसार लगभग 49.25 प्रतिशत बाल श्रमिकों ने प्रवासी प्रवृत्ति का कारण जन्म स्थान में कार्य की अनुपलब्धता को बताया जबकि 34.25 प्रतिशत बाल श्रमिकों ने पारिवारिक निर्धनता को प्रवासी प्रवृत्ति का कारण माना। 6.5 प्रतिशत बाल श्रमिक इस लिये प्रवास कर जाते हैं क्योंकि उनके माता या पिता अथवा दोनो की मृत्यु हो गई तथा परिवार में या तो अन्य सदस्यों का व्यवहार

दुर्भावनापूर्ण था या फिर आय अर्जित करने वाले सदस्यों का न होना। 5.25 प्रतिशत बाल श्रमिक ऐसे भी थे जो माता–पिता के अपने प्रति बुरे वर्ताव के कारण अपने घर से भाग कर अन्य क्षेत्रों में कार्य करने लगे तथा कार्य स्थल को ही उन्होने अपना निवास स्थान बना लिया।

कम आयु में रोजगार में बालकों के प्रवेश का मुख्य कारण निर्धनता रहा है। इस तथ्य की पुष्टि बाल श्रमिकों पर आधारित विभिन्न अध्ययनों में भी हुई है। प्रस्तुत अध्ययन में भी इस आधार पर आंकड़ों का संकलन किया गया है। तालिका संख्या 2.1 में कम आयु में रोजगार में प्रवेश के कारणों के प्रतिशत वितरण को व्यक्त किया गया है। अधिकांश उत्तरदाता बाल श्रमिकों ने कम आयु में कार्य में प्रवेश का कारण निर्धनता बताया। पारिवारिक निर्धनता के कारण लगभग 48.5 प्रतिशत बालक परिवार के आर्थिक सहयोग हेतु कार्य में प्रवेश करते हैं। 21.5 प्रतिशत बाल श्रमिकों ने रोजगार में प्रवेश का कारण पढ़ाई में मन न लगना बताया जबकि 15.5 प्रतिशत बाल श्रमिक इस कारण श्रम बाजार में प्रवेश करते हैं क्योंकि उनके परिवार में सदस्यों की संख्या अधिक है जिस कारण अभिभावकों के लिये उनकी आवश्यकताओं को पूरा करना मुश्किल होता है। माता–पिता के बुरे बर्ताव को कार्य में प्रवेश का कारण मानने वाले बाल श्रमिकों का प्रतिशत 8.0 हैं, जबकि बहुत कम बाल श्रमिक ऐसे पाये गये जो माता या पिता या माता–पिता दोनों की मृत्यु हो जाने के कारण श्रम बाजार में प्रवेश करते हैं।

तालिका संख्या–2.1

कम आयु में कार्य में प्रवेश के कारणों का प्रतिशत वितरण

क्रम संख्या	कारण	बाल श्रमिकों की संख्या	प्रतिशत
1.	निर्धनता	194	48.5
2.	परिवार का बड़ा आकार	62	15.5
3.	पिता की मृत्यु	12	3.0
4.	माता की मृत्यु	10	2.5
5.	माता–पिता दोनों की मृत्यु	04	1.0
6.	पढ़ाई में मन न लगना	86	21.5
7.	माता–पिता का बुरा बर्ताव	32	8.0
	कुल	**400.00**	**100.00**

उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि निर्धनता एवं पिछड़े सामाजिक पर्यावरण की वजह से निम्न वर्ग के परिवारों में बाल श्रमिकों की सर्वाधिक संख्या विद्यमान है जो विकास के अवसरों से वंचित रहकर कम आयु में परिवार की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने एवं जीवन यापन के एक निश्चित स्तर को बनाये रखने के लिये श्रम बाजार में प्रवेश करने के लिये विवश होते हैं।

बाल श्रमिकों का पारिवारिक स्तरः

अध्ययन क्षेत्र में विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत बाल श्रमिकों की पारिवारिक स्थिति का पता उनके परिवार के आकार, रहन–सहन के स्तर, विभिन्न मदों पर किये जाने वाले मासिक उपभोग व्यय आदि को देखकर लगाया जा सकता है। अधिकांश बाल श्रमिक संयुक्त परिवारों में निवास करने वाले हैं। तालिका संख्या

2.2 परिवारों के प्रकार को व्यक्त करती है। 400 परिवारों के सर्वेक्षण के दौरान यह पाया गया कि 258 बाल श्रमिक संयुक्त परिवारों में निवास कर रहे हैं जोकि कुल परिवारों का 64.5 प्रतिशत है। इन परिवार में माता–पिता, भाई–बहन, बाबा–दादी एक साथ एक ही परिवार में निवास करते हैं जबकि आय अर्जित करने वाले व्यक्तियों की संख्या या तो मात्र एक होती है या परिरवार के कई सदस्य कृषि कार्य में हाथ बँटाते हैं। केवल 142 (35.5 प्रतिशत) परिवार ही ऐसे थे जो एकल परिवार थे। ये परिवार या तो प्रवास करके कार्य स्थल में रह रहे थे या माता–पिता की मृत्यु के बाद अपने बच्चों के साथ निवास कर रहे थे।

तालिका संख्या–2.2

परिवारों के प्रकार का प्रतिशत वितरण

क्रम संख्या	परिवारों के प्रकार	परिवारों की संख्या	प्रतिशत
1.	एकल परिवार	142	35.5
2.	संयुक्त परिवार	258	64.5
	कुल	**400.00**	**100.00**

यदि हम परिवार में सदस्यों की संख्या पर दृष्टिपात करें तो यह स्पष्ट होता है कि अधिकांश परिवार बड़े आकार के हैं जिनमें सदस्यों की संख्या 6 से 8 या कहीं–कहीं पर उससे भी अधिक है। तालिका संख्या 2.3 परिवारों की सदस्य संख्या के प्रतिशत वितरण को व्यक्त करती है।

तालिका संख्या–2.3

परिवार के सदस्यों की संख्या का प्रतिशत वितरण

क्रम संख्या	सदस्यों की संख्या	बाल श्रमिकों की संख्या	प्रतिशत
1.	2–4	76	19.0
2.	4–6	134	33.5
3.	6–8	164	41.0
4.	8 से अधिक	26	6.5
	कुल	**400.00**	**100.00**

अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि सर्वाधिक 41 प्रतिशत परिवारों में सदस्य संख्या 6 से 8 तक थी जबकि 4 से 6 सदस्य संख्या वाले परिवारों का प्रतिशत 33.5 था। 19 प्रतिशत परिवार ही ऐसे पाये गये जिनमें सदस्य संख्या 2 से 4 के मध्य थी जबकि 6.5 प्रतिशत परिवारों में तो 8 से अधिक संख्या दृष्टिगत होती है। उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि बाल श्रमिक अधिकांशतः बड़े आकार के परिवारों से सम्बन्धित हैं। परिवार में सदस्यों की संख्या अधिक होने तथा आय का स्तर निम्न होने के कारण ये बालक शारीरिक एवं मानसिक विकास के लिये आवश्यक संसाधनों से वंचित रहते हैं तथा परिवार के आर्थिक सहयोग के लिये श्रम बाजार में प्रवेश करना उनकी विवशता होती है।

निर्धन परिवार के इन बालकों के शिक्षा एवं मनोरंजन के साधनों से वंचित रहने का प्रमुख कारण निम्न पारिवारिक आय होती है। अर्जित आय का एक बड़ा भाग भोजन एवं ईधन तथा अन्य आवश्यकताओं पर व्यय किया जाता है। विभिन्न मदों पर इन परिवारों द्वारा किये जाने वाले व्यय को तालिका संख्या 2.4 द्वारा व्यक्त किया जा सकता है।

तालिका संख्या – 2.4

विभिन्न मदों पर पारिवारिक व्यय का प्रतिशत वितरण

क्रम संख्या	मद	प्रतिशत
1.	भोजन एवं ईधन	63.51
2.	शिक्षा	08.66
3.	मकान एवं कपड़े	11.78
4.	स्वास्थ्य एवं मनोरंजन	6.47
5.	अन्य	9.58
	कुल	**100.00**

तालिका को देखने से स्पष्ट होता है कि ये निर्धन परिवार अपनी अर्जित आय का एक बड़ा हिस्सा (63.51 प्रतिशत) भोजन एवं ईधन पर व्यय कर देते हैं क्योंकि अधिकांश परिवारों में सदस्यों की संख्या अधिक थी। अपनी अर्जित आय का 11.78 प्रतिशत भाग इन परिवारों द्वारा मकान एवं कपड़ों पर तथा 6.47 प्रतिशत भाग स्वास्थ्य एवं मनोरंजन पर व्यय किया जाता है। शिक्षा पर किया जाने वाला व्यय सबसे कम (08.66 प्रतिशत) है जबकि अन्य मदों पर 9.58 प्रतिशत व्यय किया जाता है। इस स्थिति से स्पष्ट होता है कि निम्न आय स्तर एवं बड़े परिवारों के कारण ये परिवार अपने बालकों को शिक्षा, स्वास्थ्य एवं मनोरंजन सम्बन्धी सुविधायें उपलब्ध कराने में असमर्थ होते हैं। शिक्षा एवं विकास के अन्य संसाधनों की अनुपलब्धता बालकों को मजदूरी करने के लिये विवश करती हैं तथा भविष्य में विकास की सम्भावनाओं को भी क्षीण कर देती है।

शिक्षा तथा स्वास्थ्य का स्तरः

वर्तमान समय में देश की लगभग 26 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या निर्धनता की रेखा से नीचे जीवन यापन कर रही है और यही कारण है कि अभिभावकों के साथ–साथ उनके बच्चों को भी जीवन यापन के लिये काम करना पड़ता है। तीव्र गति से बढ़ रही जनसंख्या और उस अनुपात में रोजगार सुविधाओं के अभाव के फलस्वरूप निर्धन अभिभावक अन्ततः अपने बच्चों को स्कूल न भेजकर काम पर भेजने के लिये विवश होते हैं क्योंकि उनके लिये बच्चों के शारीरिक और मानसिक विकास से अधिक उनके भरण–पोषण की आवश्यकता होती है। कम आयु में रोजगार में संलग्न होने के कारण ये बाल श्रमिक विभिन्न शारीरिक एवं मानसिक व्याधियों से ग्रसित हो जाते हैं जो उनके भावी जीवन के लिये अत्यन्त हानिकारक होता है।

तालिका संख्या–2.5

बाल श्रमिकों का शिक्षा के आधार पर प्रतिशत वितरण

क्रम संख्या	शिक्षा का स्तर	बाल श्रमिकों की संख्या	प्रतिशत
1.	प्राइमरी	122	30.5
2.	सेकेण्डरी	76	19.0
3.	विद्यालय जाते हैं	96	24.0
4.	अशिक्षित	106	26.5
	कुल	**400.00**	**100.00**

बाल श्रमिकों के शिक्षा के स्तर पर आधारित तालिका संख्या 2.5 को देखने से स्पष्ट होता है कि इन श्रमिकों का सर्वाधिक बड़ा प्रतिशत या तो अशिक्षित है और या उन्हें प्राथमिक शिक्षा के बाद अपनी पढ़ाई को बीच में छोड़कर रोजगार

में संलग्न होना पड़ा है। सर्वाधिक 30.5 प्रतिशत बाल श्रमिकों ने बताया कि उन्होंने प्राइमरी शिक्षा सरकारी स्कूलों में प्राप्त करने के बाद पढ़ाई छोड़ दी। 26.5 प्रतिशत बाल श्रमिक ऐसे थे जिन्होंने किसी भी प्रकार की शिक्षा प्राप्त नहीं की जबकि केवल 19.0 प्रतिशत बाल श्रमिक ऐसे थे जिन्होंने सेकेण्डरी स्तर की शिक्षा प्राप्त की। अध्ययन में 24.0 प्रतिशत बाल श्रमिक ऐसे भी पाये गये जो कार्य के साथ–साथ अपनी पढ़ाई भी कर रहे थे। ये बाल श्रमिक कार्य में जाने से पूर्व विद्यालय जाते हैं। इन बाल श्रमिकों से जब पढ़ाई बीच में छोड़ने का कारण जानने का प्रयास किया गया तो बड़ी संख्या में इन्होंने इसका कारण या तो पढ़ाई में मन न लगना या व्यापक निर्धनता को माना। तालिका संख्या 2.5 में बाल श्रमिकों द्वारा पढ़ाई बीच में छोड़ने के कारणों का प्रतिशत वितरण व्यक्त किया गया है।

तालिका संख्या–2.6

पढ़ाई बीच में छोड़ने के कारणों का प्रतिशत वितरण

क्रम संख्या	कारण	बाल श्रमिकों की संख्या	प्रतिशत
1.	निर्धनता	54	35.53
2.	माता या पिता अथवा दोनों की मृत्यु	12	7.89
3.	पढ़ाई में मन न लगना	72	47.37
4.	अध्यापकों का दुर्व्यवहार	11	7.24
5.	अन्य	3	1.97
	कुल	**152.00**	**100.00**

तालिका से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 47.37 प्रतिशत बाल श्रमिकों ने पढ़ाई बीच में छोड़ने का कारण पढ़ाई में मन न लगना बताया। सामाजिक पिछड़ेपन एवं विकास संसाधनों के अभाव तथा माता–पिता की अशिक्षा के कारण उनका पढ़ाई में मन न लगना उचित ही प्रतीत होता है। 35.53 प्रतिशत बाल

श्रमिकों ने पढ़ाई छोड़ने का कारण व्यापक निर्धनता को माना जबकि 7.89 प्रतिशत बाल श्रमिकों ने माता या पिता अथवा दोनों की मृत्यु के कारण परिवार को आर्थिक सहयोग देने के लिये पढ़ाई का त्याग करके रोजगार में प्रवेश की विवशता को इसका कारण माना। 7.24 प्रतिशत बाल श्रमिक ऐसे भी थे जिन्होंने विद्यालय में अध्यापकों द्वारा की जाने वाली मारपीट एवं दुर्व्यवहार को इसका कारण माना जबकि 1.97 प्रतिशत बाल श्रमिक कुछ अन्य कारणों को इसका कारण मानते हैं। तालिका संख्या 2.6 में बाल श्रमिकों द्वारा पढ़ाई बीच में छोड़कर कार्य में संलग्न होने के कारणों के प्रतिशत वितरण को प्रदर्शित किया गया है।

निर्धनता एवं निम्न आय स्तर के परिणामस्वरूप अधिकांश बाल श्रमिक कुपोषण के शिकार होते हैं। कार्य के अधिक घण्टे तथा अमानवीय कार्य दशाओं में काम करते रहने के कारण ये श्रमिक प्रायः विभिन्न प्रकार की बीमारियों से ग्रस्त रहते हैं। तालिका संख्या 2.7 बाल श्रमिकों के स्वास्थ्य स्तर को व्यक्त करती है।

तालिका संख्या–2.7
बाल श्रमिकों का स्वास्थ्य के स्तर के आधार पर प्रतिशत वितरण

क्रम संख्या	बीमारियाँ	बाल श्रमिकों की संख्या	प्रतिशत
1.	कुपोषण	116	29.0
2.	हैजा	34	8.5
3.	श्वांस सम्बन्धी बीमारियाँ	56	14.0
4.	त्वचा सम्बन्धी बीमारियाँ	102	25.5
5.	मलेरिया एवं अन्य बुखार एवं खाँसी	82	20.5
6.	अन्य	10	2.5
	कुल	**400.00**	**100.00**

तालिका से स्पष्ट होता है कि विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत बाल श्रमिकों का सर्वाधिक बड़ा प्रतिशत (29.0 प्रतिशत) सम्पूर्ण दिन के कठिन परिश्रम के परिणामस्वरूप आवश्यक कैलोरी की मात्रा को प्राप्त करने में असमर्थ रहते हैं क्योंकि उनका आय स्तर अत्यधिक निम्न होता है। 25.5 प्रतिशत बाल श्रमिक विभिन्न प्रकार की त्वचा सम्बन्धी बीमारियों से तथा 14.0 प्रतिशत बाल श्रमिक श्वांस सम्बन्धी बीमारियों से ग्रसित रहते हैं। 20.5 प्रतिशत बाल श्रमिक प्रायः खाँसी एवं बुखार से पीड़ित रहते हैं जिसका प्रमुख कारण कार्यस्थल पर पर्याप्त हवा एवं प्रकाश का अभाव एवं धूल–धुयें से युक्त प्रदूषित वातावरण होता है। कार्यस्थल एवं श्रमिक बस्तियों में जहाँ ये श्रमिक प्रायः निवास करते हैं शुद्ध जल का अभाव होता है तथा आस–पास का वातावरण भी गन्दगी से युक्त होता है। यही कारण है कि लगभग 8.5 प्रतिशत बाल श्रमिक हैजा जैसी संक्रामक बीमारियों से ग्रस्त रहते हैं। जहाँ तक चिकित्सा सुविधाओं का प्रश्न है तो जहाँ ये श्रमिक निवास करते हैं वहाँ पर या तो पर्याप्त चिकित्सा व्यवस्थाओं का अभाव दृष्टिगत होता है या निम्न आय स्तर के कारण ये बाल श्रमिक इन बीमारियों का समुचित इलाज करा पाने में असमर्थ होते हैं। चिकित्सा पंद्धति के आधार पर प्रतिशत वितरण को तालिका संख्या 2.8 के द्वारा व्यक्त किया जा सकता है।

तालिका संख्या–2.8

चिकित्सा पद्धति के आधार पर प्रतिशत वितरण

क्रम संख्या	चिकित्सा पद्धति	बाल श्रमिकों की संख्या	प्रतिशत
1.	प्रशिक्षित चिकित्सक	42	10.5
2.	अप्रशिक्षित (झोलाछाप) चिकित्सक	142	35.5
3.	वैद्य एवं झाड़फूंक वाले	130	32.5
4.	घरेलू चिकित्सा	86	21.5
	कुल	**400.00**	**100.00**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि अधिकांश बाल श्रमिक बीमारियों से ग्रस्त होने पर या तो अप्रशिक्षित चिकित्सकों से इलाज कराते हैं या वैद्यों एवं झाड़फूंक करने वाले व्यक्तियों से सम्पर्क करते हैं। अप्रशिक्षित चिकित्सकों से इलाज कराने वाले बाल श्रमिकों का प्रतिशत 35.5 तथा वैद्यों एवं झाड़फूंक आदि से अपना इलाज कराने वाले श्रमिकों का प्रतिशत 32.5 पाया गया। अशिक्षा के कारण ये श्रमिक बीमारियों का समुचित इलाज कराने के प्रति या तो जागरूक नहीं होते और या तो निम्न आय स्तर के कारण समुचित चिकित्सा इनकी पहुँच से बाहर होती है। 21.5 प्रतिशत बाल श्रमिक ऐसे पाये गये जो अपनी बीमारियों का इलाज स्वयं ही प्रचलित घरेलू चिकित्सा उपायों से करते हैं। केवल 10.5 प्रतिशत बाल श्रमिकों ने ही यह बताया कि वे अपना इलाज या तो प्रशिक्षित चिकित्सकों से कराते हैं या सरकारी अस्पतालों के प्रशिक्षित चिकित्सकों से सम्पर्क करते हैं।

परिवार में रोजगार का स्तरः

पूर्व में व्यक्त किया जा चुका है कि अधिकांश परिवारं निर्धनता में जीवन यापन कर रहे हैं जिसका प्रमुख कारण परिवारों का बड़ा आकार, अशिक्षा एवं रोजगार के साधनों का अभाव है। कृषि कार्यो में संलग्न रहने वाले परिवारों के पास वर्ष भर कार्य की उपलब्धता नहीं रहती है। वर्ष के 4 से 5 महीने उनके पास किसी प्रकार का कार्य नहीं होता तथा वे अपना खाली समय खाली बैठकर व्यतीत करते हैं। ग्रामीण परिक्षेत्रों में रोजगार के साधनों का अभाव उन्हें आलसी बना देता है तथा कृषि से प्राप्त होने वाली आय से ही उन्हें वर्ष भर अपने बड़े परिवारों का भरण–पोषण करना होता है। कृषि श्रमिक या औद्योगिक श्रमिक के रूप में कार्य करने वाले व्यक्तियों को वैसे तो सम्पूर्ण वर्ष कार्य उपलब्ध रहता है परन्तु उनका आय स्तर अत्यन्त निम्न होता है। अपनी निम्न आय से वे अपने परिवारों की

आवश्यक आवश्यकताओं को भी ठीक प्रकार से पूरा करने में असमर्थ होते हैं। अपना स्वयं का लघु व्यवसाय या दुकान आदि करने वाले व्यक्तियों की आय भी पिछड़े सामाजिक एवं आर्थिक पर्यावरण की वजह से संतोषजनक नहीं होती है। इन परिस्थितियों में विकास के संसाधनों की उपलब्धता न के बराबर होती है तथा बच्चों को परिवार के आर्थिक सहयोग के लिये रोजगार की तलाश में श्रम बाजार में प्रवेश करना पड़ता है। अधिकांश परिवारों में आय अर्जित करने वाले व्यक्तियों की संख्या प्रायः एक ही होती है। तालिका संख्या 2.9 विभिन्न परिवारों में आय अर्जित करने वाले व्यक्तियों की संख्या का प्रतिशत वितरण व्यक्त करती है।

तालिका संख्या–2.9

परिवार में आय अर्जित करने वाले व्यक्तियों की संख्या का प्रतिशत वितरण

क्रम संख्या	व्यक्तियों की संख्या	परिवारों की संख्या	प्रतिशत
1.	0–1	278	69.5
2.	1–2	86	21.5
3.	2 से अधिक	36	9.0
	कुल	**400.00**	**100.00**

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि लगभग 69.5 प्रतिशत परिवारों में केवल एक व्यक्ति ही रोजगार में संलग्न है जिसके ऊपर अपने पूरे परिवार के भरण–पोषण का भार है। 21.5 प्रतिशत परिवारों में आय अर्जित करने वाले व्यक्तियों की संख्या दो है। केवल 9.0 प्रतिशत परिवार ही ऐसे हैं जिनमें आय अर्जित करने वाले व्यक्तियों की संख्या दो से अधिक है।

बाल श्रमिकों के माता–पिता के व्यवसाय के आधार पर प्रतिशत वितरण को तालिका संख्या 3.0 द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। तालिका से स्पष्ट

होता है कि लगभग आधे से अधिक परिवारों में जीविका का साधन शारीरिक श्रम है। ये व्यक्ति या तो कृषि श्रमिक है या औद्योगिक श्रमिक के रूप में कार्य कर रहे हैं।

तालिका संख्या–3.0
परिवार में व्यवसाय की स्थिति का प्रतिशत वितरण

क्रम संख्या	व्यवसाय	परिवारों की संख्या	प्रतिशत
1.	कृषि	54	13.5
2.	कृषि श्रमिक	28	7.0
3.	औद्योगिक श्रमिक	196	49.0
4.	वाहन/रिक्शा चालक	44	11.0
5.	चाय/पान या रिपेयरिंग की दुकान	26	6.5
6.	अन्य*	52	13.0
	कुल	**400.00**	**100.00**

*घरेलू नौकर, बढ़ई, धोबी, सिक्योरिटी गार्ड, सड़कों पर सामान बेंचने वाले, निर्माण कार्यो में मजदूरी करने वाले।

तालिका को देखने से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 49 प्रतिशत परिवारों में जीविकोपार्जन का साधन औद्योगिक श्रम है। ये श्रमिक लघु औद्योगिक

इकाइयों एवं फैक्ट्रियों में श्रमिक के रूप में कार्य कर रहे हैं। लगभग 20 प्रतिशत परिवारों में जीविकोपार्जन का साधन कृषि है जिनमें से 13.5 प्रतिशत परिवार अपनी भूमि पर कृषक के रूप में कार्य कर रहे हैं जबकि 7.0 प्रतिशत परिवार ऐसे हैं जो बड़े भू–स्वामियों अथवा जमींदारों के खेतों में कृषि श्रमिक के रूप में कार्य कर रहे हैं। 11.0 प्रतिशत परिवार ऐसे पाये गये जिनके परिवार में आय अर्जित करने वाला व्यक्ति कोई वाहन या रिक्शा चलाकर आय अर्जित करता है। अध्ययन के दौरान सिर्फ 6.5 प्रतिशत परिवार ही ऐसे पाये गये जो अपना स्वयं का कोई लघु व्यवसाय कर रहे थे। इन कार्यो में चाय या पान की दुकानें अथवा दोपहिया वाहनों की रिपेयरिंग की दुकानें हैं जो सड़क के किनारे स्थित हैं। 13.0 प्रतिशत परिवार कुछ अन्य कार्यो के माध्यम से जीविकोपार्जन अर्जित करते हैं।

परिवार में आय का स्तर:

बाल श्रमिकों के परिवारों में आय के स्तर को देखने से ज्ञात होता है कि अधिकांश परिवारों की औसत मासिक आय अत्यन्त निम्न है। इस निम्न आय स्तर के कारण ही ये अधिकांश परिवार समुचित विकास के लिये आवश्यक सामाजिक संसाधनों से वंचित रहते हैं। शिक्षा के अभाव के कारण ये श्रमिक सेवायोजकों की इच्छानुसार कार्य करने को विवश होते हैं। सेवायोजक उनकी इस मजबूरी का लाभ उठाते हैं तथा निम्नतम मजदूरी पर इनसे अधिक कार्य के घण्टों तक कार्य लेते हैं। किसी भी प्रकार की योग्यता के अभाव में ये श्रमिक न तो काम छोड़कर कहीं अन्यत्र जा सकते हैं और न ही सेवायोजकों के शोषण का विरोध कर पाते हैं। निम्न आय स्तर एवं पिछड़े सामाजिक पर्यावरण के कारण इनके लिये विकास की सम्भावनायें प्रायः न के बराबर होती हैं। तालिका संख्या 3.1 परिवारों की

मासिक आय के प्रतिशत वितरण को व्यक्त करती है जिसे देखने से स्पष्ट होता है कि अधिकांश परिवारों की मासिक आय अत्यन्त निम्न है।

तालिका संख्या–3.1

परिवारों की मासिक आय का प्रतिशत वितरण

क्रम संख्या	आय स्तर	परिवारों की संख्या	प्रतिशत
1.	400–600	34	8.5
2.	600–800	58	14.5
3.	800–1000	156	39.0
4.	1000–1200	114	28.5
5.	1200–1400	22	5.5
6.	1400–1600	10	2.5
7.	1600 से अधिक	06	1.5
	कुल	**400.00**	**100.00**

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 39.0 प्रतिशत परिवारों की औसत मासिक आय 800 से 1000 रूपये के मध्य है। 28.5 प्रतिशत परिवारों की मासिक आय 1000 से 1200 रूपये के मध्य है। अध्ययन में पाया गया कि एक बड़ी संख्या ऐसे श्रमिकों की भी थी जिनकी औसत मासिक आय अत्यन्त निम्न है। 8.5 प्रतिशत परिवारों की मासिक आय 400 से 600 रूपये मासिक तथा लगभग 14.5 प्रतिशत परिवारों की आय 600 से 800 रूपये के मध्य है। बहुत कम परिवार ही ऐसे पाये गये जिनकी मासिक आय 1500 रूपये या उससे अधिक है। 2. 5 प्रतिशत परिवारों की आय 1400 से 1600 रूपये मासिक पायी गयी जबकि मात्र

1.5 प्रतिशत परिवार ही ऐसे पाये गये जिनकी औसत मासिक आय 1600 रूपये से अधिक है।

परिवार में आवास का स्तर एवं अन्य सामाजिक सुविधायें:

बाल श्रमिकों के परिवारों को आवास स्तर को देखने से ज्ञात होता है कि अधिकांश परिवारों का आवास स्तर निम्न प्रकृति का है। ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले परिवारों का आवास कच्चे मकानों के रूप में हैं जिन्हें विकास के लिये आवश्यक सामाजिक सुविधाओं जैसे बिजली, पानी, संचार साधनों तथा सीवरेज व्यवस्था की कोई उपलब्धता नहीं होती है। ग्रामीण क्षेत्रों से प्रवास कर शहरों में रोजगार की तलाश में आने वाले परिवारों का रहन–सहन का स्तर तो ग्रामीण क्षेत्रों से भी निम्न प्रकृति का है। निम्न आय स्तर के कारण ये परिवार या तो किराये के छोटे–छोटे कमरों में निवास करे हैं या अवैध रूप से नगर पालिका की जमीनों पर झुग्गी–झोपड़ियाँ बना कर रहते हैं। कभी–कभी तो किराये के इन छोटे–छोटे कमरों में कई–कई परिवार एक साथ मिलकर निवास करते हैं।

तालिका संख्या–3.2

परिवारों के आवास का स्तर

क्रम संख्या	आवास का स्वरूप	परिवारों की संख्या	प्रतिशत
1.	कच्चा घर	166	41.5
2.	पक्का घर	134	33.5
3.	झुग्गी–झोपड़ी	100	25.0
	कुल	**400.00**	**100.00**

तालिका संख्या 3.2 परिवारों की आवास स्थिति को व्यक्त करती है जिसे देखने से उनके रहन–सहन की स्थिति का स्वतः ही अनुमान लगाया जा सकता है। लगभग 41.5 प्रतिशत परिवार मिट्टी से बने हुये कच्चे मकानों में निवास करते हैं। जबकि सिर्फ 33.5 प्रतिशत परिवार ही ऐसे हैं जो पक्के मकानों में निवास करते हैं ये मकान या तो उनके स्वयं के पैतृक मकान हैं और या फिर किराये के। 25.0 प्रतिशत परिवारों के आवास झुग्गी–झोपड़ी के रूप में पाये गये। इसी प्रकार तालिका संख्या 3.0 विभिन्न परिवारों के आवास पर अधिकार की स्थिति को व्यक्त करती है। अध्ययन में पाया गया कि सर्वाधिक 52.5 प्रतिशत परिवार किराये के मकानों में निवास करते हैं ये अधिकांश परिवार ऐसे श्रमिकों के हैं जो ग्रामीण क्षेत्रों से प्रवास करके नौकरी की तलाश में शहरी क्षेत्रों में आ कर बस गये तथा किराये के कमरों में रहकर जीविकोपार्जन कर रहे हैं। 28.5 प्रतिशत परिवार अपने स्वयं के मकानों में निवास कर रहे हैं ये परिवार ग्रामीण क्षेत्रों में अपने पैतृक मकान में रहने वाले हैं। अध्ययन में यह भी पाया गया कि 19 प्रतिशत परिवार शहरी क्षेत्रों में सड़क के किनारे या अन्य जगहों पर नगर पालिका की भूमि पर अवैध रूप से झुग्गी–झोपड़ी बनाकर रह रहे हैं।

तालिका संख्या–3.3

परिवारों के आवास की स्थिति

क्रम संख्या	**आवास की स्थिति**	**परिवारों की संख्या**	**प्रतिशत**
1.	स्वयं का आवास	114	28.5
2.	किराये का आवास	210	52.5
3.	नगर पालिका की भूमि पर (अवैध)	76	19.0
	कुल	**400.00**	**100.00**

अन्य सामाजिक सुविधाओं की उपलब्धता की दृष्टि से अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि अधिकांश परिवारों को इस प्रकार के साधनों की उपलब्धता न के बराबर है। तालिका संख्या 3.4 परिवारों में बिजली की उपलब्धता की स्थिति को व्यक्त करती है।

तालिका संख्या–3.4

परिवारों में विद्युत व्यवस्था की उपलब्धता

क्रम संख्या	विद्युत व्यवस्था	परिवारों की संख्या	प्रतिशत
1.	उपलब्ध नहीं	126	31.5
2.	अवैध कनेक्शन	108	27.0
3.	किराये पर	142	35.5
4.	अधिकृत (मीटर)	24	6.0
	कुल	**400.00**	**100.00**

तालिका से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 35.5 प्रतिशत परिवार बिजली के उपयोग के बदले मकान मालिकों को किराया देते हैं। 31.5 प्रतिशत श्रमिकों ने बताया कि वे जिस स्थान पर निवास करते हैं वहाँ बिजली की कोई उपलब्धता नहीं है। ये अधिकांश परिवार या तो ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले हैं जहाँ पर बिजली की उपलब्धता नहीं हैं, या ऐसे परिवार हैं जो नगर पालिका की भूमि पर अवैध रूप से झोपड़पट्टियों में निवास करते हैं। 27 प्रतिशत श्रमिक सरकारी बिजली के खम्भों से अवैध रूप से बिजली का उपभोग करते हुये पाये गये जबकि

केवल 6 प्रतिशत परिवार ही ऐसे पाये गये जो विद्युत विभाग द्वारा लगाये गये मीटरों से बिजली का उपभोग कर रहे हैं तथा बिजली के बिलों का भुगतान करते हैं।

तालिका संख्या–3.5
परिवारों में जल की उपलब्धता की स्थिति

क्रम संख्या	जल व्यवस्था	परिवारों की संख्या	प्रतिशत
1.	हैण्डपम्प	54	13.5
2.	कुयें	114	28.5
3.	सरकारी हैण्डपम्प	186	46.5
4.	सरकारी नल	46	11.5
	कुल	**400.00**	**100.00**

परिवारों को जल की उपलब्धता की स्थिति को तालिका संख्या 3.3 के द्वारा व्यक्त किया जा सकता है। सर्वाधिक 46.5 प्रतिशत परिवारों ने बताया कि अपनी जल सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति के लिये उन्हें सार्वजनिक रूप से लगाये गये सरकारी हैण्डपम्पों पर निर्भर रहना पड़ता है। इसके लिये कभी–कभी उन्हें काफी दूर से पानी भरकर लाना पड़ता है। ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले 28.5 प्रतिशत परिवारों की जल सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति कुओं द्वारा होती है। 13.5 प्रतिशत परिवार जो कि किराये के मकानों में निवास करते हैं उनकी जल सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति मकान मालिक के व्यक्तिगत हैण्डपम्पों से होती है। केवल 11.

5 प्रतिशत परिवार ही ऐसे थे जिन्हें सरकारी नलों से आपूर्ति किये जाने वाले जल की उपलब्धता थी।

बाल श्रमिकों की दयनीय स्थिति को व्यक्त करते हुये कुछ छायाचित्र उनकी स्थिति को स्वतः ही व्यक्त कर रहे हैं :—

1. फिरोजाबाद की चूड़ी फैक्टरी में एक बाल मजदूर

2. कालीन करघे पर काम करते बच्चे

10. कालीन बनाने में लगा बच्चा

सार्वजनिक स्थान पर पान मसाला बेचता बालश्रमिक

खेतों में कार्य करते बाल श्रमिक

बाल श्रमिकों का शैक्षिक पुनर्वास

कुपोषण की समस्या से ग्रस्त बाल श्रमिक

तृतीय अध्याय

बाल श्रमिकों की मजदूरी और कार्य की दशायें

बालकों के कार्य में प्रवेश के कारणों का पता लगाने के लिये हमें निश्चित रूप से उनके सामाजिक स्तर को देखना होगा। प्राचीन समय में जब परिवार एक उत्पादन इकाई हुआ करती थी तथा कृषि मुख्य व्यवसाय था उस समय बच्चे कृषि सम्बन्धी छोटे–छोटे कार्य, पशुओं की देखभाल तथा घर के छोटे–छोटे कार्य करके अपने माता–पिता का हाथ बँटाते थे। समय व्यतीत होने के साथ औद्योगिक एवं तकनीकी क्रान्ति के फलस्वरूप अनेक समस्यायें उत्पन्न हुई जिससे मजदूरी अर्जित करने के नये क्षेत्र उत्पन्न हुये। जिसके परिणामस्वरूप बच्चों के साथ होने वाला शोषण आर्थिक और सामाजिक अध्ययन का विषय हो गया क्योंकि सेवायोजकों का प्राथमिक उद्देश्य अपने लाभ को अधिकतम करना हो गया जिस कारण वे बालकों को रोजगार में संलग्न करने लगे। इस तथ्य की पुष्टि 1933 के रॉयल कमीशन की रिपोर्ट से भी होती है।[1] यद्यपि 1969 के राष्ट्रीय श्रम कमीशन की रिपोर्ट में यह कहा गया था कि स्वतन्त्रता के बाद बाल श्रम में कमी आई है।[2] वर्तमान समय में विभिन्न अनुसंधानकर्ता द्वारा विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के ढांचे एवं विकास में संगठित तथा असंगठित क्षेत्रों की विशेषताओं एवं उनके अन्तर्गत रोजगार तथा आय की स्थितियों का अध्ययन किया गया है। इसी संदर्भ में रोजगार, मजदूरी एवं बाल श्रम की कार्यदशाओं पर भी अध्ययन हुये है। साल्जर ने सन् 1988 में कोलम्बिया में ईंट भट्ठों तथा पत्थर की खानों में काम करने वाले श्रमिकों का अध्ययन किया।[3] इन उद्योगों में बच्चों के कम उम्र में प्रवेश का मुख्य कारण निर्धनता पाया गया। खानों और ईंट भट्ठों के मालिकों ने यह रिपोर्ट दी कि ऐसे

---

[1] Report of the Royal Commission on Labour, Landon, 1933.
[2] Report of the National Commission on Labour, New Delhi, 1969, P-386.
[3] Salazar "Child Labour in Colombia – Bogta's" Quarries and Brickyards; in Combating child Labour, ILO Geneva, Edited by Assefa and J.C. Boyden, 1988., P.P. 54-55.

बच्चों का उद्देश्य स्कूल जाने से अच्छा अतिरिक्त आय प्राप्त करना है। अध्ययन में यह पाया गया कि अधिकांश बच्चे 8 वर्ष से कम उम्र में ही कार्य करना आरम्भ कर देते है और बच्चों को दिया जाने वाला पारिश्रमिक नियोक्ताओं की दया पर निर्भर होता है। ईंट भट्ठों में काम करने वाले अधिकांश बच्चों के हाथ एवं पैर के जलने व कटने से पीड़ित रहते है। अध्ययन में यह भी स्पष्ट हुआ कि इस उद्योग में कार्यरत बाल श्रमिक सिर दर्द एवं पीठ दर्द, सर्दी–गर्मी से होने वाली बीमारियों से ग्रसित होते हैं।

इन्स्टीट्यूट ऑफ इण्डस्ट्रियल रिलेशन यूनिवर्सिटी ऑफ फिलीपिन्स[1] के द्वारा किये गये अध्ययन में यह पाया गया कि कपड़े तथा लकड़ी से सम्बन्धित उद्योगों में काम करने वाले अधिकांश बाल श्रमिक विभिन्न प्रकार के रसायानों (पेन्ट, वार्निश आदि) से उत्पन्न होने वाली बीमारियों से ग्रसित रहते हैं। यह रसायन त्वचा तथा श्वांस सम्बन्धी गम्भीर बीमारियां उत्पन्न करते हैं। विकासशील देशों में काम कर रहे बाल श्रमिकों की स्थिति के सन्दर्भ में जी0आर0 एन0 द्वारा मई 1989 में किये गये अध्ययन में यह पाया गया कि पाकिस्तान में लगभग 1.5 मिलियन बाल श्रमिक कालीन बनाने के उद्योगों में लगे हुये थे जिनमें बहुत से बच्चों की आयु 6 वर्ष से भी कम थी तथा वे प्रतिदिन 10 से 12 घण्टे तक काम करते थे। इटली में 8 से 11 प्रतिशत बाल श्रमिक औद्योगिक दुर्घटनाओं से पीड़ित पाये गये तथा वहाँ पर 4 से 5 वर्ष के बच्चे भी अपने माता–पिता के साथ काम करने में सहायता प्रदान करते हैं।[2]

---

[1] Institute of Industrial Relations, University of Philippines – Child Labour in Philippines, Wood based and clothing Industries, in compting child labour, ILO, Geneva Edited by Assefa and J.C. Boyden, 1988, P – 86.
[2] G.N.R. – Chile Labour in Developing Countries, Social Welfare, Vol. XXXVI, No. 2, May 1989.

कुलकर्णी एवं परशुरामन[1] ने सन् 1985 में अपने एक अध्ययन में स्पष्ट किया कि भारत जैसे विकासशील देशों में बाल श्रम के लिये विभिन्न कारण जैसे जनसंख्या वृद्धि, निर्धनता, बाल विवाह, प्राचीन विचारधारायें, शिक्षण संस्थाओं की कमी, नगरीकरण एवं औद्योगीकरण तथा प्रवासी प्रवृत्तियाँ आदि उत्तरदायी हैं। सामान्य रूप से यह माना जाता है कि कम उम्र में बच्चों का काम करने का मुख्य कारण निर्धनता है। अध्ययन में यह अनुमान लगाया गया कि ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 55 प्रतिशत तथा शहरी क्षेत्रों में 45 प्रतिशत बच्चे निर्धनता की रेखा से नीचे रहने के लिये विवश हैं। ये बच्चे पारिवारिक आय में योगदान देने के लिये कार्य करने के लिये बाध्य होते हैं।

मालविका पटनायक[2] ने सन् 1979 में बम्बई के नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ पब्लिक को–आपरेशन एवं बाल विकास विभाग द्वारा हुये अध्ययन पर प्रकाश डाला जिससे यह स्पष्ट हुआ कि रोजगार के साधनों का अभाव तथा अपर्याप्त पारिवारिक आय बाल श्रम का मुख्य कारण है। अध्ययन की रिपोर्ट से यह स्पष्ट हुआ कि 63.2 प्रतिशत बाल श्रमिक किसी प्राकृतिक संकट के कारण स्वयं ही काम करने लगते हैं। 7.6 प्रतिशत बाल श्रमिक कम उपजाऊ भूमि के कारण होने वाले आर्थिक संकट के कारण तथा 6.6 प्रतिशत बाल श्रमिक परिवार में आय अर्जित करने वाले किसी वयस्क सदस्य के न होने के कारण काम पर लगते हैं। बालक कार्य में प्रवेश क्यों करते हैं तथा उन्हें कार्य के दौरान क्या कठिनाइयाँ आती हैं, इस बात का अध्ययन हम इस अध्याय में करेंगे।

---

[1] Kulkarni and Parashuraman – Preventing and Protective Health Service, in Child Labours and Health Problems, Edited by Usha S. Naidu and Kamini R. Kapadia, T.I.S.S. Bombay 1985.
[2] Malvika Patnaik : " Child Labour in India" – The Indian Journal of Public Administration, Vol. XXV. July – Sept. – 1979. P. 3.

कार्य में प्रवेश हेतु उत्तरदायी कारण:

बाल श्रम एक सामाजिक–आर्थिक समस्या है। साधारणतया यह माना जाता है कि निम्न आय स्तर, अशिक्षा, बेरोजगारी, उपेक्षापूर्ण वातावरण तथा रहन–सहन का निम्न स्तर आदि कुछ ऐसे प्रमुख कारण हैं जिनके कारण बालकों को कार्य में प्रवेश करना पड़ता है। श्रम मंत्रालय के सह निदेशक मि0 मदन के अनुसार, "बालक या तो अपनी पारिवारिक आय में वृद्धि करने के उद्देश्य से कार्य में प्रवेश करते हैं या बहुत से स्थानों पर विद्यालय सुविधा का अभाव होने के कारण लाभपूर्ण व्यवसाय के लिये कार्य करते है।"[1]

कुलकर्णी एवं परशुरामन[2] ने सन् 1985 में एक अध्ययन में स्पष्ट किया कि भारत जैसे विकासशील देशों में बाल श्रम के लिये विभिन्न कारण जैसे जनसंख्या वृद्धि, निर्धनता, बाल विवाह, प्राचीन विचारधारायें, शिक्षण संस्थाओं की कमी, शहरीकरण, औद्योगीकरण तथा प्रवासी प्रवृत्तियाँ आदि उत्तरदायी हैं। सामान्य रूप से यह माना जाता है कि कम उम्र में बच्चों के काम करने का प्रमुख कारण निर्धनता है क्योंकि उनके माता–पिता की आय परिवार के तथा स्वयं के भरण पोषण के लिये पर्याप्त नहीं होती है। अध्ययन में यह भी अनुमान लगाया गया कि ग्रामीण क्षेत्रों में 55 प्रतिशत तथा शहरी क्षेत्रों में 45 प्रतिशत बच्चे निर्धनता की रेखा के नीचे रहने के लिये विवश हैं जिनमें 99 मिलियन ग्रामीण क्षेत्रों से तथा 19 मिलियन शहरी क्षेत्रों से सम्बन्धित हैं। ये बच्चे पारिवारिक आय में योगदान देने हेतु कार्य करने के लिये बाध्य होते हैं।

---

[1] Madan G.S.: Review of Legal Provisions relating too facilities for and working conditions of Employed Children – The Impact on their Health, Education and Development, P – 9 (Unpublished)
[2] Kulkarni and Parasuram – Preventing and Promotive Health Service, in Child Labour and Health Problems, Edited by Usha S. Naidu and Kamini R. Kapadia, T.I.S.S. Bombay, 1985.

मालविका पटनायक[1] ने सन् 1979 में बम्बई के नेशनल इन्स्टीट्यूट ऑफ पब्लिक कोआपरेशन एवं बाल विकास विभाग द्वारा किये गये अध्ययन पर प्रकाश डाला जिससे यह स्पष्ट हुआ कि रोजगार के साधनों का अभाव तथा अपर्याप्त पारिवारिक आय बाल श्रम का प्रमुख कारण है। रिपोर्ट से यह स्पष्ट हुआ कि 63.2 प्रतिशत बाल श्रमिक प्राकृतिक संकट के कारण स्वयं ही कार्य करने लगते हैं। 76 प्रतिशत बाल श्रमिक भूमि से आर्थिक लाभ न होने के कारण तथा 6.6 प्रतिशत बाल श्रमिक कमाने वाले वयस्क सदस्यों से वंचित होने के कारण काम करने लगते हैं। इस प्रकार बाल श्रमिकों के कार्य में प्रवेश के अनेक कारण होते है परन्तु यहाँ उनमें से कुछ प्रमुख कारणों का अध्ययन करना उचित होगा।

निर्धनताः

बाल श्रम का सर्वाधिक प्रमुख कारण व्यापक निर्धनता है। निर्धनता के कारण माता–पिता विवश होकर बालकों को कार्य में प्रवेश की अनुमति प्रदान करते हैं। बीमारी एवं अनिश्चितता के समय अतिरिक्त धन की आवश्यकता होती है तथा बालकों के रोजगार द्वारा धन की इस आवश्यकता को आसानी से पूरा किया जा सकता है।

अनेक अध्ययनों से इस बात की पुष्टि होती है कि निर्धन परिवारों के लोग अपनी आमदनी में योगदान के लिये या काम और कमाई से जुड़ी अनिश्चितता के चलते अपने बच्चों को काम पर भेजते हैं। दिहाड़ी मजदूरी में काम न मिलना, काम छूटना, बाढ़ या सूखा और बीमारियों के चलते उनकी कमाई का कोई निश्चित भरोसा नहीं होता। जिस परिवार की आमदनी कम हो वह ऐसी परेशानियों के आने पर एकदम परेशान हो जाता है, क्योंकि न तो वह किसी प्रकार की बचत करके रख पाता है

---

[1] "Child Labour in India" – The Indian Journal of Public Administration, Vol. XXV, July – Sept., 1979, P–3.

और न ही उसके पास ऋण ले सकने की क्षमता होती है। निर्धनता की रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाला परिवार यदि अच्छी कमाई की सम्भावना वाले क्षेत्र में न हो तब परिवार के प्रत्येक सदस्य को, चाहे उसकी उम्र या लिंग कोई भी हो, काम करना ही पड़ता है क्योंकि इसके अतिरिक्त उनके पास जीवन–यापन करने का कोई अन्य माध्यम नहीं होता है।

आर्थिक समीक्षा (1973–74) के अनुसार वर्ष 1973–74 में भारत में निर्धनों की संख्या 32.1 करोड़ थी जो कुल जनसंख्या का 54.9 प्रतिशत था जबकि लगभग इसी अवधि में वित्त आयोग ने 27.2 करोड़ व्यक्तियों को निर्धनता रेखा के नीचे माना था। 1993–94 में निर्धनों की संख्या 32.0 करोड़ होने के अनुमान था जो कुल जनसंख्या का 36 प्रतिशत था। 1999–2000 में 26 करोड़ व्यक्ति निर्धनता रेखा के नीचे थे, जो कुल जनसंख्या का 20.1 प्रतिशत था।[1]

वर्ष 2000–01 के आंकड़ों के अनुसार ग्रामीण निर्धनता का अनुपात उड़ीसा में सर्वाधिक 48.01 प्रतिशत था। जबकि दिल्ली में न्यूनतम अनुपात था जो कुल जनसंख्या का मात्र 0.04 प्रतिशत था। ग्रामीण निर्धनों की जनसंख्या के अनुसार अवरोही क्रम में चार राज्य इस प्रकार है – उत्तर प्रदेश (4.12 करोड़), बिहार (3.76 करोड़), पश्चिम बंगाल (1.80 करोड़) तथा उड़ीसा (1.43 करोड़)। उड़ीसा कुल निर्धनता के अनुसार भी सर्वाधिक निर्धनता वाला राज्य है, जहाँ की 47.15 प्रतिशत जनसंख्या निर्धनता रेखा के नीचे है। दूसरा स्थान बिहार और तीसरा स्थान मध्य प्रदेश का है।

जनसाधारण के विचार जानने के लिये गठित की गई एक संस्था से 1969 में कराये गये एक सर्वेक्षण में प्रदर्शित किया कि, "भारत की लगभग 41.2 प्रतिशत जनसंख्या निर्धनता की रेखा से नीचे जीवन यापन कर रही है जिसमें से

---

[1] Economic Survey 1973-74, 1993-94

आधी संख्या अनुसूचित जाति एवं जनजाति के व्यक्तियों की है। ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि श्रमिक के रूप में कार्य करने वाले व्यक्तियों में से बड़ी संख्या इन समुदाय के श्रमिकों की है।"[1] एक अन्य अध्ययन के अनुसार करीब एक लाख बच्चे प्रति वर्ष निर्धनता के कारण कुपोषण का शिकार हो जाते हैं।

शहरों में बड़ी संख्या में प्रवासी बालकों को आसानी से देखा जा सकता है जिसका प्रमुख कारण उनके पैतृक क्षेत्र में रोजगार का अभाव होता है। अपनी पारिवारिक आय में वृद्धि करने के उद्देश्य से ये बच्चे या तो स्वतः काम की तलाश में नगरों में आ जाते है या उनके माता–पिता विवशता में उन्हें शहरों में रोजगार की तलाश में भेज देते हैं। भुवनेश्वर में हुये एक अध्ययन में ये पाया गया कि लगभग 83 प्रतिशत बालक जो बाल श्रमिक के रूप में कार्य कर रहे हैं प्रवासी हैं जबकि नगर में निवास करने वाले बाल श्रमिकों का प्रतिशत केवल 17 है।

बाल श्रम की समस्या वयस्कों की जीवन निर्वाह मजदूरी से सह–सम्बन्धित है। वयस्कों को मिलने वाली कम मजदूरी उन्हें अपने बालकों को काम पर भेजने के लिये विवश करती है। उनकी इस कमजोरी का लाभ सेवायोजक बालकों को कम मजदूरी पर काम में लगाकर उठाते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की रिपोर्ट में भी यह स्वीकार किया गया है कि बाल श्रम की समस्या स्वयं में एक समस्या नहीं हैं बल्कि यह बालकों की जीविका तथा वयस्क मजदूरों की निम्न मजदूरी के कारण परिवार का सन्तुलित स्तर बनाये रखने के कारण है।[2]

बेरोजगारी

व्यापक बेरोजगारी बाल श्रम को बढ़ावा देने का एक अन्य प्रमुख कारण है। वर्तमान समय में अधिकांश विकासशील देशों में व्यापक बेरोजगारी का

[1] Institute of Public Opinion, Monthly Commentary on Indian Economic Conditions, Dec. 1973.
[2] Report of ILO quoted in the book "Need of Children" Published by UNICEF, P – 144.

वातावरण व्याप्त है। भारत जैसे देश में जहाँ जनसंख्या आधिक्य की स्थिति है, बेरोजगारी निरन्तर बढ़ती ही जा रही है। यहाँ पर यदि कार्य मिल भी जाता है तो वह पूरे समय के लिये नहीं मिलता। भारत में वर्तमान समय में लगभग 6 करोड़ व्यक्ति बेरोजगार है तथा प्रत्येक वर्ष 60 लाख व्यक्ति बेरोजगारों की संख्या में अपना नाम दर्ज करा लेते हैं। यहाँ पर अर्द्ध रोजगार की स्थिति भी पाई जाती है।

भारत सरकार द्वारा श्री बी0 भगवती की अध्यक्षता में बेरोजगारी की समस्या पर विचार करने के लिये 1973 में गठित की गई समिति के अनुसार वर्ष 1971 में 187 लाख व्यक्ति बेरोजगार थे। समिति ने रिपोर्ट में यह भी कहा था कि 90 लाख व्यक्ति पूरी तरह बेरोजगार थे और 97 लाख व्यक्तियों के पास 14 घण्टे प्रति सप्ताह का कार्य ही उपलब्ध था। इस समिति ने ग्रामीण बेरोजगारों की संख्या 161 लाख और नगरीय बेरोजगारों की संख्या 26 लाख बताई थी।[1]

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण[2] के अनुसार साप्ताहिक स्थिति बेरोजगारी के आधार पर देश में 1990 के आरम्भ में 160 लाख व्यक्ति खुली बेरोजगारी के रूप में बेरोजगार माने जा सकते हैं। इसी अनुमान के अनुसार 1990 में 120 लाख व्यक्ति अत्यन्त अल्प रोजगार की स्थिति में थे। उन्हें भी बेरोजगार ही माना जा सकता है। इस प्रकार अवशिष्ट बेरोजगारी की मात्रा वर्ष 1990 के आरम्भ में 280 लाख थी। वर्ष 1989 में रोजगार कार्यालयों की संरचना के अनुसार 320 लाख व्यक्ति रोजगार कार्यालयों में पंजीकृत थे। रोजगार कार्यालयों के अनुसार वर्ष 2001 के अन्त में देश में 4.20 करोड़ व्यक्तियों के नाम पंजीकृत थे। बेरोजगारी की इस स्थिति में व्यक्तियों को विवशता में असंगठित क्षेत्र की उत्पादन इकाइयों एवं कारखानों में

---

[1] Dr. N.C. Tripathi, Dr. Suneet Singh : " Indian Economy," Vinod Pustak Mandir Agra, 2005 P. 359

[2] National Sample Survey, 1990.

काम करना पड़ता है तथा निम्नतम मजदूरी प्राप्त होने के कारण बाध्य होकर महिलाओं और बच्चों की भी श्रम बाजार में प्रवेश करना पड़ता है।

कभी–कभी माता–पिता की बेरोजगारी या परिवार में आय अर्जित करने वाले वयस्क सदस्यों के अभाव में भी बच्चे कार्य करने के लिये विवश होते हैं। हमारे देश में कृषि कार्यों में संलग्न श्रमिकों को वर्ष में अधिकतम 290 दिन ही कार्य उपलब्ध होता है शेष 75 दिन वे पूर्ण रूप से घर पर बैठे रहते हैं। ऐसी स्थिति में वे अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने तथा आय अर्जित करने के लिये अपने बच्चों को कार्य पर भेजने के लिये बाध्य होते हैं।

अशिक्षा और माता–पिता की उपेक्षाः

नवम्बर 1975 में 'बच्चे और रोजगार' विषय पर आयोजित एक सेमिनार में संकेत किया गया कि, "बाल श्रम निम्न सामाजिक–आर्थिक स्तर वाले समुदाय में व्यापक रूप से पाया जाता है, क्योंकि उनमें शिक्षा के प्रति जागरूकता का अभाव होता है तथा उन्हें इस बात का ज्ञान नहीं होता कि शिक्षा जीवन एवं रहन–सहन के स्तर को ऊँचा उठाने में सहायक होती है।" इस समूह के व्यक्ति सिर्फ वर्तमान समय के बारे में सोंचते हैं जो कि उनका एकमात्र चिन्ता का विषय होता है। वे कभी भविष्य के विषय में विचार नहीं करते। वे बालकों द्वारा अर्जित की गयी आय से पूर्णतया संतुष्ट होते है। अशिक्षा के कारण ही वे बालकों को विद्यालय नहीं भेजते और इसे वे अनावश्यक रूप से समय और धन का दुरूपयोग मानते हैं। उनके द्वारा इस बात की उपेक्षा की जाती है कि उनके बच्चे शैक्षिक गतिविधियों में भाग ले सकते हैं। इस उपेक्षा के कारण बालक शिक्षा के अवसर से वंचित हो जाते हैं और इसी कारण उनके व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त करने के अवसर भी सीमित हो जाते हैं। इससे उनका स्वास्थ्य भी प्रभावित होता है और वे जीवन पर्यन्त के

लिये निम्न आय वाले श्रमिक के रूप में परिवर्तित हो जाते है।[1] इस प्रकार शिक्षा के अभाव में आज के बाल श्रमिक कल के भिखारी होंगे, वे ऐसे बालक एवं बालिकायें हैं जो बिना किसी औपचारिक शिक्षा या ज्ञान के साथ बड़े होते हैं। इस प्रकार अशिक्षा और माता–पिता का उपेक्षापूर्ण व्यवहार भी बाल श्रम का एक महत्वपूर्ण कारण है। ये माता–पिता बाल श्रम को बुराई नहीं मानते।

राष्ट्रीय श्रम संस्थान के बाल प्रकोष्ठ की हेलेन आर० सेकर के द्वारा शिवकाशी के दियासलाई उद्योग में कार्यरत कन्या बाल श्रमिकों पर किये गये एक अध्ययन[2] में यह बताया गया कि जब लड़कियों के माता–पिता से पूछा गया कि उन्होने अपनी बेटियों को काम पर क्यों भेजा तो उनका जवाब था कि उनके परिवार की आमदनी कम है और उनको कुछ अतिरिक्त कमाई की आवश्यकता होती है। चूँकि अधिकांश माता–पिता अपने लड़कों को पढ़ाना चाहते है, इसलिये अतिरिक्त कमाई का बोझ लड़कियों के माथे ही आता है। माता–पिता के इस नजरिये के लिये उनकी अशिक्षा और निरक्षरता को एक प्रमुख कारण माना जा सकता है।

बड़ा परिवारः

विभिन्न अध्ययनों में यह पाया गया है कि बाल श्रमिक अधिकांशतः बड़े परिवारों से सम्बन्धित होते हैं जिनमें निम्न आय के कारण परिवारों को चलाने में कठिनाई होती है जिसका परिणाम यह होता है कि वे अपने बच्चों की बाल्यावस्था को संरक्षण देने में असमर्थ होते हैं। यदि परिवार का आकार छोटा और नियोजित हो तो बालकों को कार्य पर भेजने की कोई आवश्यकता ही नहीं हो तथा

---

[1] Jinesh chandra Kulshrestha, Child Labour in India, Ashish Publishing house, New Delhi, 1978; P – 18.
[2] Helen R. Seker : Girl Child Labour in the Match Industry of Shivakashi- No Light in their lives.

उन्हें सावधानी से शिक्षित किया जा सकता है लेकिन अशिक्षित माता–पिता का विचार इसके विपरीत होता है। उनका सोंचना होता है कि यदि ईश्वर ने जीवन दिया है, तो वह खाने को भी देगा। इसके साथ ही उनके विचार में चार पुत्र एक पुत्र से अधिक महत्वपूर्ण हैं क्योंकि उनकी दृष्टि से अधिक पुत्रों का तात्पर्य अतिरिक्त आय है। इस प्रकार यदि माता–पिता अपने परिवार को सीमित रखें तो वे अपने बच्चों को शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक विकास की सभी आवश्यकतों को पूरा कर सकते है।

सामाजिक सुरक्षा स्कीमों का अभावः

सामाजिक सुरक्षा वह सुरक्षा है जो समाज या सरकार अपने उपयुक्त संगठन द्वारा अपने सदस्यों के जीवन में आने वाले विभिन्न संकटों में प्रदान करता है। सामाजिक सुरक्षा के अन्तर्गत जीवन की आकस्मिकताओं से ग्रस्त सभी व्यक्तियों को हित लाभ उनके किसी अंशदान के बिना उनके साधनों की जांच के पश्चात निर्धारित की गई वर्तमान वास्तविक आवश्यकता के आधार पर प्रदान किये जाते हैं। प्राचीन भारतीय इतिहास में कौटिल्य के अर्थशास्त्र, मनुस्मृति और शुक्रनीति में भी सामाजिक सुरक्षा के प्रावधानों का वर्णन किया गया था। उस समय संयुक्त परिवार, जातीय पंचायत, अनाथालय, विद्या–आश्रम आदि के माध्यम से उन लोगों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान की जाती रही है, जिनके पास जीवन निर्वाह का कोई साधन नहीं होता था और जो कार्य करने में भी असमर्थ होते थे। परन्तु वर्तमान समय में ऐसे असहाय एवं निर्धन परिवारों के लिये इस प्रकार की सुरक्षा स्कीमों का अभाव दृष्टिगत होता है।

भारत में सामाजिक सुरक्षा स्कीमों का अभाव रहा है। भारतीय श्रमिकों की दशा अत्यन्त शोचनीय है। औद्योगीकरण के सभी खतरों का उन्हें सामना करना पड़

रहा है, जैसे –बीमारी, बेकारी आदि। हमारे यहाँ श्रम संगठनों की कमी भी रही है, वे अशिक्षित, अज्ञानी एवं दरिद्र है। इस दृष्टि से अन्य औद्योगिक देशों की अपेक्षा भारतीय श्रमिकों की दशा अत्यन्त खराब है, अतः सामाजिक सुरक्षा का आयोजन आवश्यक हो जाता है। यही कारण है कि आज सामाजिक सुरक्षा को सार्वजनिक नीति का एक महत्वपूर्ण अंग माना जाता है तथा इसके प्रचलन की सीमा को देखकर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि एक देश ने कल्याणकारी राज्य की दिशा में कितनी प्रगति की है।

भारत में अभी तक सामाजिक सुरक्षा का पर्याप्त विकास नहीं हो पाया है। ब्रिटिश शासन काल में तो श्रमिक क्षतिपूर्ति अधिनियम 1923 एवं कुछ प्रसूति लाभ अधिनियम ही सामाजिक सुरक्षा में आते थे। भारत स्वास्थ्य बीमे की आवश्यकता का अनुभव सर्वप्रथम 1927 में किया गया, जबकि 2 वर्ष पूर्व 1925 में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय में औद्योगिक श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा के सम्बन्ध में प्रस्ताव स्वीकृत किया गया था, किन्तु फिर भी उस समय कोई वास्तविक कार्यवाही नहीं की गई। 1930–31 में औद्योगिक श्रमिकों के लिये सामाजिक सुरक्षा की व्यवस्था पर रॉयल कमीशन आफ लेबर ने जोर दिया एवं स्वास्थ्य बीमे पर एक योजना की रूपरेखा तैयार की। दुर्भाग्यवश उस समय वह योजना लागू नहीं की। 1940 में अनिवार्य चन्दे द्वारा बीमारी आरोप की योजना के सम्बन्ध में यह निश्चय किया कि वस्त्र व्यवसाय तथा इन्जीनियरिंग उद्योग के श्रमिकों को बीमारी सम्बन्धी बीमे की सुविधायें दी जाये। इस निर्णय को कार्यान्वित करने के लिये बी0पी0 अदारकर की नियुक्ति की गई। प्रो0 अदारकर ने अपनी रिपोर्ट 1944 में प्रस्तुत की, जिसके आधार पर 'कर्मचारी राजकीय बीमा सन्नियम' बनाया गया, जो सामाजिक सुरक्षा प्राप्त करने के लिये ठोस कदम था।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम 1948 और कर्मचारी प्राविडेण्ट फण्ड व पारिवारिक पेंशन फण्ड अधिनियम, 1952 तथा कर्मचारी पारिवारिक पेंशन स्कीम, 1971 एवं कोयला खान पारिवारिक पेंशन स्कीम, 1971 आदि सामाजिक सुरक्षा की दशा में उठाये गये सराहनीय प्रयास हैं किन्तु श्रमिकों के कल्याण के दृष्टिकोण से ये प्रयास पर्याप्त सिद्ध नहीं हुये हैं।

भारत जैसे विकासशील देशों में प्रायः निर्धन परिवारों की सामाजिक सुरक्षा के प्रावधानों का सर्वथा अभाव बाल श्रम को बढ़ावा देने का प्रमुख कारण रहा है। माता–पिता की बीमारी अथवा दुर्घटना के कारण मृत्यु हो जाने पर बच्चों को बाध्य होकर काम करना पड़ता है। एक अध्ययन के अनुसार लगभग 4 प्रतिशत बालकों ने माता–पिता की मृत्यु हो जाने के कारण कार्य में प्रवेश किया। जबकि अन्य 3 प्रतिशत बालक अपने पिता की मृत्यु के कारण कार्य में प्रवेश के लिये विवश थे। अध्ययन में यह भी पाया गया कि बालकों का एक बड़ा प्रतिशत अपने परिवार या रिश्तेदारों के बुरे बर्ताव के कारण रोजगार में संलग्न था। उनके श्रम बाजार में प्रवेश का कारण सौतेली माँ अथवा शराबी पिता के द्वारा किया गया दुर्व्यवहार था।

पारिवारिक भत्ता प्रावधानों का अभाव:

भारत में पारिवारिक भत्ता प्रदान करने के प्रावधानों का अभाव रहा है जिस कारण निर्धन व्यक्ति अपने पारिवारिक स्तर को बनाये रखने में असमर्थ होते हैं तथा बालकों को आय अर्जित करने के लिये श्रम बाजार में प्रवेश करने की अनुमति प्रदान करते हैं। विधवा स्त्रियों को क्षतिपूर्ति हेतु दी जाने वाली धनराशि अथवा पेन्शन से प्राप्त होने वाली धनराशि इतनी कम होती है कि उन्हें बालकों की आय के बिना अपने पारिवारिक स्तर को बनाये रखने में बड़ी कठिनाइयों का सामना

करना पड़ता है। श्रम संरक्षण अधिनियमों को लागू करने एवं उनके प्रभावों का निरीक्षण करने में सरकार की विफलता भी बाल श्रम को बढ़ावा देने के लिये उत्तरदायी है।

अनिवार्य शिक्षा के प्रावधान का अभाव:

बाल श्रम समस्या का एक अन्य अत्यन्त महत्वपूर्ण कारण अनिवार्य शिक्षा प्रावधानों की कमी भी है। एक निश्चित आयु तक आवश्यक शिक्षा के प्रावधान से बालक विद्यालय जाने के लिये बाध्य होंगे जिसके फलस्वरूप उनके कार्य में प्रवेश की सम्भावना कम हो सकती है। अधिकांश बालक विद्यालय सुविधा के अभाव में वैकल्पिक रूप से किसी कार्य की तलाश में रहते हैं।

अप्रत्यक्ष रूप से इस तथ्य की ओर 1969 में श्रम पर हुये राष्ट्रीय कमीशन की रिपोर्ट में भी व्यक्त किया गया। रिपोर्ट के अनुसार, "स्वतन्त्रता के पश्चात बाल श्रमिकों की संख्या में हुई साधारण कमी का कारण राज्यों द्वारा किया गया शिक्षा का विस्तार था।"[1]

एक निश्चित आयु तक बालकों के लिये अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करने के मार्ग में आने वाले व्यवधानों को उक्त रिपोर्ट में निम्न प्रकार से वर्णित किया गया था। "मुफ्त शिक्षा व्यवस्था को भी एक कारीगर या दस्तकार स्वीकार नहीं कर सकता। उनके लिये अशिक्षित बालक एक सम्पत्ति है, उन्हें शिक्षित करने की इच्छा उनके लिये दोहरे दायित्व के समान है, (1) बालकों के कार्य न करने पर आय की हानि, तथा (2) शिक्षा के व्यय, चाहे वे छोटें ही क्यों न हों।"[2] इसी प्रकार का दृष्टिकोण जैवियर्स श्रम सम्बन्ध संस्था, जमशेदपुर की प्रोफेसर श्रीमती एन0

---

[1] Report of National Commission on Labour 1969, P. - 386.
[2] Ibid, P – 386.

आचार्य जी द्वारा भी व्यक्त किया गया। उनके अनुसार, "पुस्तकें एवं स्टेशनरी मँहगी हैं। क्या माता–पिता बच्चों की प्राथमिक आवश्यकता भोजन और कपड़े की अपेक्षा पुस्तकों पर व्यय करेंगे? अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लिये तो यह व्यवस्था निःशुल्क है परन्तु अन्य सभी निर्धन परिवारों के सामने यह प्रश्न होता है कि क्या बालक मैट्रिक पास करने के बाद रोजगार प्राप्त हो सकेगा जबकि अर्थव्यवस्था में करोड़ों की संख्या में बेरोजगार हैं। इसी कारण मनोवैज्ञानिक रूप से वे कम अनियमित मार्ग को चुनते है।"[1]

जहाँ तक बाल श्रमिकों के संरक्षकों (माता–पिता) के मनोविज्ञान का सवाल है, इस सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि प्रायः बाल श्रमिकों के माता–पिता दोनों ही काम पर जाते हैं और उनके सामने यह समस्या होती है कि बच्चों को कहाँ छोड़े। स्कूल या विद्यालय एक विकल्प हो सकता है लेकिन इन स्कूलों या विद्यालयों तक उनकी पहुँच नहीं होती है और साथ ही हमारी शिक्षा पद्धति भी ऐसी है जिससे रोजगार प्राप्त करने में कोई मदद नहीं मिलती है। अतः ये विद्यालय बच्चों को आकर्षित करने में विफल रहते हैं। बाल श्रमिकों के माता–पिता के मन में यह धारणा घर कर गई है कि यदि बच्चों को पढ़ा भी दिया जाये तब भी अन्ततः उनको काम ही करना होगा। जहाँ तक बाल श्रमिकों को काम पर लगाने वाले नियोक्ताओं की बात है, उनका तो एक मात्र उद्देश्य होता है कम से कम लागत पर अधिक से अधिक उत्पादन और अधिक से अधिक लाभ। यह तभी सम्भव होता है जब उनको ऐसे श्रमिक काम करने के लिये मिलते रहे जिन्हें वे कम से कम पारिश्रमिक देकर अधिक से अधिक शोषण कर सकें। इन दोनों ही दृष्टिकोणों से बाल श्रमिक उनको सबसे अधिक उपयोगी जान पड़ते हैं।

---

[1] Prof. Smt. Acharji, Child Labour in India (Unpuhlished) read in seminar organized by NIPCCD in Nov. 1975.

निम्न मजूदरी एवं आय :

मजदूरी का श्रमिकों के जीवन स्तर पर गहरा प्रभाव पड़ता है। अपर्याप्त व निम्न मजदूरी मिलने से उनका जीवन–स्तर निम्न होता है। तथा श्रमिकों की कार्यकुशलता कम होती है। श्रमिकों को पर्याप्त भोजन, कपड़ा, उचित आवास व अन्य सुविधायें न उपलब्ध हो पाने के कारण उनकी कार्यक्षमता में गिरावट आती है तथा विवशता में आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु उन्हें बालकों एवं अन्य पारिवारिक सदस्यों की आय पर निर्भर रहना पड़ता है। श्रमिकों तथा उनके परिवार के अन्य सदस्यों का जीवन स्तर मुख्यतः उनकी मजदूरी तथा आय पर निर्भर करता है। भारत के लिये यह कथन विशेष सत्य है, क्योंकि यहाँ श्रमिकों को सामाजिक सेवाओं के रूप में मिलने वाली अप्रत्यक्ष सुविधाओं की मात्रा सीमित है। श्रमिकों को दिया जाने वाला पारितोषण, वास्तव में वह धुरी है जिसके चारो ओर विविध प्रकार की श्रम–समस्यायें चक्कर काटती हैं। आज श्रम व पूँजी के मध्य जितने भी संघर्ष होते हैं, उनका मूलभूत कारण 'मजदूरी' का प्रश्न ही होता है। अतः 'मजदूरी' श्रमिक का प्राण कही जा सकती है। ऐसे में श्रमिकों की मजदूरी की अपर्याप्तता तथा सेवायोजकों की शोषणकारी प्रवृत्तियों के कारण बालकों को आय अर्जित करने तथा परिवार को सहयोग प्रदान करने के लिये काम करना उनकी विवशता बन जाती है।

अन्य कारणः

इन उपरोक्त कारणों के अतिरिक्त भी अनेक ऐसे कारण हैं जो बाल श्रम के लिये उत्तरदायी हैं। श्रम संरक्षण अधिनियमों के संचालन की धीमी गति भी बाल श्रम के लिये पर्याप्त उत्तरदायी है, इसके अतिरिक्त ये अधिनियम कृषि, घरेलू नौकरों तथा लघु औद्योगिक इकाइयों के कार्य क्षेत्र में लागू नहीं होते हैं। इसके

अतिरिक्त राज्य सरकार द्वारा नियुक्त की गई बाल श्रम निरीक्षण समितियों का कार्य भी असन्तोषजनक रहा है।

बाल श्रमिकों के रोजगार में संलग्न होने का एक अन्य कारण कुटीर उद्योग धन्धों का पतन है। पहले बाल्यावस्था से ही बच्चे घर के कुटीर उद्योग धन्धों में हाथ बंटाते थे, परन्तु औद्योगीकरण के साथ–साथ जब गृह आधारित उद्योगों का पतन हुआ तो परिवार के अन्य सदस्यों के साथ पड़ा। इसके अतिरिक्त निरन्तर बढ़ती हुई कीमतों के कारण श्रमिक अपनी अनिवार्यताओं को पूरा करने में अपने को सर्वथा असमर्थ पाते हैं तथा बाध्य होकर अपने बच्चों को कार्य पर भेजने के लिये सहमत हो जाते हैं।

भारत में बाल श्रमिकों की भर्ती पर नियन्त्रण स्थापित करने के लिये अनेक अधिनियम पारित किये गये हैं परन्तु उनका उचित रूप से पालन नहीं किया जाता है। बाल श्रमिकों के अभिभावक और सेवायोजक झूठे डाक्टरी प्रमाण पत्र व रिश्वत आदि के द्वारा अपना काम निकाल लेते हैं। यही कारण है कि कुछ उद्योगों में अब भी बालकों को अवैध रूप से रोजगार में लगाया जाता है।

कृषि पर जनसंख्या के बढ़ते दबाव के कारण सभी व्यक्तियों को लाभदायक रोजगार देना सम्भव नहीं है इसलिये कुछ तरूण व बालक मिलों या अन्य उद्योगों में कार्य करने के लिये बाध्य हो जाते हैं। कभी–कभी बालकों को इसलिये भी नौकरी पर भेज दिया जाता है कि यहाँ कम पढ़े–लिखे या अनपढ़ बच्चों के लिये तकनीकी शिक्षा देने वाली संस्थायें बहुत कम है।

मनोरंजन के साधनों का अभाव भी बाल श्रम के लिये एक उत्तरदायी कारण है। खेल के मैदान, पार्क, सांस्कृतिक गतिविधियों का अभाव भी बालकों को स्वस्थ्य वातावरण से दूर रखता है जिसके कारण वे अपने समय का सुदपयोग नहीं

कर पाते और आय अर्जित करने के कार्यो में संलग्न हो जाते हैं। अतिरिक्त समय में ये बालक या तो आराम करते हैं, फिल्मे देखते हैं या कभी–कभी जुआँ खेलते तथा अन्य गलत कार्यो में संलग्न हो जाते हैं। इस कारण भी माता–पिता बच्चों के कार्य करने को प्राथमिकता देते हैं।

औद्योगिक क्षेत्र में मजदूरी एवं कार्य दशायें:

विकासशील देशों में अधिकतर बाल श्रमिकों का रोजगार में प्रवेश माता–पिता या रिश्तेदारों के माध्यम से होता है जहाँ वे पहले से कार्य कर रहे होते हैं। बाल श्रम से सम्बन्धित विभिन्न अध्ययनों में यह पाया गया है कि साधारणतया 6 से 8 वर्ष तक के बालकों को सर्वप्रथम घरेलू कार्यो एवं मरम्मत सम्बन्धी कार्यो को सीखने के लिये कार्य में प्रवेश कराया जाता है। इस आयु के बाद वे उत्पादन इकाइयों एवं कारखानों में कार्य में संलन हो जाते हैं। सभी मामलों में बाल श्रमिक पूर्णतया सेवायोजकों पर निर्भर होते हैं जो स्वयं ही कार्यदशाओं का निर्धारण करते हैं। विभिन्न अध्ययनों की रिपोर्टो से यह ज्ञात होता है कि अधिकांश बाल श्रमिक अमानवीय दशाओं में कार्य करते हैं तथा विभिन्न प्रकार से उनका शोषण किया जाता है। उन्हें विभिन्न प्रकार से बुरे बर्तावों का सामना करना पड़ता है जिनमें व्यावसायिक दण्ड, गाली–गलौज, अपमानजनक व्यवहार आदि सम्मिलित होते हैं। बहुत कम सेवायोजक ऐसे होते है जो उनके साथ उदारता, विनम्रता एवं संरक्षणात्मक व्यवहार करते हैं। औद्योगिक इकाइयों में कार्यरत बाल श्रमिक प्रायः अस्वास्थकर वातावरण में कार्य करने के लिये विवश होते हैं क्योंकि अधिकतर उद्योग स्वास्थ्य के लिये निर्धारित मानक को पूरा नहीं करते हैं। 1924 में अमेरिका का श्रम विभाग द्वारा कराये गये एक अध्ययन में यह पाया गया कि विभिन्न कारखानों में कार्यरत 412 बाल श्रमिकों में से केवल 18 बच्चे ऐसे थे जो किसी

प्रकार की शारीरिक अपंगता का शिकार नहीं थे। 99 बच्चे आंशिक रूप से अंगदोष से ग्रसित थे, 179 बच्चे ऐसे थे जिन्हें साधारण चिकित्सा एवं स्वास्थ्यपूर्ण वातावरण की आवश्यकता थी तथा 93 बच्चे गम्भीर रूप से विभिन्न बीमारियों का शिकार थे। अध्ययन में 16 बच्चे ऐसे पाये गये जो पूर्ण रूप से स्वस्थ थे तथा उन्हें स्वास्थ्यकरण वातावरण का लाभ प्राप्त था।[1]

यह सत्य है कि संगठित क्षेत्रों में कार्य करने वाले बालकों की स्थिति साधारणतः अधिक अच्छी होती है। चूंकि इन क्षेत्रों में बाल श्रम विधिक रूप से प्रतिबन्धित होता है, अतः वे वापस असंगठित क्षेत्रों में कार्य तलाशते है जहाँ पर कार्य की दशायें अत्यन्त बुरी होती हैं तथा किसी भी प्रकार की आनन्ददायक सुविधायें प्राप्त नहीं होती हैं। विभिन्न अध्ययनों में यह पाया गया है कि लघु औद्योगिक इकाइयों में बाल श्रमिक कार्य करते हैं। ये उद्योग प्रायः कम पूँजी तथा श्रम आधारित तकनीक वाले होते है। चूंकि ऐसे उद्योगों की आय संगठित क्षेत्र में अन्य उद्योगों से कम होती है अतः ये अधिकतर महिलाओं और बच्चों को कार्य पर रखने को प्राथमिकता देते हैं जो प्रायः शिक्षा के अभाव और निर्धनता के कारण कम मजदूरी पर कार्य करने के लिये तैयार हो जाते है। इन श्रमिकों से अधिक से अधिक काम लिया जाता है जबकि इनको मिलने वाली मजदूरी प्रायः विधिक रूप से निर्धारित न्यूनतम मजदूरी से कम होती है।[2] बहुत से बालक जो औद्योगिक क्षेत्रों में काम सीखने के लिये प्रशिक्षार्थी के रूप में प्रवेश करते हैं। उन्हें काम सीखने के अवसर तो कम प्राप्त होते हैं जबकि उनके साथ नौकरों की तरह व्यवहार किया जाता है तथा बहुत कम या कभी–कभी कोई भी मजदूरी नहीं दी जाती है। इन विषम परिस्थितियों में बहुत कम प्रशिक्षणार्थी अपना प्रशिक्षण पूरा कर पाते हैं।

---

[1] Robert et.al., (1921) in a study state of New York, Bureau of Women in Industry. The Health of Working Child. Sup. Bulletin No. 134, Dec., 1924.

[2] Vishwa Mitra, Growth of Informal Sector in Punjab's Urban Economy: A Case study of Patiala City, 1984, P.P. – 79 – 80.

कभी—कभी यह पाया गया है कि बहुत से बाल श्रमिक इन बुरी कार्य दशाओं में भी उन्हें मिलने वाले वेतन, कार्य के घण्टों तथा सेवायोजकों के अपने प्रति व्यवहार से संतुष्ट होते हैं। इसका सबसे प्रमुख कारण यह होता है कि अशिक्षा या निम्न योग्यता के कारण उनकी सेवायोजकों से अपेक्षायें कम होती है। उद्योगों में कार्य प्रायः खतरनाक एवं स्वास्थ्य के लिये हानिकारक प्रवृत्ति के होते हैं जो बालकों के समुचित शारीरिक एवं मानसिक विकास में बाधक होते हैं।

विभिन्न औद्योगिक इकाइयों में बाल श्रमिकों के साथ बुरा एवं शोषणयुक्त व्यवहार किया जाता है। उन्हें कठिन परिस्थितियों में काम करने के लिये बाध्य किया जाता है, उदाहरण के लिये उन्हें अत्यधिक गर्म स्थानों पर धूल एवं धुयें से युक्त वातावरण में कई घण्टों तक लगातार काम करना पड़ता है। अधिकांश लघु औद्योगिक इकाइयों में प्रकाश और हवादार स्थान का अभाव होता है जो धूल, धुयें और अत्यधिक शोर से युक्त होता है। ऐसे स्वास्थ्य के लिये हानिकारक वातावरण में इन बाल श्रमिकों को पर्याप्त सुरक्षा उपकरणों, और स्वास्थ्य सुविधाओं के अभाव में कार्य करना पड़ता है जो उनके स्वास्थ्य और जीवन के लिये अत्यन्त हानिकारक होता है।

बाल श्रम पर हुये विभिन्न अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि अधिकांश औद्योगिक इकाइयों में बालकों को निम्न मजदूरी पर अस्वास्थ्यकर वातावरण में निर्धारित कार्य अवधि से अधिक कार्य करना पड़ता है। जिन उद्योगों में बाल श्रमिक अधिक संख्या में कार्यरत है उनमें बीड़ी उद्योग, काँच उद्योग, पीतल उद्योग, कालीन उद्योग, माचिस उद्योग, पटाखा उद्योग तथा अगरबत्ती उद्योग आदि प्रमुख है। उत्तर प्रदेश में जिन प्रमुख उद्योगों में बाल श्रमिकों की सर्वाधिक संख्या कार्यरत है उनको निम्न तालिका के द्वारा व्यक्त किया जा सकता है :—

तालिका संख्या–3.6

विभिन्न उद्योगों में बाल श्रमिकों की संख्या

क्रम संख्या	उद्योग	बाल श्रमिकों की संख्या	क्षेत्र
1.	कालीन उद्योग	75000	भदोही, मिर्जापुर, इलाहाबाद
2.	पीतल उद्योग	24000	मुरादाबाद
3.	लकड़ी की संगतराशी	10000	सहारनपुर
4.	सिल्क / जरी कढ़ाई उद्योग	50100	बनारस
5.	काँच उद्योग	50000	फिरोजाबाद
6.	ताला उद्योग	7000	अलीगढ़

स्रोतः– भारतीय सामाजिक संस्था

फिरोजाबाद के काँच उद्योग पर हुये एक अध्ययन में यह पाया गया कि अधिकांश उत्पादन इकाइयों में बाल श्रमिकों की संख्या अत्यधिक है तथा उनके द्वारा औसतन 8 से 10 घण्टे प्रतिदिन काम किया जाता है। फिरोजाबाद में काँच उद्योग में लगभग 50,000 बाल श्रमिक कार्यरत हैं। इस उद्योग में कार्यरत 500 बाल श्रमिकों पर हुये अध्ययन[1] में उनके कार्य के घण्टों का वर्गीकरण यहाँ प्रस्तुत किया गया हैः–

[1] G.P. Mishra and P.N. Pandey, "Child Labour in Glass Industry", A.P.H. Publishing Corporation, New Delhi.

तालिका संख्या–3.7

बाल श्रमिकों का कार्य के घण्टों के आधार पर वर्गीकरण

कार्य के घण्टे (प्रतिदिन)	बालकों की संख्या	प्रतिशत
0–2	13	2.60
2–4	79	15.80
4–6	82	16.40
6–8	127	25.40
8–10	108	21.60
10 से अधिक	91	18.200
कुल	**500**	**100**

तालिका से स्पष्ट है कि फिरोजाबाद के काँच उद्योग में बड़े पैमाने पर बच्चों से अधिक कार्य के घण्टों तक कार्य कराया जाता है। अध्ययन में यह स्पष्ट हैं कि जैसे–जैसे कार्य के घण्टे अधिक होते जाते है कार्य करने वाले बालकों की संख्या में भी वृद्धि होती है, अर्थात् जो बालक अधिक घण्टों तक कार्य करने के लिये तैयार होते हैं उन्हें आसानी से काम पर रख लिया जाता है। इस प्रकार बड़े पैमाने पर बालकों से 8 से 10 घण्टें तक कार्य लिया जाता है तथा उन्हें इतने परिश्रम के बाद भी वयस्कों से कम मजदूरी दी जाती है।

एक अध्ययन के अनुसार फिरोजाबाद के काँच उद्योग में लगभग 50,000 बाल श्रमिक काम कर रहे हैं जो लगभग 7000 से 1500 डिग्री सेल्सियस के तापमान पर दहकती भट्ठियों के पास अधिक समय तक रहते हैं जिससे उनकी त्वचा जल जाती है तथा दृष्टि भी कमजोर हो जाती है। ये बच्चे असमय ही गम्भीर

बीमारियों से ग्रसित हो जाते हैं।[1] फिरोजाबाद का ही चूड़ी उद्योग तो मुख्यतः बाल श्रमिकों के द्वारा ही संचालित हो रहा है। ये निर्धन बाल श्रमिक मुख्यतः रात के समय ही कार्य करते हैं जिसके बदले में उन्हें नाममात्र की मजदूरी दी जाती है।

इसी प्रकार यदि हम अलीगढ़ के ताला उद्योग पर दृष्टि डालें तो यह स्पष्ट होता है कि वहां भी बड़ी संख्या में बाल श्रमिक कार्यरत् हैं। एक अध्ययन के अनुसार अलीगढ़ के ताला उद्योग में लगभग 7000 बाल श्रमिक कार्यरत हैं जो 5 से 10 रूपये प्रतिदिन की न्यूनतम मजदूरी पर 10 से 15 घण्टे प्रतिदिन कार्य करते हैं। इन बाल श्रमिकों को निरन्तर विभिन्न रसायनों और लोहे की कणों के सम्पर्क में रहना पड़ता है। इन उद्योगों में बाल श्रमिकों को प्रायः हैण्डप्रेस, इलेक्ट्रोप्लेटिंग, स्प्रे पालिश तथा पैकिंग आदि के कामों में लगाया जाता है। इन उद्योगों में कार्यरत बाल श्रमिक प्रायः खाँसी, श्वांस सम्बन्धी बीमारियों तथा फेफड़े के कैंसर जैसी गम्भीर बीमारियों से ग्रसित हो जाते हैं। इन उद्योगों में पोटेशियम हाइड्राक्साइड, हाइड्रोक्लोरिक एसिड, सल्फ्यूरिक एसिड, ट्राइसोडियम फास्फेट जैसे घातक रसायनों का प्रयोग होता है जो विभिन्न प्रकार की गम्भीर बीमारियों का कारण होते हैं।

एक अन्य अध्ययन के अनुसार मुरादाबाद के पीतल उद्योग में लगभग 24000 बाल श्रमिक कार्य कर रहे हैं। वहाँ के अधिकतर परिवारों का एक या अधिक व्यक्ति इन उधोगों में कार्य कर रहा है। इन उद्योगों में काम करने वाले बाल श्रमिकों में अधिकतर दमा, टी0बी0, शारीरिक तथा मानसिक विकास का रूक जाना आदि व्यवसायगत बीमारियाँ घर कर लेती है। इन बाल श्रमिकों को भी प्रतिदिन 8 से 10 घण्टे तक अस्वास्थ्यकर वातावरण में कार्य करना पड़ता है जिसके कारण बचपन के उपरान्त वृद्धावस्था में चरण रखना इनकी नियति बन चुकी है। ये बच्चे

---

[1] "Glass Factories of Firozabad: The Plight of Workers" EPW, November 15th, 1986.

युवावस्था में कभी प्रवेश नहीं कर पाते हैं। यह कहा जाता है कि इस उद्योग में श्रमिक के एक बार व्यावसायिक टी0बी0 का शिकार हो जाने पर उन्हें एक बार खून की उल्टी होती है तथा उनकी मृत्यु हो जाती है।[1]

कालीन उद्योग उत्तर प्रदेश का एक बड़ा एवं प्रमुख उद्योग है। एक अन्य अध्ययन के अनुसार मिर्जापुर, बनारस तथा इलाहाबाद के कालीन उद्योग में लगभग 75000 बाल श्रमिक स्वास्थ्य के लिये हानिकारक कार्य दशाओं में कार्य कर रहे हैं। ये बच्चे अधिकांशतः श्वांस सम्बन्धी संक्रमण का शिकार हैं साथ ही विभिन्न प्रकार के रसायनिक रंगों के निरन्तर प्रयोग करने के कारण इनके हाथ भी संक्रमित हो जाते हैं। कालीन उद्योग में घण्टों तक एक ही मुद्रा में खड़े रहने के कारण और इस काम की बारीकियों के कारण इनमें लगे बच्चों में प्रायः अंग दोष आने लगते हैं तथा वे आँखों से सम्बन्धित रोगों से ग्रसित हो जाते हैं।

प्रदेश की राजधानी लखनऊ तथा बनारस का जरी एवं कढ़ाई उद्योग सम्पूर्ण भारत में प्रसिद्ध है। एक अध्ययन के अनुसार केवल लखनऊ में ही इस उद्योग में लगभग 45000 बाल श्रमिक कार्य कर रहे हैं। घनी आबादी में स्थित इन उद्योगों में प्रायः पर्याप्त रोशनी और हवादार स्थानों का अभाव होता है जो बड़े पैमाने पर आँखों सम्बन्धी बीमारियों को जन्म देता है। इन उद्योगों में कार्यरत बाल श्रमिक अधिकांशतः आँखों की कम रोशनी एवं अन्धेपन का शिकार होते हैं।[2]

बीड़ी उद्योग में कार्यरत बाल श्रमिकों की स्थिति भी अपेक्षाकृत ऐसी ही है जहाँ उन्हें प्रतिदिन 6 से 8 घण्टे कार्य करना पड़ता है जबकि उन्हें मिलने वाली मजदूरी अत्यन्त कम होती है। बीड़ी उद्योग में कार्य करने वाले बाल श्रमिक

---

[1] Kulashrestha D. and K. Sharma – "Child Labour in Moradabad Metalware Industry", The Economic Times, October 19th, 1980.

[2] Indra Bhargawa - 'Health Situation of Working Children; in child Labour and Health Problems, Edited by Usha S. Naidu and Kamini, R. Kapadia, T.I.S.S. Bombay 1985, P. 162.

अधिक देर तक तम्बाकू के सम्पर्क तथा अस्वास्थ्यकर वातावरण में रहने के कारण एनीमिया, अस्थमा, टी0बी0 और कैंसर जैसी घातक बीमारियों का शिकार हो जाते हैं। इसी प्रकार आतिशबाजी उद्योग में बाल श्रमिक सदैव खतरनाक रसायनों के सम्पर्क में रहते हैं। सल्फर, पोटाश तथा फास्फोरस जैसे रयासयनों के निरन्तर सम्पर्क में रहने के कारण इन बालकों को अनेक गम्भीर बीमारियाँ घेर लेती हैं।

उत्तर प्रदेश का चर्म उद्योग सम्पूर्ण विश्व में अपनी ख्याति रखता है। आगरा और कानपुर में बड़े पैमाने पर चमड़ा तथा चमड़े से बनी वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है। इन विभिन्न इकाइयों में भी बड़ी संख्या में बाल मजदूरों की उपस्थिति दर्ज की गई है। मृत पशुओं की खाल निकालना, उन्हें धोना, सुखाना, प्रसंस्करित करना पारम्परिक रूप से जाति आधारित पेशा है और इस काम को करने वाले कारीगर समाज के सबसे निचले समूह से आते है जिनमें बड़ी संख्या बाल श्रमिकों की भी होती है। योजना आयोग की पहल पर सन् 1995 में 'द इंस्टीट्यूट ऑफ एप्लायड मैन पावर रिसर्च" ने चमड़ा निर्माण के तीनों चरणों– मृत पशुओं के खाल निकालने, टैनरियों में खाल को प्रसंस्करित करने तथा चमडे से बनी चीजों के निर्माण में काम करने वाले मजदूरों के लिये काम की स्थितियों और उनके जीवन स्तर पर अध्ययन किया।[1] अध्ययन से पता चलता है कि चमड़ा निकालने से लेकर जूता बनाने तक का काम करने वाले लोगों को समाज अछूत मानता है, उन्हें अपने से अलग–थलग की रखता है। उनको अछूत मानना, उनके काम का गन्दा माहौल उन्हें गांवों की सरहद पर रखने या फिर शहरों की कुछ गन्दी बस्तियों में रहने को मजबूर करता है।

---

[1] Laxmidhar Mishra – Bharat Men Bal Mazdoor : Najuk Bachapan, Muskil Zimmedari, Sep. 2000. P. 176.

अध्ययन से पता चलता है कि चर्म उद्योग की बिना पंजीयन वाली इकाइयों में बड़े पैमाने पर बाल श्रमिक काम करते हैं। खुद चमड़ा कारीगर भी अपने बच्चों से छह वर्ष के आसपास से ही कुछ न कुछ काम कराने लगते हैं और उन्हें स्कूल नहीं भेजते है। अध्ययन में 38 प्रतिशत श्रमिक ऐसे पाये गये जिनकी आयु 15 वर्ष से कम थी। इनमें से अधिकांश बाल श्रमिक किसी न किसी प्रकार की बीमारी से पीड़ित पाये गये। ये बाल श्रमिक फूस या मिट्टी से बने हुये घरों में निवास करते हैं तथा प्रतिदिन 6 से 8 घण्टे तक गन्दे, बदबूदार वातावरण में कठिन परिश्रम करते है। निरन्तर चमड़े तथा रसायनों के सम्पर्क में रहने के कारण ये बाल श्रमिक त्वचा सम्बन्धी गम्भीर बीमारियों से ग्रस्त रहते हैं। अध्ययन में 8 प्रतिशत श्रमिक श्वांस सम्बन्धी बीमारियों से ग्रस्त पाये गये। इन बाल श्रमिकों की मासिक आय 500 से 800 रूपये प्रतिमाह आंकलित की गई। चमड़ा उतारने और धोने, सुखाने के दौरान साफ दिखने वाली गन्दगी और बदबू इस व्यवसाय में संलग्न श्रमिकों को समाज से अलग–थलग कर देती है।

हमारे देश के अनेक अनियन्त्रित उद्योगों में बाल श्रमिकों का बहुत बुरी तरह शोषण किया जाता है। यहाँ तक कि सरकार के कानून भी उनकी रक्षा नहीं कर पाते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि वहाँ पर इस ढंग से काम लिया जाता है कि कारखाना अधिनियम लागू नहीं हो पाता। सुश्री कामा[1] ने लिखा है कि हैदराबाद के वारंगल जिले में हस्तकरघे और गलीचे के उद्योगों में 1 से 20 स्त्रियाँ और बच्चे ऐसे गन्दे और अँधेरे कमरे में काम करते हैं, जहाँ अधिक से अधिक दो या 3 व्यक्ति काम कर सकते हैं। इनमें से अधिकांश बच्चों की दशा तो बहुत ही शोचनीय है। जिस स्थान पर उन्हें काम करना पड़ता है, वहाँ की भूमि गन्दे जल और चमड़े की सड़ी कतरन से भरी होती है, जिसकी भयंकर दुर्गन्ध नाक और

---

[1] Miss Kama : An Article published in Udyog Vyapar Patrika, New Delhi.

मस्तिष्क को फाड़ा करती है। ऐसे ही स्थान में 12 वर्ष तक के बच्चे काम करते हैं, खाना खाते है और आवश्यकता पड़ने पर विश्राम भी करते है।

गीता मेनन[1] के अनुसार मद्रास के गुब्बारे बनाने वाली फैक्ट्रियों में रबर को केमिकल से मिलाने का कार्य बच्चों के द्वारा किया जाता हैं। इसके अतिरिक्त गुब्बारे रंगने तथा उसमें भरी जाने वाली गैस का परीक्षण भी बच्चे करते है। उनके छोटे–छोटे कमरों के केमिकल मिली हवा तथा वायु फैलती रहती है। गीता मेनन ने यह स्पष्ट किया है कि ये बच्चे प्रतिदिन 8 से 9 घण्टे तथा सप्ताह में 6 दिन काम करते हैं और अधिकांशतः सांस की बीमारी, खाँसी एवं अन्य रोगों से ग्रस्त रहते हैं।

अनेक उद्योगों में बालकों को अपनी क्षमता से अधिक बोझा उठाना पड़ता है, जो उनके शारीरिक विकास को अवरूद्ध कर देता है। बालकों के कोमल शरीर में हल्का बोझ उठाने की सामर्थ्य भी नहीं होती है। उनका शरीर आसानी से मुड़ जाता है तथा विकासशील कोमल अंगों को नुकसान होता है। अधिक बोझा उठाने के कारण हड्डियों से सम्बन्धी गम्भीर शारीरिक दोष उत्पन्न हो जाते हैं। ऐसे में निर्धनता के कारण सन्तुलित आहार न मिलने से ये दोष स्थाई रूप ग्रहण कर लेते हैं।

शहरी क्षेत्रों में मजदूरी एवं कार्य की दशायें:

पिछले कुछ दशकों में नगरीय जनसंख्या में तीव्र वृद्धि हुई है। बड़ी संख्या में ग्रामीण जनसंख्या जीवन यापन साधनों के अभाव, अनिश्चित कृषि आय तथा शोषणकारी भूमि व्यवस्था के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में नगरीय क्षेत्रों की ओर प्रवास कर जाती है। स्वतन्त्रता के बाद नगरों की संख्या और नगरीय जनसंख्या में

---

[1] Menon Geeta : Health Problems of working children some observation : In Child Labour and health Problems. Edited by Usha S. Naidu and Kamini R. Kapadia, TISS Bombay, P. 212

तीव्र वृद्धि हुई है। नगरीय जनंसख्या में हुई इस तीव्र वृद्धि के लिये मुख्यतः दो कारण रहे हैं प्रथम प्राकृतिक जनसंख्या वृद्धि और द्वितीय ग्रामीण क्षेत्रों में नगरीय क्षेत्रों की ओर प्रवासी प्रवृत्ति। सार्वजनिक और संगठित निजी क्षेत्र में बड़े पैमाने के विनियोग, तकनीकी आयात तथा विभिन्न सार्वजनिक योजनाओं के परिणामस्वरूप नगरीय क्षेत्रों में रोजगार सम्भावनाओं का विस्तार हुआ है।

विकासशील देशों में प्रायः यह पाया गया है कि नगरीय श्रम बाजार में प्रवेश करने वाले अधिकांश प्रवासी श्रमिक छोटे असंगठित एवं श्रम आधारित तकनीक वाली उत्पादन इकाइयों में स्वयं रोजगार के अवसर तलाश लेते हैं। इस प्रकार बड़े पैमाने पर ग्रामीण क्षेत्रों में नगरीय क्षेत्रों की ओर प्रवास करने वाले श्रमिक संगठित क्षेत्रों में रोजगार के अभाव के कारण असंगठित क्षेत्रों में निम्न मजदूरी पर कार्य करने लगते हैं तथा अपने बच्चों को भी इन कार्यो में संलग्न कर लेते हैं।

यदि श्रमिकों की प्रवासी प्रवृत्ति का कारण जानने का प्रयास किया जाये तो यह स्पष्ट होता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में कार्य की अनुपलब्धता, अतिवृष्टि की स्थिति, निम्न आय स्तर आदि ऐसे कारण हैं जो उन्हें नगरीय क्षेत्रों की ओर आकर्षित करते हैं। ये प्रवासी श्रमिक अशिक्षा एवं किसी भी प्रकार के तकनीकी कौशल के अभाव के कारण लघु औद्योगिक इकाइयों में श्रमिक के रूप में कार्य तो प्राप्त कर लेते हैं परन्तु निम्न आय स्तर के कारण उन्हें जीवन यापन करने तथा परिवार की आवश्यकताओं को पूरा करने में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है जिससे विवश होकर उनकी स्त्रियों एवं बच्चों को भी रोजगार तलाशना पड़ता है। ये श्रमिक अपने बालकों को या तो अपने साथ ही काम पर लगा लेते हैं या बालक स्वयं अपना रोजगार तलाश लेते हैं। ये बालक फेरी वाले, फुटकर विक्रेता, घरेलू नौकर, होटलों एवं रेस्टोरेण्ट में, रिपेयरिंग की दुकानों, भीख मांगने के

कार्य या लघु औद्योगिक इकाइयों में बाल श्रमिक के रूप में कार्य करने में संलग्न हो जाते हैं जहाँ पर कार्य की दशायें, तथा मजदूरी का स्तर अत्यन्त निम्न तथा कार्य के घण्टे अत्यधिक होते हैं। इन बाल श्रमिकों को प्रायः कार्य के दौरान अत्यन्त शोषणकारी स्थितियों का सामना करना पड़ता है। औद्योगिक क्षेत्रों में कार्यरत बाल श्रमिकों की कार्यदशाओं, मजदूरी तथा कार्य के घण्टों का अध्ययन हम अध्याय के पिछले भाग में कर चुके हैं। अध्याय के इस भाग में हम शहरी क्षेत्रों के अन्य विभिन्न कार्यो में संलग्न बाल श्रमिकों की मजदूरी एवं कार्यदशाओं का वर्णन करने का प्रयास करेंगे। इस कार्य के लिये हमने विभिन्न कार्यो में संलग्न बाल श्रमिकों से बातचीत के माध्यम से निष्कर्ष निकाले हैं।

नगरीय क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर बाल श्रमिकों को आटो रिक्शा, स्कूटर, कार आदि की रिपेयरिंग की दुकानों में कार्य करते हुये आसानी से देखा जा सकता है। ये रिपेयरिगं सेन्टर मुख्य रूप से सड़क के किनारे की दुकानें होती हैं। इन दुकानों में कार्य की दशायें एवं वातावरण अत्यन्त गन्दा होता है। सड़क के किनारे स्थित होने के कारण वहाँ का वातावरण धूल एवं वाहनों से निकलने वाले धुयें के प्रदूषण से युक्त होता है। इन रिपेयरिंग दुकानों के मालिक छोटे–छोटे बालकों को काम पर लगा लेते हैं। इन बाल श्रमिकों की आयु 8 से 12 वर्ष तक होती है जिन्हें अत्यन्त कम मजदूरी दी जाती है। इन बालकों के अधिकांश माता–पिता उन्हें निम्न मजदूरी पर काम करने के लिये मालिकों के पास प्रायः इस उद्देश्य से छोड़ देते हैं कि वे इस कार्य को सीखकर भविष्य में अपनी जीविका अर्जित करने में समर्थ हो जायेंगे।

इन दुकानों में कार्य करने वाले बाल श्रमिक अत्यन्त गन्दे कपड़े पहनते हैं तथा प्रतिदिन नहाने में भी असमर्थ होते हैं। ये बालक सुबह से लेकर

शाम तक वयस्क मैकेनिकों के साथ सहायक के रूप में कार्य करते हैं। कार्य के दौरान छोटी सी गलती होने पर मालिकों द्वारा इनसे अक्सर गाली–गलौज एवं मारपीट की जाती है। कभी–कभी वयस्क कारीगरों की गल्ती की सजा भी इन बाल श्रमिकों को मिल जाती है क्योंकि भय के कारण वे अपनी बात कहने में असमर्थ होते है। इन बाल श्रमिकों को दिन में एक या दो बार चाय या कभी–कभी कुछ नाश्ता दिया जाता है। कुछ बड़े–बड़े वर्कशाप में तो इन श्रमिकों को रिपेयरिंग, गाड़ियों की रंगाई, बैटरी चार्जिंग जैसे सभी कार्य करने पड़ते हैं। बिजली द्वारा बैटरी की चार्जिंग करते समय इन श्रमिकों को सदैव खतरा बना रहता है क्योंकि यहाँ स्विच बोर्डों में लगे बिजली के तार प्रायः खुले रहते हैं जिसमें थोड़ी सी भी लापरवाही इन श्रमिकों की मृत्यु का कारण बन सकती है। इन बालकों से भारी बोझ जैसे इंजन, टायर तथा बैटरी को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाने जैसे कार्यो की अपेक्षा की जाती है। इतने कठिन परिश्रम के बावजूद प्रायः इन बाल श्रमिकों को औसतन 15 से 20 रूपये प्रतिदिन की दर से मजदूरी दी जाती है। किसी भी प्रकार की बीमारी की स्थिति में सेवायोजक के द्वारा किसी भी प्रकार की सहानुभूति का प्रदर्शन नहीं किया जाता है। औजारों के साथ निरन्तर कार्य करने में निरन्तर खतरा बना रहता है। मैकेनिक का कार्य करने वाले ये श्रमिक अक्सर इन औजारों से घायल होते रहते हैं जिसके बदले में उन्हें किसी भी प्रकार की प्राथमिक चिकित्सा भी उपलब्ध नहीं होती है।

घरेलू नौकरों के रूप में कार्य करने वाले बच्चों की संख्या भी शहरी क्षेत्रों में पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है जिनमें बालिकाओं का प्रतिशत बालकों से अधिक है। बालिकायें कम आयु में ही खाना पकाने के साथ ही घरों की सफाई, कपड़ों की धुलाई तथा बर्तन साफ करने के कार्यो में संलग्न हो जाती है। वर्तमान भारतीय समाज में आर्थिक रूप से समृद्ध अधिकांश परिवारों में इस प्रकार के घरेलू

नौकरों को आसानी से देखा जा सकता है। शहरी क्षेत्रों में ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा इस प्रकार के कार्यो की अधिकता है। घरेलू सेवाओं में भी निर्धन महिलायें प्रायः अपनी कम आयु की बालिकाओं को अपने साथ काम पर ले जाती हैं तथा उन्हीं के माध्यम से इन बालिकाओं को भी सेवा कार्य में संलग्न कर लिया जाता है। घरेलू सेवाओं में कार्यरत ये बालिकायें या तो अंशकालीन रूप से विभिन्न घरों में कार्य करती हैं या केवल एक ही परिवार में पूरे समय के लिये कार्य करती हैं। अंशकालीन आधार पर कार्य करने वाली बालिकाओं की आय प्रायः स्थाई रूप से एक ही परिवार में कार्य करने वाली बालिकाओं से अधिक होती है। विभिन्न घरों में कपड़ों या बर्तनों की सफाई का कार्य करने वाली बालिकाओं की औसत मजदूरी 200 से 250 रूपये प्रति परिवार प्रतिमाह होती है जबकि स्थाई रूप से एक ही परिवार में कार्य करने वाली बालिकाओं को 500 से 700 रूपये प्रतिमाह ही प्राप्त होते हैं।

कार्य करने वाली ये बालिकायें प्रायः पूरे दिन कठिन परिश्रम करती हैं। वे सुबह से रात्रि तक खाना पकाने, घर की सफाई, कपड़ों की धुलाई तथा बर्तन मांजने के कार्य तो करती ही हैं साथ ही परिवार के छोटे बच्चों की देखभाल भी करती है। कुछ परिवारों में जहाँ पति और पत्नी दोनों नौकरी करते हैं। सम्पूर्ण घर की देखभाल करने की जिम्मेदारी इन बालिकाओं की होती है। इतने परिश्रम एवं जिम्मेदारी से कार्य करने के बाद भी प्रायः इन परिवारों द्वारा उन पर विश्वास नहीं किया जाता है। किसी प्रकार का आर्थिक नुकसान होने पर उनके ऊपर आरोप लगाये जाते हैं, उन्हें अपमानित किया जाता है, तथा कभी–कभी उनके साथ मारपीट तक की जाती है।

छोटे एवं बड़े सभी प्रकार के शहरों में होटलों एवं रेस्टोरेन्ट में बाल श्रमिकों के लिये पर्याप्त रोजगार के अवसर विद्यमान होते हैं। शहरी क्षेत्रों में चाय एवं काफी की दुकानों, मिठाई की दुकानों, होटलों एवं रेस्टोरेन्ट में आसानी से बाल श्रमिकों को कार्य करते हुये देखा जा सकता है। पिछले कुछ दशकों में नगरीकरण के विस्तार के फलस्वरूप विभिन्न कार्यो से अन्य शहरों में आने एवं जाने वालों की संख्या में तीव्र वृद्धि हुई है जिसके कारण होटल एवं रेस्टोरेन्ट व्यवसाय में भी पर्याप्त वृद्धि हुई है। अपने जन्म स्थान से शहरी क्षेत्रों की ओर प्रवास करने वाले निर्धन परिवार अपने बच्चों की शिक्षा एवं मनोरंजन सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ होते हैं जिस कारण ये बच्चे रोजगार की तलाश में इधर–उधर भटकते हैं तथा होटलों, रेस्टोरेन्टों एवं चाय की दुकानों में कार्य करने लगते हैं। सेवायोजक द्वारा इन बच्चों को आसानी से काम पर रख लिया जाता है क्योंकि उनका मुख्य उद्देश्य निम्नतम लागत पर अपने लाभ को अधिकतम करना होता है।

होटलों एवं रेस्टोरेन्ट में काम करने वाले इन बाल श्रमिकों का कार्य समय प्रतिदिन सुबह 5 बजे से शुरू होकर रात्रि के 10 या कहीं–कहीं 11 बजे तक होता है। इस दौरान उन्हें दुकान की साफ सफाई के साथ मेजों और कुर्सियों की सफाई, ग्राहकों को चाय, नाश्ता या भोजन पहुँचाना, पानी पिलाना, बर्तनों की सफाई करना जैसे कार्य करने पड़ते हैं। छोटी सी गलती होने या किसी प्रकार का नुकसान होने पर उन्हें मालिकों के कोप का शिकार होना पड़ता है। 12 से 15 घण्टे तक कार्य करने के पश्चात उन्हें औसतन 1000 से 1200 रूपये तक मासिक वेतन तथा दिन का भोजन दिया जाता है। इन बाल श्रमिकों को पानी के निरन्तर सम्पर्क में रहने के कारण हाथों एवं पैरों में अक्सर संक्रमण हो जाता है, सब्जी काटने के दौरान कभी–कभी उंगलियाँ कट जाती हैं तथा ग्राहकों की सेवा के दौरान अक्सर हाथों के जलने जैसी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इस

प्रकार की परेशानियों के दौरान भी उन्हें किसी प्रकार की प्रारम्भिक चिकित्सा सुविधा प्राप्त नहीं होती है। शिक्षा एवं किसी प्रकार की योग्यता के अभाव में इन बाल श्रमिकों का सम्पूर्ण जीवन बंधुआ मजदूरों की भाँति होता है जिससे उबरने की भावी सम्भावना अत्यन्त कम होती है।

तीव्र औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप जहाँ एक ओर उधोगों का विकास एवं नये–नये उद्योगों की स्थापना हुई हैं, वहीं इन उद्योगों से निकलने वाली बेकार की वस्तुओं एवं पैकिंग सामग्री को सड़कों और कूड़ाघरों में फेंक दिया जाता है। घरों से निकलने वाले कूड़े को भी कूड़ाघरों एवं सडकों पर फेंक दिया जाता है जिन्हें विशाल कूड़े के ढेरों के रूप में किसी भी छोटे–बड़े शहरों में आसानी से देखा जा सकता है। इन्हीं हजारों टन कूड़े के ढेर में हजारों की संख्या में व्यक्तियों, बच्चों और महिलाओं को कूड़ा बीनते हुये भी देखा जा सकता है। इनमें बाल श्रमिकों की संख्या सर्वाधिक होती है। ये बाल श्रमिक कूड़े के ढेरों में से कागज, प्लास्टिक, काँच, टीन, लोहा एवं अन्य धातुओं के टुकड़ों को एकत्रित करके अत्यन्त निम्न कीमत पर बड़े व्यापारियों को बेंच देते हैं। ये बड़े व्यापारी उसी एकत्रित सामग्री को बड़े–बड़े उद्योगों को कच्चे माल के रूप में अधिक मूल्य पर बेंचकर बड़ी मात्रा में लाभ अर्जित करते हैं।

कूड़ा बीनने के कार्य में संलग्न ये बाल श्रमिक प्रतिदिन 10 से 15 किमी० पैदल चलकर अपनी आवश्यकता की वस्तुओं को एकत्रित करते हैं। इस सम्पूर्ण कार्यावधि के दौरान उन्हें अत्यन्त गन्दे एवं अस्वास्थ्यकर वातावरण में रहना पड़ता है। इस गन्दे वातावरण में रहने के कारण ये बाल श्रमिक प्रायः हैजा, टी०बी०, दमा एवं त्वचा सम्बन्धी अन्य गम्भीर संक्रामक बीमारियों से ग्रस्त रहते हैं। इसके अतिरिक्त इन श्रमिकों के पास रहने के लिये पर्याप्त आवासीय सुविधा भी

नहीं होती। ये श्रमिक प्रायः रेलवे लाइन के किनारे या अन्य गन्दी जगहों पर अपनी बस्तियाँ बनाकर रहते हैं जहाँ वे एकत्रित कूड़े को भी इकट्ठा करते हैं। इन बस्तियों का वातावरण भी अत्यन्त प्रदूषित होता है। जहाँ बिजली, पानी, एवं नित्य क्रियाओं से सम्बन्धित सुविधाओं का पूरी तरह अभाव होता है। शिक्षा के अभाव में एवं प्रदूषित वातावरण में रहने के कारण ये बालक प्रायः शराब पीने, जुआँ खेलने, पान मसाला एवं अन्य नशीली वस्तुओं का सेवन करने लगते हैं जो इनके भविष्य को और अधिक अन्धकारमय बना देता है।

शहरी क्षेत्रों में शिक्षा व्यवस्था के प्रसार के परिणामस्वरूप प्रिन्टिग एवं बाइन्डिंग कार्यो का विस्तार हुआ है। इन प्रिन्टिगं प्रेसों एवं बाइडिंग के कार्यो में बड़े पैमाने पर बाल श्रमिक कार्यरत हैं। प्रिन्टिंग प्रेसों में ये बच्चे पेजों की नम्बरिंग करने, पुस्तकों की बाइन्डिंग करने, कागज को मोड़ने, गोंद या लेई लगाने तथा कागज की कटाई करने जैसे कार्यो में संलग्न होते हैं। ये प्रिन्टिग प्रेस तथा बाइन्डिंग की दुकानें प्रायः घनी आबादी में संकरी गलियों के मध्य होते हैं जहाँ पर्याप्त धूप एवं स्वच्छ वायु का अभाव होता है। ये बाल श्रमिक प्रतिदिन औसतन 8 से 10 घण्टे तक कार्य करते हैं जिन्हें कोई साप्ताहिक अवकाश भी प्राप्त नहीं होता है। इन श्रमिकों को 15 से 20 रूपये प्रतिदिन में रखकर गन्तव्य स्थान तक पहुँचाने का कार्य भी करना पड़ता है।

औद्योगिक संस्थाओं के अतिरिक्त अनेक ऐसे अ–औद्योगिक व्यवसाय भी है जहाँ बच्चों को पशुवत् जीवन व्यतीत करना पड़ना है। ऐसे व्यवसायों में सिनेमा, शराबखाने, जुआघर, गिरहकटी चोरी आदि मुख्य हैं। इन व्यवसायों में बच्चों को लाने के लिये प्रत्येक नगर में एजेण्ट होते हैं, जो गांवों से निर्धन माता–पिता को बहलाकर उनके बच्चों को शहर में ले आते हैं, जहाँ उनको छोटी–मोटी नौकरी

दिलाकर अनेक भद्दे काम करवाते हैं। अनेक शिक्षित परिवारों में भी काम करने वाले बालकों को प्रातः 5 बजे से रात्रि के 11 बजे तक काम करना पड़ता है और प्रतिफलस्वरूप उन्हें 250–300 रू0 प्रतिमाह, फटे पुराने कपड़े एवं जूठन दी जाती है। यही नहीं उन्हें छोटी–छोटी गलतियों के लिये मालिकों की कड़ी डाँट व मारपीट सहनी पड़ती है। कुछ व्यक्ति तो बालक–बालिकाओं को अपने यहाँ रखकर उनसे अनैतिक कार्य करते अथवा करवाते हैं। इस सब कार्यो से उनका कितना नैतिक और शारीरिक पतन होता है, इसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।

कृषि अर्थव्यवस्था में मजदूरी एवं कार्य की दशायें:

हमारे देश की अर्थव्यवस्था मुख्यतः कृषि प्रधान है, अतः यहाँ स्वाभाविक रूप से कृषि उद्योग में भी बाल श्रम का बड़े पैमाने पर उपयोग किया जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में बच्चे वयस्क श्रमिकों के साथ कृषि कार्य में संलग्न रहकर उनकी सहायता करते हैं। इस सहायता के अतिरिक्त बालकों की कुछ संख्या आजीविका के रूप में भी कृषि कार्य करती है। ये बालक मुख्यतः पशु चराना, खेती की रखवाली करना, रोपाई करना, फसलें एकत्र करना तथा बोझा ढ़ोने जैसे कार्य करते हैं। श्रम मंत्रालय की श्रमिक जाँच के निष्कर्षो के अनुसार कुल श्रमिकों का 5.58 प्रतिशत बाल श्रमिक हैं किन्तु इसके अतिरिक्त सहायक बाल–श्रम का अनुपात 24 प्रतिशत है।

कृषि अर्थव्यवस्था वाले देशों में जनसंख्या का एक बड़ा प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले व्यक्तियों का होता है जिनका मुख्य व्यवसाय कृषि होता है। भारत एक कृषि प्रधान देश है यहाँ की कुल कार्यशील जनसंख्या का 58.4 प्रतिशत भाग कृषि व्यवसाय में लगा है। यहाँ की लगभग 72.2 प्रतिशत

जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है तथा किसी न किसी प्रकार के कृषि अथवा कृषि आधारित व्यवसाय में संलग्न है फिर भी कृषि व्यवसाय का राष्ट्रीय आय में योगदान केवल 25 प्रतिशत ही है।[1] इसका प्रमुख कारण ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त व्यापक निर्धनता है। भारत की लगभग 26.1 प्रतिशत जनसंख्या जो मुख्यतः कृषि कार्यो में संलग्न है निर्धनता की रेखा से नीचे जीवन यापन करने को विवश है। इस निर्धनता का प्रमुख कारण ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त व्यापक बेरोजगारी, कृषि की मौसमी प्रकृति, कृषि संसाधनों का अभाव, शिक्षा संचार, परिवहन एवं अन्य विकास संसाधनों का अभाव, रूढ़िवादी प्रकृति आदि अनेक कारण हैं। हमारे देश में कृषि व्यवसाय में संलग्न श्रमिकों या कृषकों को वर्ष में अधिकतम 290 दिन ही कार्य उपलब्ध रहता है जिसमें वे कृषि तथा उससे सम्बन्धित अन्य कार्य करते हैं। वर्ष के शेष 75 दिनों में उनके पास अन्य किसी भी प्रकार के रोजगार का सर्वथा अभाव रहता है। इन अतिरिक्त दिनों में उनके जीवन यापन का मुख्य आधार पूर्व अर्जित आय ही होती है। यही कारण है कि अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने एवं परिवार के भरण–पोषण के लिये अतिरिक्त धन की आवश्यकता को पूरा करने के लिये वे अपने बच्चों को कार्य में भेजने के लिये विवश होते हैं।

सीमान्त कृषकों एवं भूमिहीन कृषकों के बच्चे कम उम्र में ही कृषि व्यवसाय में संलग्न हो जाते हैं। ये बच्चे खेतों में अपने अभिभावकों के सहायक के रूप में कार्य करते हैं। अपनी क्षमता के अनुसार वे फसलों की बुआई, निराई, कटाई, तथा फसलों की देखरेख का काम करते हैं तथा साथ ही जानवरों को चराना तथा उनकी देखरेख करने का काम भी इन बालकों के द्वारा किया जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे–छोटे बच्चों को गन्दे कपड़े पहने तथा कड़ी धूप में नंगे पैर काम करते तथा जानवरों को चराते हुये आसानी से देखा जा सकता है। इसके

[1] Economic Survey, 2002 - 2003, P - 213.

अतिरिक्त बड़ी संख्या में ग्रामीण बालक सब्जी एवं फल बेंचते हुये भी देखे जा सकते हैं।

यदि आंकड़ों पर दृष्टिपात करें तो यह स्पष्ट होता है कि भारत में बाल श्रमिकों की संख्या शहरी क्षेत्रों की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्रों से अधिक है। कुल बाल श्रमिकों का 90 प्रतिशत भाग ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यमान है, जिनमें कृषक 35.93 प्रतिशत, कृषि मजदूर 42.75 प्रतिशत, पशुपालन, वानिकी तथा मत्स्य में 06.30 प्रतिशत तथा शेष अन्य कार्यो में संलग्न है। कृषि क्षेत्र से सम्बन्धित कुछ अध्ययनों में यह पाया गया कि कुछ क्षेत्रों में कृषि श्रमिकों के रूप में कार्य करने वाले श्रमिकों को वर्ष में केवल 120 दिन ही कार्य उपलब्ध रहता है। बाकी के दिनों में अपनी प्रतिदिन की आवश्यकताओं को पूरा करने, शादी विवाह या अन्य आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये धन की आवश्यकता होने पर वे साहूकारों या भूमालिकों से कर्ज लेने के लिये विवश हो जाते हैं जो उन्हें एवं उनके बच्चों से बंधुआ श्रमिक के रूप में कार्य लेते हैं।[1] कर्जदार श्रमिकों के बच्चे मालिक के खेतों में काम करते हैं तथा उनके जानवरों की देखभाल करते हैं, 1978 में गाँधी शान्ति मिशन तथा राष्ट्रीय श्रम संस्था द्वारा संयुक्त रूप से उत्तर प्रदेश सहित आठ राज्यों में बंधुआ मजदूरों पर कराये गये एक सर्वेक्षण में पाया गया कि इन राज्यों में कृषि श्रमिक के रूप में कार्य करने वाले 37 लाख श्रमिकों में से बंधुआ मजदूरों की संख्या 21.7 लाख थी।[2] निम्न तथा असुरक्षित कार्य दशाओं में कार्य कर रहे इन बाल श्रमिकों पर बुरा प्रभाव पड़ता है। कृषि व्यवसाय में बालकों को अनेक कठिन एवं हानिकारक कार्य करने पड़ते हैं। अत्यधिक परिश्रम के साथ ही साथ कृषि कार्य में प्रयुक्त होने वाले उर्वरकों तथा कीटनाशक दवाओं का उनके स्वास्थ्य पर सीधा प्रभाव पड़ता है।

---

[1] Das A.N., "On Human Bondage" in Main Stream No. 35, 1976.
[2] Chaudhari K. - 'Bonded Labour' EPW No. 10, 1978.

चतुर्थ अध्याय

बाल श्रम उन्मूलन तथा उनके पुनर्वास हेतु किये गये प्रयास अथवा कार्य

सम्पूर्ण विश्व में बच्चों को भावी सामाजिक विकास का आधार स्तम्भ माना जाता है। किसी सभ्य समाज में समाजीकरण की स्थिति का पता वहाँ के बच्चों को मिलने वाली सुरक्षा एवं संरक्षण से लगाया जा सकता है। यह एक सर्वज्ञात तथ्य है कि पारिवारिक आय में वृद्धि करने एवं परिवार में आर्थिक स्थिरता लाने के लिये प्रायः निर्धन परिवार के बालक श्रम बाजार में प्रवेश करते हैं, जहाँ अधिकांश बालक शोषण तथा अन्याय का शिकार होते हैं। किसी भी राष्ट्र में मानव संसाधनों के विकास की योजना वहाँ के बालकों के शारीरिक और मानसिक, विकास पर निर्भर करती है। अति प्राचीन काल से बालक अपने माता–पिता एवं बड़ों के सहयोग के लिये कार्य करते रहे हैं। बालकों द्वारा बाल श्रमिक के रूप में किये जाने वाले कार्यो को साधारणतया निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जाता है, (अ) मौद्रिक कार्य एवं (ब) अमौद्रिक कार्य। मौद्रिक कार्य अधिकांशतः बालकों को असंगठित क्षेत्र की लघु औद्योगिक इकाइयों द्वारा प्रदान किया जाता है। बालकों द्वारा किये जाने वाले घरेलू उत्पादक कार्य प्रायः अमौद्रिक होते हैं जिसके लिये उन्हें किसी प्रकार की मजदूरी नहीं मिलती है। इस प्रकार बाल श्रमिकों की प्रमुख विशेषतायें निम्न हो सकती हैं– (अ) बाल श्रमिक के रूप में कार्य करने वाले बच्चों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही हैं, (ब) अधिकांश बाल श्रमिक असंगठित क्षेत्र में कार्य कर रहे हैं, तथा (स) बालक खतरनाक एवं स्वास्थ्य के लिये हानिकारक उद्योगों में भी कार्य कर रहे हैं।

1972 में जेनेवा में हुये अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन के 57वें अधिवेशन की रिपोर्ट में यह कहा गया कि बालकों की कुल जनसंख्या का 90 प्रतिशत भाग

विश्व के विकासशील देशों में बाल श्रमिक के रूप में कार्य कर रहा है। रिपोर्ट में यह भी कहा गया कि 0–14 आयु वर्ग के 41,125,000 बच्चे 1960 में कार्य में संलग्न थे जो कुल बाल जनसंख्या का 5.1 प्रतिशत था जबकि 1970 में यह संख्या घटकर 39,975,000 हो गई जो कि कुल बाल जनसंख्या का 4 प्रतिशत था।[1]

सामाजिक न्याय और विश्व शांति के काम को आगे बढ़ाने के लिये 1919 में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की स्थापना हुई। भारत दस संस्थापक (बिना चुनाव से आये) और स्थाई देशों में से एक है और इसके चलते इस अन्तर्राष्ट्रीय संस्था में उसे विशेष दर्जा प्राप्त है। 1944 में फिलाडेल्फिया में संगठन के 26वें अधिवेशन में इसके उद्देश्यों तथा लक्ष्यों को नये सिरे से परिभाषित किया गया। यहाँ यह भी माना गया कि श्रम बाजार में बिकने वाली अन्य चीजों की तरह सामान नहीं है और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता तथा संगठन बनानें की स्वतन्त्रता स्थायी और निरन्तर विकास के लिये बहुत आवश्यक चीजें है। यही पहली बार माना गया कि जाति, लिंग और धर्म चाहे जो हो सभी लोगों को अपने भौतिक सुख–साधनों और नैतिक विकास का अधिकार है। तथा इसके लिये स्वतन्त्रता आत्म सम्मान, आर्थिक सुरक्षा और अवसर की समानता जरूरी है। सभी राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय नीतियों के निर्धारण में इस बात को केन्द्र में रखना आवश्यक है। इसी पृष्ठभूमि और इन्ही नीतियों को ठोस रूप देने के लिये (जून 1999 में हुये सम्मेलन सहित) अब तक हुये सभी अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलनों ने 182 मानदण्डों और सुझावों को मंजूरी दी है। इन मानदण्डों और सुझावों – प्रस्तावों को सदस्य देशों द्वारा अपने–अपने यहाँ मंजूर कराने का अनुभव अलग–अलग है, लेकिन इससे इन व्यवस्थाओं का महत्व कम नहीं हो जाता।

---

[1] G.P. Mishra and P.N. Pandey – 'Child Labour in Glass Industry'; A.P.H. Publishing Corporation, New Delhi, P – 79.

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का मानना है कि बाल अवस्था मनुष्य के विकास का सबसे नाजुक, सबसे महत्वपूर्ण और सबसे सुगमता से नये सांचे में ढ़ाली जा सकने वाली अवस्था है और इसी के चलते सम्मेलन ने विभिन्न क्षेत्रों तथा अलग–अलग स्थितियों में बाल श्रम को रोकने सम्बन्धी 19 प्रस्ताव एवं सुझाव पास किये हैं। सम्मेलन द्वारा पास प्रस्ताव सुरक्षा और स्वास्थ्य तथा कामकाजी बच्चों के लिये अलग व्यवस्था बनाने जैसे अनेक मसलों से जुड़े हैं। बच्चों से बंधुआ मज़दूरी कराने, बाल वेश्यावृत्ति जैसी गम्भीर समस्याओं पर भी सम्मेलन ने अपने प्रस्ताव नं0 29 में विचार किया है और इन सबको जबरन काम कराने वाली एक विस्तृत श्रेणी में माना है।

बच्चों के हितों की रक्षा के लिये अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने उनके रोजगार में प्रवेश की न्यूनतम आयु, रात्रि कालीन कार्य तथा उनके चिकित्सकीय परीक्षण से सम्बन्धित अनेक प्रावधान एवं सुझाव अपनाये हैं। इसके अतिरिक्त बाल श्रम समस्या को नियन्त्रित करने तथा उसे समाप्त करने के लिये कुछ अन्य प्रयास भी किये गये हैं। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के 23वें अधिवेशन (1937) में एक प्रावधान अपनाया गया जिसमें भारत के संदर्भ में एक विशेष अनुच्छेद था जिसमें यह प्रावधान था कि व्यवसायों में बालक कार्य कर सकते हैं तथा कार्य में प्रवेश की उनकी न्यूनतम आयु सीमा क्या होगी। संयुक्त राष्ट्र की साधारण सभा ने 21 दिसम्बर, 1976 को अपने 31/169 घोषणा पत्र में वर्ष 1979 को अन्तर्राष्ट्रीय बाल वर्ष के रूप में मनाने का दृढ़ संकल्प किया था। इस संकल्प का मुख्य उद्देश्य वैश्विक स्तर पर बच्चों के हितों की रक्षा के प्रति जागरूकता लाना तथा उनकी विशेष आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुये राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास करना था। संयुक्त राष्ट्र द्वारा वर्ष 1979 को अन्तर्राष्ट्रीय बाल वर्ष घोषित किये जाने के निर्णय ने पुनः बाल श्रम समस्या की ओर विश्व का ध्यान आकर्षित किया।

सरकारी प्रयासों के अनुपूरक कार्यक्रमों के रूप में सन् 1992 में राष्ट्रीय स्तर पर इण्टरनेशनल प्रोग्राम आन दि इलिमेनेशन ऑफ चाइल्ड लेबर (आइपेक) तथा चाइल्ड लेबर एक्शन सपोर्ट प्रोग्राम (कलास्प) नामक दो समानांतर कार्यक्रम अन्तर्राष्ट्रीय वित्त पोषक अभिकरणों के माध्यम से चलाये गये। इन कार्यक्रमों से सरकारी तथा गैर–सरकारी अभिकरणों की क्षमताओं में वृद्धि और उनके कार्यकर्ताओं के माध्यम से मानव संसाधनों का विकास अभिप्रेत है। इन कार्यक्रमों का कार्यान्वयन केन्द्रीय श्रम सचिव की अध्यक्षता में गठित राष्ट्रीय संचालन समिति के सम्पूर्ण मार्गदर्शन और पर्यवेक्षण के अधीन किया जाता है। इस संचालन समिति में सरकारी तथा गैर सरकारी संगठनों के प्रतिनिधि भी शामिल हैं।

इण्टरनेशनल प्रोग्राम आन दि इलिमेनेशन ऑफ चाइल्ड लेबर (आइपेक) अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की एक विश्वव्यापी परियोजना है। इसका दीर्घकालीन लक्ष्य बालश्रम को कारगर तरीके से समाप्त करना है। विश्व के कई देशों में चल रही इस परियोजना में भारत ने सबसे पहले भाग लिया था। इस परियोजना का सबसे व्यापक और सर्वश्रेष्ठ कार्यान्वयन भी भारत में ही किया जा रहा है। आइपेक की विभिन्न कार्य योजनाओं के माध्यम से भारत के लगभग 81000 श्रमिक लाभान्वित हुये हैं।

चाइल्ड लेबर एक्शन सपोर्ट प्रोग्राम (कलास्प) जर्मनी सरकार के वित्तीय सहयोग से अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के तत्वाधान में भारत में चलाया जा रहा था। इसका मुख्य उद्देश्य बाल श्रम कार्यक्रमों का कार्यान्वयन कर रहे अभिकरणों की क्षमताओं को सुदृढ़ बनाना था। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत प्राप्त धनराशि का उपयोग राष्ट्रीय बाल श्रम नीति के अधीन चल रहे कार्यकलापों के सहायतार्थ किया गया।

बालकों के कल्याण और उनकी कार्य दशाओं में सुधार के उद्देश्यों को प्राप्त करने तथा बालकों के अधिकारों के समझौतों (कन्वेन्शनों) के सुचारू कार्यान्वयन में पक्ष समर्थन जुटाने के लिये यूनीसेफ ने श्रम को अपनी नीतियों के मुख्य अंग के रूप में मान्यता प्रदान की है। यूनीसेफ के उद्देश्य इस प्रकार हैः–

- बाल श्रम उन्मूलन की मूलभूत रणनीति के रूप में अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा को बढ़ावा देना एवं इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये स्कूलों में बालकों के प्रवेश तथा उनकी शिक्षा जारी रखना सुनिश्चित करना।
- बाल श्रमिकों का जोखिमपूर्ण उद्योगों में प्रतिषेध सुनिश्चित करना, कानूनों का पुनरीक्षण करना एवं प्रवर्तन के प्रति पक्ष समर्थन को बढ़ावा देना।
- बाल श्रमिकों को काम से मुक्ति दिलाना और उनके पुनर्वास के लिये कार्यक्रम तथा कार्य योजनायें विकसित करने में केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकारों की सहायता करना।
- सभी क्षेत्रीय तथा विकासात्मक कार्यक्रमों के अभिसरण को बढ़ावा देना।
- बाल श्रम कार्यक्रमों की अनुश्रवण प्रणाली को मजबूत बनाना।
- बाल श्रम के उन्मूलन के समर्थन के लिये समाज को आगे लाने में स्वैच्छिक संगठनों, संचार माध्यमों, उद्योगों तथा विधितन्त्र के आपसी सहयोग को मजबूती प्रदान करना।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर श्रम से सम्बन्धित समस्याओं के समाधान एवं उनके हितों की रक्षा का उत्तरदायित्व अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने बाल श्रम उन्मूलन तथा बाल श्रमिकों को शोषण से बचाने तथा उन्हें

विकास हेतु आवश्यक संसाधनों की उपलब्धता कराने हेतु समय–समय पर विभिन्न नीतिगत निर्णय लिये तथा विभिन्न अधिनियमों का निर्माण किया है।

अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों द्वारा किये गये प्रयासः

1919 में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की स्थापना के समय से ही यह बाल श्रम समस्या के स्थाई समाधान तथा बालकों के हितों की रक्षा के प्रति गम्भीर रहा है। यद्यपि अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के संविधान की प्रस्तावना में उल्लिखित है कि "श्रम बाजार में श्रमिकों की स्थिति अन्यायपूर्ण, कठोर परिश्रम तथा सुविधाओं के अभाव से परिपूर्ण है जिससे संसार की सुख एवं शांति के लिये खतरा है", और इसीलिये "उन दशाओं में शीघ्र ही सुधार की आवश्यकता है।"[1]

बाल श्रम समस्या का समाधान और बालकों के हितों की रक्षा अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के दो प्रमुख उद्देश्य हैं। अपने प्रावधानों में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने इस प्रकार के कार्यो को बड़े पैमाने पर ध्यान में रखा है। बालकों के रोजगार से सम्बन्धित सुझावों एवं संकल्पों में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने 18 प्रावधान स्वीकार किये हैं जो रोजगार की न्यूनतम आयु, चिकित्सीय परीक्षण और बालकों के रात्रि कालीन कार्यो से सम्बन्धित हैं। कुछ प्रमुख प्रावधान (Convention) निम्नलिखित है।

1. न्यूनतम आयु (उद्योग) अधिनियम, 1919
2. न्यूनतम आयु (कृषि) अधिनियम, 1921
3. न्यूनतम आयु (गैर–औद्योगिक रोजगार) अधिनियम, 1932
4. न्यूनतम आयु (उद्योग) अधिनियम (संशोधित), 1937

---
[1] I.L.O. Minimum Age for Admission to Employment Report IB (1), PP-3.

5. न्यूनतम आयु (मछुआरा) अधिनियम, 1959

6. न्यूनतम आयु (भूमिगत कार्य) अधिनियम, 1965

7. न्यूनतम आयु अधिनियम, 1973

बाल श्रमिकों के चिकित्सीय परीक्षण से सम्बन्धित अधिनियम–

1. युवा व्यक्तियों को चिकित्सीय परीक्षण (समुद्र) अधिनियम, 1921

2. युवा व्यक्तियों का चिकित्सीय परीक्षण (उद्योग) अधिनियम, 1946

रात्रि कालीन कार्यों से सम्बन्धित अधिनियम–

1. युवा व्यक्तियों के रात्रिकालीन कार्य (उद्योग) से सम्बन्धित अधिनियम, 1919

2. युवा व्यक्तियों के रात्रिकालीन कार्य (उद्योग) से सम्बन्धित संशोधित अधिनियम, 1948

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की स्थापना के बाद उसके प्रथम अधिवेशन में ही एक अधिनियम स्वीकृत किया गया जो कि औद्योगिक कार्यों में बालकों के रोजगार की न्यूनतम आयु सीमा के निर्धारण से सम्बन्धित था। औद्योगिक कार्यों में रोजगार से सम्बन्धित अधिनियम (नं0–5) 1919 में यह प्रावधान है कि 14 वर्ष से कम आयु का कोई भी बालक सार्वजनिक अथवा निजी औद्योगिक साहसपूर्ण कार्यों में प्रवेश नहीं कर सकता। "औद्योगिक साहसपूर्ण कार्यों" से तात्पर्य खान, उत्पादन उद्योग, निर्माण कार्य, रिपेयरिंग कार्यों, यात्री परिवहन तथा सड़क, रेल अथवा जल मार्ग से सामान लाने ले जाने वाले कार्यों से है।

न्यूनतम आयु से सम्बन्धित प्रथम अधिनियम (औद्योगिक) (नं0–59) को 1937 में आंशिक रूप से संशोधित कर उपर्युक्त औद्योगिक इकाइयों में प्रवेश की न्यूनतम आयु सीमा 14 से 15 वर्ष कर दी गई।

न्यूनतम आयु (समुद्रिक) अधिनियम (नं0–7) 1920 में अपनाया गया जिसमें यह प्रावधान है कि 14 वर्ष से कम आयु के किसी भी बालक को समुद्री यान में कार्य करने की अनुमति नहीं होगी। समुद्री यान में सभी प्रकार के पानी के जहाज, नावें तथा समुद्री जहाजरानी सम्मिलित हैं, चाहे वे सार्वजनिक हों या निजी। लेकिन इसमें युद्धक जहाज सम्मिलित नहीं हैं। 1936 में इस अधिनियम में आंशिक संशोधन करके न्यूनतम आयु को 14 से 15 वर्ष कर दिया गया।

कृषि कार्यो से सम्बन्धित न्यूनतम आयु अधिनियम (नं0–10), 1921 में अपनाया गया जिसमें यह प्रावधान है कि 14 वर्ष से कम आयु के किसी भी बालक को सार्वजनिक या निजी कृषि कार्यो में रोजगार नहीं दिया जा सकता। परन्तु रोजगार होना चाहिये जो बालकों के स्कूल में उपस्थिति के घण्टों को प्रभावित कर रहा हो। इस अधिनियम को अभी तक संशोधित नहीं किया गया।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के न्यूनतम आयु (गैर–औद्योगिक रोजगार) अधिनियम (नं0–33), 1932 में अपनाया गया जिसमें यह प्रावधान किया गया कि 14 वर्ष से कम या अधिक आयु का कोई भी बालक जिसे राष्ट्रीय कानून के अनुसार प्राइमरी शिक्षा की आवश्यकता है, को अधिनियम में उल्लिखित किसी भी प्रकार के रोजगार में नहीं लगाया जा सकता है। इस अधिनियम (नं0–60) को 1937में संशोधित किया गया जिसमें भारत के सम्बन्ध में कुछ विशेष प्रावधान हैं। उदाहरण के लिये 13 वर्ष से कम आयु के बालकों को दुकानों, कार्यालयों, होटलों, रेस्टोरेन्ट,

सार्वजनिक रोजगार के स्थानों या अधिनियम में वर्णित किसी अन्य गैर–औद्योगिक कार्यो में रोजगार में नहीं रखा जा सकता है।

भूमिगत कार्यो से सम्बन्धित न्यूनतम आयु अधिनियम (नं0–123) अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के द्वारा 1965 में अपनाया गया। इस अधिनियम में प्रावधान किया गया है कि भूमिगत खानों में कार्य की न्यूनतम आयु सीमा का निर्धारण 'सेवायोजक' तथा 'श्रमिक' संगठनों द्वारा किया जायेगा लेकिन यह आयु 16 वर्ष से कम नहीं होनी चाहिये।

1973 के न्यूनतम आयु अधिनियम (नं0–138) ने पिछले समस्त अधिनियमों का अधिग्रहण कर लिये क्योंकि इसका उद्देश्य समस्त क्षेत्रों की आर्थिक गतिविधियों में एक न्यूनतम स्तर बनाये रखना था। 1973 के अधिनियम (नं0–138) की प्रथम अनुसूची में कहा गया कि इस अधिनियम में वर्णित प्रत्येक सदस्य बाल श्रम समस्या के प्रभावपूर्ण समाधान तथा उनके सम्पूर्ण शारीरिक एवं मानसिक विकास के लिये एक राष्ट्रीय नीति के निर्माण को प्रोत्साहित करेगा।[1] इस अधिनियम के अनुसार न्यूनतम आयु आवश्यक स्कूली शिक्षा प्राप्त करने की आयु से या अन्य मामलों में 15 वर्ष से कम नहीं होनी चाहिये। लेकिन इसमें यह कहा गया है कि अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का ऐसा सदस्य देश जहाँ आर्थिक एवं शैक्षिक सुविधाओं का पर्याप्त विकास नहीं हुआ है, सेवायोजकों तथा श्रमिकों के संगठन से परामर्श के बाद न्यूनतम आयु सीमा का निर्धारण करेगा जोकि 14 वर्ष से कम नहीं होना चाहिये।

अधिनियम में यह प्रावधान है कि प्रकृति अथवा परिस्थितियों के अनुसार कोई भी ऐसा कार्य जो बालकों के स्वास्थ्य, सुरक्षा अथवा नैतिकता को

---

[1] I.L.O. Minimum Age Convention (No. 138), 1973, Article, 1.

प्रभावित करता है, में रोजगार प्राप्त करने की न्यूनतम आयु 18 वर्ष से कम नहीं होनी चाहिये।[1] कार्य अथवा रोजगार के प्रकार का निर्धारण या तो राष्ट्रीय नियमों और कानूनों के द्वारा अथवा सेवायोजक एवं श्रम संगठनों से परामर्श के बाद उपयुक्त अधिकारी द्वारा किया जायेगा। 16 वर्ष से कम आयु के व्यक्तियों को ऐसे कार्यों में तब तक नहीं रखा जा सकेगा जब तक कि वह स्वास्थ्य, सुरक्षा तथा नैतिकता की दृष्टि से सुरक्षित न हो या जब तक उस कार्य के लिये उन्हें आवश्यक निर्देश एवं प्रशिक्षण न प्रदान किया गया हो।

अनुच्छेद 7 के प्रथम खण्ड में यह प्रावधान किया गया है कि कोई भी राष्ट्रीय नियम अथवा कानून 13 से 15 वर्ष आयु वर्ग के बालकों को रोजगार की अनुमति दे सकता है, यदि वे कार्य उनके स्वास्थ्य और शारीरिक विकास के लिये हानिकारक नहीं है अथवा उस कार्य का उनकी विद्यालय उपस्थिति अथवा प्रशिक्षण कार्यक्रमों में उपस्थित पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।[2]

अनुच्छेद 5 के अनुसार उपरोक्त नियम कुछ विशेष कार्यों में लागू होंगे। इन कार्यों में कोयले एवं पत्थर की खाने, उत्पादन एवं निर्माण कार्य, विद्युत, गैस तथा जल, सफाई सम्बन्धी सेवायें, यातायात, भण्डारण, संचार तथा व्यावसायिक आधार पर किये जाने वाले कृषि कार्य सम्मिलित हैं जिनमें बालकों को रोजगार में नहीं रखा जा सकता है। लेकिन इनमें वे उत्पादन कार्य सम्मिलित नहीं है जो परिवार तथा लघु इकाइयों द्वारा स्थानीय उपभोग हेतु किये जा रहे है।

1953 के कोयले की खानों के सम्बन्ध में न्यूनतम आयु सम्बन्धी सिफारिशें (नं0–56) में यह सिफारिश की गई हैं कि 16 वर्ष से कम आयु के

---

[1] Rao, D.L.P.; An Analysis of Kinship, Economy and Religion of Jatapu – "A Tribe in Andhra Pradesh."
[2] I.L.O. Minimum Age Convention (No. 138), 1973, Article, 7.

बालकों को कोयले की खानों में रोजगार में नहीं रखा जा सकेगा और 16 से 18 आयु वर्ष के बालकों को निर्धारित सुरक्षा एवं अवरोधों के साथ काम पर रखने की अनुमति दी जा सकती है।

6 जून 1973 को अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की जेनेवा में हुयी 58वीं आम सभा में रोजगार की स्थिति के सम्बन्ध में ये सुझाव दिया गया कि सभी सदस्य राष्ट्र 18 वर्ष से कम आयु के सभी रोजगार प्राप्त व्यक्तियों के लिये एक मानक निर्धारित करेंगे जिसका सावधानी से निरीक्षण किया जायेगा।[1] इसके अतिरिक्त 1973 के अधिनियम के अनुच्छेद 7 में वर्णित निम्न बातों पर विशेष ध्यान दिया जायेगा–

1. उचित पारिश्रमिक एवं उसकी सुरक्षा
2. प्रतिदिन और साप्ताहिक कार्य के घण्टों की सीमा का निर्धारण तथा ओवर टाइम पर रोक, शिक्षा और प्रशिक्षण के लिये पर्याप्त समय तथा दिन में कार्य के दौरान आराम के लिये समय सीमा का निर्धारण।
3. रात्रि के 12 घण्टे का आराम तथा साप्ताहिक अवकाश का निर्धारण।
4. वर्ष में कम से कम 4 सप्ताह का वैतनिक अवकाश जो किसी भी तरह से वयस्क श्रमिकों से कम नहीं होगा।
5. रोजगार के दौरान दुर्घटना, बीमारी तथा चिकत्सीय सुविधा जैसी सामाजिक सुरक्षा प्रदान की जायेगी।
6. स्वास्थ्य और सुरक्षा के संतोषपूर्ण स्तर का निर्धारण।

[1] I.L.O. Recommendation No. 146.

समुद्री कार्यो में रोजगार प्राप्त युवा व्यक्तियों के चिकित्सीय परीक्षण से सम्बन्धित अधिनियम (1921) में यह कहा गया है कि समुद्री यान में काम करने वाले 18 वर्ष से कम आयु के किसी भी व्यक्ति को तब तक काम पर नहीं रखा जा सकता जबतक कि निर्धारित डाक्टर के द्वारा उसकी स्वास्थता का चिकित्सा प्रमाण पत्र उपलब्ध न करा दिया गया हो। यदि व्यक्ति कार्य पर निरन्तर बना रहता है तो चिकित्सा प्रमाण पत्र निश्चित रूप से प्रतिवर्ष बना होना चाहिये।

औद्योगिक कार्यो में रोजगार प्राप्त व्यक्तियों के चिकित्सीय परीक्षण से सम्बन्धी अधिनियम (1946) में यह कहा गया कि 18 वर्ष से कम आयु वर्ग के किसी भी व्यक्ति को किसी भी औद्योगिक कार्य में बिना स्वास्थ्य प्रमाण पत्र उपलब्ध कराये कार्य में नहीं रखा जा सकता। भारत में यह आयु सीमा 16 वर्ष निर्धारित है।

गैर औद्योगिक व्यवसायों के युवा व्यक्तियों के चिकित्सीय परीक्षण से सम्बन्धी अधिनियम (1946) में प्रावधान है कि उद्योग, कृषि और जहाजरानी व्यवसायों को छोड़कर 18 वर्ष से कम आयु के बालकों को बिना स्वस्थता के चिकित्सा प्रमाण पत्र उपलब्ध कराये बिना रोजगार में नहीं रखा जा सकता है।

भूमिगत कार्यो में संलग्न युवा व्यक्तियों के चिकित्सा परीक्षण से सम्बन्धी अधिनियम (1965) में यह कहा गया है कि 21 वर्ष से कम आयु के व्यक्तियों को प्रतिवर्ष शारीरिक स्वस्थता का चिकित्सा प्रमाण पत्र उपलब्ध कराये बिना किसी भी भूमिगत खानों में कार्य पर नहीं रखा जा सकता है।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने बालकों को शोषण से बचाने एवं उनके स्वास्थ्य को दृष्टि में रखते हुये उन्हें रात्रिकालीन कार्यो से विरक्त रखने के उद्देश्य से तीन अधिनियम बनाये हैं। 1919 के औद्योगिक अधिनियम के अनुसार भूमिगत खानों, उत्पादन उद्योगों, निर्माण कार्यो, यातायात आदि समस्त उद्योगों में 18 वर्ष से

कम आयु के किसी भी बालक को रात में कार्य पर नहीं रखा जा सकता है। 'रात्रि' शब्द से तात्पर्य रात्रि 8.00 से सुबह 7.00 बजे तक लगातार 11 घण्टों के समय से हैं। 1948 में इस अधिनियम को आंशिक रूप से संशोधित करके रात्रिकालीन इस समय को शाम 7.00 से सुबह 7.00 तक 12 घण्टे कर दिया गया। भारत में औद्योगिक इकाइयों में केवल खानों, फैक्ट्रियों, रेलवे तथा बन्दरगाहों को सम्मिलित किया गया है। यह अधिनियम भारत द्वारा भी स्वीकृत किया गया है।[1]

इन प्रावधानों और सुझावों के अतिरिक्त अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने बालकों और युवाओं की सुरक्षा से सम्बन्धित अनेकों दृढ़ संकल्प लिये हैं। इनमें से कुछ मुख्य संकल्प बालकों और युवाओं के स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार, सुरक्षा तथा हितों से सम्बन्धित है।

बाल श्रम समस्या की ओर सिर्फ अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का ही ध्यान नहीं गया बल्कि अनेकों सामाजिक संगठनों, कार्यकर्ताओं, समाज सुधारकों, विचारकों तथा श्रमिक नेताओं ने भी इस ओर गम्भीर प्रयास किये हैं। बाल श्रमिकों के प्रति उनके गम्भीर चिन्तन के ही परिणामस्वरूप समय–समय पर अनेकों कमीशन तथा कमेटियों का गठन किया जाता रहा है। इन्हीं में से एक 1969 में लन्दन में गठित राष्ट्रीय कमीशन ने यह अनुभव किया कि, "किसी भी अन्य समस्या की तरह ही बाल श्रम की समस्या भी एक आर्थिक समस्या है। अतः हमें गम्भीर रूप से बालकों के शारीरिक विकास और शिक्षा की उपलब्धता के प्रति बड़े पैमाने पर समाज को जागरूक करना होगा। यद्यपि आर्थिक कठिनाई एक वास्तविकता है लेकिन बालकों को आवश्यक शिक्षा उपलब्ध कराने के लिये रोजगार में उनके कार्य के घण्टों को इस प्रकार नियमित करना होगा ताकि वे विद्यालय में उपस्थित हो

[1] J.C. Kulshrestha; Child Labour in India, Ashish Publishing House, 1987, P-68.

सकें। जहाँ बालकों की संख्या अधिक है वहाँ सेवायोजकों को राज्य सरकार की सहायता से कार्य के साथ शिक्षा की व्यवस्था करनी चाहिए।[1]

अक्टूबर 1997 को हुआ बाल श्रम सम्बन्धी ओस्लो सम्मेलन इस सवाल पर बढ़ती हुई अन्तर्राष्ट्रीय चिन्ता का प्रतीक था। इस सम्मेलन में विश्व के अनेक देशों के प्रतिनिधियों ने सम्मेलन के निम्न प्रमुख लक्ष्य एवं प्राथमिकतायें निर्धारित की।

- बाल श्रम को प्रभावी ढंग से समाप्त करना।
- बच्चे को आर्थिक शोषण और ऐसा काम करने से बचाना जो उसके लिये जोखिम पैदा करे या जो उसकी पढ़ाई, उसके शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक, नैतिक और सामाजिक विकास के लिये सुकसानदेह हो।
- सबसे पहली प्राथमिकता उस तरह के बाल श्रम को समाप्त करना है जो सबसे अधिक असहनीय है। इसके बाद की प्राथमिकता इन बच्चों का पुनर्वास है। यह सब करने के साथ ही इन बच्चों और इनके परिवार के लिये वैकल्पिक काम और क्षतिपूर्ति की व्यवस्था करना चाहिये।
- सभी देशों को स्कूल जाने की उम्र वाले (उस देश के कानून के अनुसार) बच्चों के मजदूरी करने के चलन को चरणबद्ध ढंग से समाप्त करना चाहिये। जो काम बच्चों के स्वाभाविक विकास और शिक्षा–दीक्षा में बाधक हो, उसे बाल मजदूरी की श्रेणी में ही मानना चाहिये।

---

[1] Report of the National Commission on Labour, 1969; P-387.

ओस्लो सम्मेलन में भाग लेने वाले देशों ने इस बात की आवश्यकता भी बताई है कि बाल श्रम की समस्या पर तत्काल ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने 1992 में एक वैश्विक तकनीकी सहयोग परियोजना शुरू की जिसका नाम है 'बाल श्रम समाप्ति के लिये अन्तर्राष्ट्रीय कार्यक्रम'। यह कार्यक्रम 30 देशों में चल रहा है। इसका उद्देश्य धीरे–धीरे पूरी दुनियाँ से बाल मजदूरी को समाप्त करना है।

मई 1992 में भारत भी इस कार्यक्रम में शामिल हुआ। भारत में इस काम को केन्द्र और राज्य सरकारें, स्वयंसेवी संगठन, मजदूर संगठन, नियोक्ता संगठन, अनुसंधानवादी संस्थायें, मीडिया और समाज के विभिन्न समूह, सभी ने काफी महत्व दिया है। यह सम्पूर्ण कार्यक्रम एक राष्ट्रीय संचालन समिति की देखरेख में चल रहा है, जिसमें श्रम मन्त्रालय का सचिव संयोजक है। इस समिति ने जिन कुछ प्रमुख मामलों में पहल की है वे है :

- देशभर की विभिन्न जोखिम वाली इकाइयों और दूसरी स्थितियों में कार्यरत लगभग एक लाख बाल श्रमिकों का पुनर्वास करना।
- देश के श्रमिक संगठनों को बाल मजदूरी के अभिशाप के प्रति जागरूक बनाना और उसके खिलाफ आगे आने के लिये प्रेरित करना।
- सरकारी तथा गैर सरकारी एजेन्सियों, अर्द्धसरकारी संस्थाओं, स्वायत्तशासी संस्थाओं आदि को बाल मजदूरी की समस्या से निपटने के लिये प्रेरित करना।

- राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजनाओं के परियोजना निदेशकों के लिये प्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार करना और प्रशिक्षण के माध्यम से उनमें प्रबन्धकीय क्षमता विकसित करना।
- बाल मजदूरी के परिणामों के अध्ययन के लिये शोधकार्य चलाना और उनका दस्तावेजीकरण करना।
- बाल श्रम कानूनों के प्रभावी अमल के लिये श्रम निरीक्षकों और स्वयंसेवी संस्थाओं तथा अन्य संस्थाओं को बाल श्रमिकों से जुड़े विभिन्न पहलुओं के साथ उसके उन्मूलन की परियोजनाओं के मूल्यांकन का प्रशिक्षण।
- नियोक्ताओं और उनके संगठनों को बाल श्रम के विरूद्ध प्रेरित करना और बच्चों को काम में लगाने से परहेज करने को तैयार करना।
- अमानवीय शोषण के शिकार बाल श्रमिकों के पुनर्वास के साथ–साथ उनकी माताओं को छोटे–मोटे रोजगार के प्रशिक्षण का कार्यक्रम विकसित करना ताकि बाल श्रमिक के काम के हटने से परिवार की आमदनी में आई कमी की कुछ भरपाई की जा सके।
- ग्रामीण क्षेत्रों में बाल मजदूरी की समस्या के निपटने के लिये केन्द्र और राज्य सरकारों को नीतिगत बदलाव के सुझाव देने के उद्देश्य से हैदराबाद के राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान (एन0आई0आर0डी0) में बाल श्रम प्रकोष्ठ की स्थापना, संबन्धित विभागों के अधिकारियों तथा निर्वाचित प्रतिनिधियों को प्रशिक्षण, एन0आई0आर0डी0 की शोध तथा बाल श्रम परियोजनाओं के मूल्यांकन करने की क्षमता विकसित करना।
- प्राथमिक शिक्षा की भारत सरकार और संयुक्त राष्ट्र की साझा परियोजनाओं में बाल श्रम से सम्बन्धित पाठ्यक्रम जुड़वाना।

इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय बाल श्रम उन्मूलन कार्यक्रम के तहत कई तरह के कार्यक्रम तैयार किये गये, लेकिन बाल श्रमिकों के पुनर्वास तथा अनौपचारिक शिक्षा को सर्वाधिक महत्व दिया गया है। स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा संचालित अनौपचारिक शिक्षा के विभिन्न कार्यक्रमों के तहत लगभग एक लाख बाल श्रमिकों का पुनर्वास किया जा चुका है। इस कार्यक्रम की मूल्यांकन रिपोर्ट में कहा गया है कि "अन्तर्राष्ट्रीय बाल श्रम उन्मूलन कार्यक्रम और बाल श्रम पर राष्ट्रीय कार्यक्रम एक दूसरे का काम आगे बढ़ाया है। इससे बाल श्रमिकों के मुद्दे को राष्ट्रीय मंच पर चर्चा में लाने में काफी मदद मिली है और इस समस्या से निपटने के लिये सकारात्मक माहौल तैयार हुआ है।"

सरकार द्वारा किये गये प्रयासः

भारत ने अपने संवैधानिक उपबन्धों, कानूनों एवं प्रशासनिक उपायों के माध्यम से लगातार सकारात्मक बाल श्रम नीति का अनुसरण किया है। कानूनी उपबन्धों के माध्यम से बाल श्रम उन्मूलन कार्यक्रमों का इतिहास लगभग 100 वर्ष पुराना है। भारत में बाल श्रम उन्मूलन हेतु प्रथम विधिक संरक्षण अधिनियम 1881 का फैक्ट्री अधिनियम था जिसे 1891 में भारत सरकार द्वारा 1990 में नियुक्त फैक्ट्री कमीशन के सुझावों के आधार पर लागू किया गया। 1891 के अधिनियम के अनुसार कार्य में प्रवेश की अधिकतम आयु सीमा 12–14 वर्ष निर्धारित थी।[1] बालकों को रात में काम करने की अनुमति नहीं थी। 1901 में खान अधिनियम पारित किया गया जिसमें 12 वर्ष से कम आयु के बालकों के कार्य करने पर प्रतिबन्ध था। 1911 के फैक्ट्री अधिनियम में बालकों के फैक्ट्री में प्रतिदिन कार्य के घण्टे 6 निर्धारित थे।

[1] Child Labour in Glass Industry, G.P. Mishra and P.N. Pandey, A.P.H. Publishing Corporation, New Delhi, P-81.

बाल श्रम कानूनों के इतिहास में अगला कदम भारतीय फैक्ट्री (संशोधित) अधिनियम 1922 था। भारतीय फैक्ट्री अधिनियम 1911 को वर्ष 1926 में पुनः प्रशासनिक उद्देश्यों से संशोधित किया गया। 1911 के अधिनियम को वर्ष 1931 में एक बार पुनः संशोधित कर कुछ परिवर्तन किये गये। उसी वर्ष भारतीय बन्दरगाह (संशोधित) अधिनियम 1931 में यह प्रावधान किया गया कि 12 वर्ष से कम आयु का कोई भी बालक बन्दरगाहों में सामान ढोने का कार्य नहीं कर सक़ेगा। 1935 में भारतीय खान (संशोधित) अधिनियम पारित किया गया जिसमें 15 वर्ष से कम आयु के बालकों के खानों में कार्य करने को प्रतिबन्धित किया गया। बच्चों का रोजगार अधिनियम (1938) पहला ऐसा अधिनियम था जो पूरी तरह बाल श्रमिकों को समर्पित था।

स्वतन्त्रता के पश्चात् भारतीय संविधान के निर्माताओं ने संविधान के निर्माण के दौरान ही अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा तथा बालकों को श्रम से संरक्षण प्रदान करने वाले सभी सुसंगत प्रावधानों को संविधान के प्रारूप में ही शामिल कर लिया था। संविधान के निम्नलिखित अनुच्छेद बाल श्रम के उन्मूलन के प्रति राष्ट्रीय सोच को प्रदर्शित करते हैं–

अनुच्छेद 23 – (मानव के दुर्व्यापार, बलात्श्रम का प्रतिषेध) : अनुच्छेद 23 में यह प्रावधन किया गया कि मानव का दुर्व्यापार और बेगार तथा इसी प्रकार का अन्य बलात्श्रम प्रतिषिद्ध होगा तथा इस विधि का कोई भी उल्लंघन अपराध होगा जो विधि के अनुसार दण्डनीय होगा।

अनुच्छेद 24– (कारखानों आदि में बालकों के नियोजन का प्रतिषेध) : अनुच्छेद 24 के अनुसार 14 वर्ष से कम आयु के किसी भी बालक को

किसी कारखाने या खान में काम करने के लिये नियोजित नहीं किया जायेगा या किसी अन्य परिसंकट नियोजन में नहीं लगाया जायेगा।

अनुच्छेद 39(ङ.) एवं (च) – (राज्य द्वारा अनुसरणीय कुछ नीति तत्व): राज्य अपनी नीति का विशिष्टतया इस प्रकार संचालन करेगा कि सुनिश्चित रूप से–

(क) पुरूष और स्त्री कर्मकारों के स्वास्थ्य और शक्ति तथा बालकों की सुकुमार अवस्था का दुरूपयोग न हो और आर्थिक आवश्यकता से विवश होकर नागरिकों को ऐसे रोजगारों में न जाना पड़े जो उनकी आयु या शक्ति के अनुकूल न हों।

(ख) बालकों को स्वतन्त्र और गरिमामय वातावरण में स्वस्थ विकास के अवसर और सुविधायें दी जायें और बालकों एवं अल्पवय व्यक्तियों की शोषण तथा नैतिक और आर्थिक परित्याग से रक्षा की जाये।

अनुच्छेद 41 – (काम का, शिक्षा का, विशेष स्थितियों में सार्वजनिक मदद का अधिकार) : सरकार को अपनी आर्थिक क्षमता और विकास की सीमाओं को देखते हुये काम का, शिक्षा का, और बेकारी, बुढ़ापे, बीमारी, अपंगता और अन्य मुश्किल स्थितियों में सहायता पाने का अधिकार बनाना चाहिये।

अनुच्छेद 45 – (बालकों के लिये निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का प्रबन्ध) : अनुच्छेद 45 में यह प्रावधन किया गया कि राज्य इस संविधान के प्रारम्भ से दस वर्ष की अवधि के भीतर सभी बालकों को 14 वर्ष की आयु पूरी करने तथा निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने के लिये उपबन्ध करने का प्रयास करेगा।

अनुच्छेद 51(ग) – (अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा की अभिवृद्धि) : राज्य संगठित लोगों के एक दूसरे से व्यवहारों में अन्तर्राष्ट्रीय विधि और सन्धि बाध्यताओं के प्रति आदर बढ़ाने का प्रयास करेगा।

भारतीय संविधान में वर्णित उपरोक्त अनुच्छेदों के माध्यम से प्रारम्भ से ही संविधान निर्माताओं ने बाल श्रम उन्मूलन हेतु प्रयास करना प्रारम्भ कर दिये थे। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् विभिन्न सरकारों ने भी समय–समय पर विभिन्न कानूनों का निर्माण कर बालकों की सुकुमार अवस्था को सुनिश्चित करने का प्रयास किया है। भारत सरकार द्वारा निर्मित कुछ प्रमुख कानूनों का वर्णन करना उपयुक्त होगा।

1948 : कारखाना अधिनियम, 1948 – कारखानों में काम करने की न्यूनतम आयु को बढ़ाकर 14 वर्ष कर दिया गया है।

1949 : बालक नियोजन (संशोधित अधिनियम), 1948 – इस अधिनियम द्वारा शासित सभी स्थापनाओं में नियोजन की न्यूनतम आयु को बढ़ाकर 14 वर्ष कर दिया गया है।

1951 : बालक नियोजन (संशोधन) अधिनियम, 1951– (अल्पवय व्यक्तियों के रात्रि कार्य से सम्बन्धित अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अभिसमय के परिणामस्वरूप) 15 वर्ष से 17 वर्ष के बीच की आयु वाले बालकों के लिए रात के समय रेलवे और बन्दरगाहों में नियोजन पर प्रतिबन्ध लगाया गया है और 17 वर्ष से कम आयु वाले बालकों के लिए रजिस्टर रखे जाने का प्रावधान किया गया है।

1951 : बागान श्रम अधिनियम, 1951 – 12 वर्ष से कम आयु वाले बालकों का बागानों में काम पर लगाया जाना प्रतिबन्धित किया गया है।

1952 : खान अधिनियम, 1952– खानों में 15 वर्ष से कम आयु के बालकों के नियोजन को प्रतिबन्धित किया गया है। भूमिगत खदानों में बालकों के कार्य करने के सम्बन्ध में अधिनियम में दो शर्ते निर्धारित की गई है :

(1) जिस बालक को काम पर लगाया जाए उसने 16 वर्ष की आयु पूरी कर ली हो, तथा

(2) उसने किसी सर्जन से शारीरिक स्वस्थता का प्रमाण पत्र प्राप्त कर लिया हो।

1954: कारखाना (संशोधन) अधिनियम, 1954– 17 वर्ष से कम आयु के बालकों का रात्रि में काम करना प्रतिबन्धित किया गया है। (12 घण्टे की क्रमिक अवधि, जिसमें रात्रि 10 बजे से प्रातः 7 बजे तक की अवधि शामिल है, को रात्रि के रूप में परिभाषित किया गया है।)

1958 : जहाजरानी परिवहन अधिनियम, 1958 – कतिपय विशिष्ट मामलों को छोड़कर 15 वर्ष से कम आयु के बालकों का किसी भी हैसियत से किसी भी जहाज पर काम करने पर प्रतिबन्ध लगाया गया है।

1961: मोटर परिवहन कर्मकार अधिनियम, 1961– 15 वर्ष से कम आयु के बालकों को किसी भी मोटर परिवहन उपक्रम में कार्य करने पर प्रतिबन्ध लगाया गया है।

1961: प्रशिक्षु अधिनियम, 1961— 14 वर्ष से कम आयु के बालकों को प्रशिक्षु के रूप में नियोजित करने अथवा प्रशिक्षण देने पर प्रतिबन्ध लगाया गया है।

1966: बीड़ी तथा सिगार कर्मकार (नियोजन की शर्तें) अधिनियम, 1966 :

(1) बीड़ी या सिगार बनाने वाले किसी भी औद्योगिक परिसर में 14 वर्ष से कम आयु के बालकों के नियोजन पर प्रतिबन्ध लगाया गया है।

(2) रात्रि में सांय 7 बजे से प्रातः 6 बजे के बीच 14 वर्ष से 18 वर्ष के बीच की आयु वाले बालकों से काम कराने पर प्रतिबन्ध लगाया गया है।

1978: बालक नियोजन (संशोधन) अधिनियम, 1978 : रेलवे परिसर में किये जाने वाले व्यवसायों जैसे कायेला बीनना, राख के गढ्ढों की सफाई, भवन निर्माण प्रक्रिया, खान–पान, स्थापना या ऐसे अन्य कार्य जिन्हें रेलवे लाइनों के आस–पास या रेल की पटरियों के बीच किया जाना हो, में 15 वर्ष से कम आयु के बालकों के नियोजन पर प्रतिबन्ध लगाया गया है।

1986: बाल श्रम (प्रतिषेध एवं विनियमन) अधिनियम, 1986: इस अधिनियम में सूची (क) तथा (ख) में सूचीबद्ध किए गए 8 व्यवसायों तथा 54 प्रक्रियाओं में उन बालकों के नियोजन को प्रतिषेध किया गया जिन्होंने अपनी आयु का चौदहवां वर्ष पूरा नहीं किया है।

बाल श्रम (प्रतिषेध एवं विनियमन) अधिनियम (1986) की अनुसूची के भाग ए में ऐसे व्यवसाय उल्लिखित हैं तथा बी में ऐसी प्रक्रियायें उल्लिखित हैं जिनमें बाल श्रम का नियोजन अथवा उपयोग अधिनियम की धारा–3 के अन्तर्गत

वर्जित है। इस धारा के उल्लंघनकर्ता को न्यूनतम 10000 हजार से 20000 हजार रूपये तक जुर्माना या न्यूनतम 3 माह से 1 वर्ष की कारावास या दोनों सजायें देने का प्रावधान है। भारत सरकार द्वारा जारी अधिसूचना संख्या एस0ओ0–36(ई) दिनांक जनवरी 27, 1999 के द्वारा अधिसूची के व्यवसाय व प्रक्रियाओं में संशोधन किया गया है। इन संशोधन में पूर्व में 07 व्यवसायों में 06 अतिरिक्त व्यवसाय जोड़े गये हैं। इस प्रकार इस अधिनियम के अन्तर्गत प्रतिबन्धित व्यवसायों की कुल संख्या 13 हो गयी है। प्रतिबन्धित प्रक्रियाओं की कुल सूची जो पहले 18 थी वह अब बढ़कर 51 हो गयी है। अनुसूची के भाग ए में पहले रेलवे बन्दरगाह, पटाखे एवं आतिशबाजी की दुकानों तथा पशुवधशालाओं को शामिल करते हुए कुल 07 व्यवसाय उल्लिखित थे। अब इसमें 06 व्यवसाय और शामिल कर लिये गये हैं। इसी प्रकार प्रतिबन्धित प्रक्रियाओं में पूर्व में बीड़ी बनाना, सीमेण्ट निर्माण, क्लाथ प्रिन्टिंग, दिया सलाई निर्माण, साबुन बनाना, चमड़ा, भवन तथा निर्माण उद्योग फेरस नान फेरस उद्योग, कोयला उद्योग आदि शामिल थे। जिनमें दिनांक 27.01.99 से अतिरिक्त प्रक्रियाओं को और शामिल कर लिया गया है। जिसमें अगरबत्ती निर्माण, आटोमोबाइल्स, रिपेयर्स मेन्टीनेन्स तथा उससे सम्बन्धित कार्य ईट भठ्ठे, डिटरजेन्ट उत्पादन, फैब्रीकेशन वर्कशाप, जेम कटिंग एवं पालिशिंग, ताला उद्योग, पीतल उद्योग से सम्बन्धित सभी कार्य, रेशम उद्योग, जरी उद्योग, आरा मशीन का कार्य, जहाँ ट्रैक्टर एवं अन्य मशीनों का प्रयोग होता है, खेल–कूद के सामान का उत्पादन सम्मिलित है।

22 अगस्त, 1974 को भारत सरकार ने बच्चों के कल्याण के लिये एक राष्ट्रीय बाल नीति बनाने पर विचार किया तथा उचित विचार–विमर्श के बाद निम्नलिखित नीति अपनाने का निर्णय लिया गया :–

➢ बच्चे राष्ट्र की एक सर्वोच्च महत्वपूर्ण सम्पत्ति हैं तथा उनकी देखभाल और चिंता करना हमारी जिम्मेदारी है। मानव संसाधन विकास के लिये हमारी राष्ट्रीय योजनाओं में बच्चों के कार्यक्रमों को प्रमुख स्थान मिलना चाहिये ताकि हमारे बच्चे पुष्ट नागरिक बनें और शारीरिक रूप से सक्षम, मानसिक रूप से सजग और नैतिक रूप से स्वस्थ्य बनें। हमारा लक्ष्य यह होना चाहिये कि बढ़त की अवधि में सभी बच्चों को विकास के समान अवसर मिले क्योंकि इससे असमानता कम करने और सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने का व्यापक उद्देश्य अधिक पूरा होगा।

➢ बच्चों का पूर्ण शारीरिक, मानसिक और सामाजिक विकास सुनिश्चित करने के लिये उन्हें जन्म से पूर्व तथा इसके बाद तथा बढ़त की पूरी उम्र में पर्याप्त सेवायें प्रदान करना राज्य की नीति होगी। राज्य ऐसी सेवाओं का कार्यक्षेत्र निरन्तर बढ़ाता जायेगा ताकि सुनिश्चित अवधि में देश के सभी बच्चों को उनके सन्तुलित विकास के लिये सर्वोत्तम परिस्थितियाँ मिलें। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये, विशेष रूप से निम्न उपाय किये जायेगें :–

- सभी बच्चों को एक व्यापक स्वास्थ्य कार्यक्रम के दायरे में लाया जायेगा।
- बच्चों की खुराक में कमियाँ दूर करने के उद्देश्य से पोषण सेवायें देने के लिये कार्यक्रम चलाये जायेगें।
- राज्य 14 वर्ष की उम्र तक बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने के लिये उचित उपाय करेगा और राष्ट्रीय स्रोतों की उपलब्धता के अनुरूप इस कार्य के लिये समयबद्ध कार्यक्रम

चलाया जायेगा। स्कूलों में वर्तमान समय में लड़कियों और कमजोर वर्ग के बच्चों के विकास में जो ठहराव आ रहा है, उसे कम करने के लिये विशेष प्रयास किये जायेगें। ऐसे वर्गों के बच्चों को स्कूल जाना शुरू करने से पहले अनौपचारिक शिक्षा देने का कार्यक्रम भी चलाया जायेगा।

- जो बच्चे औपचारिक स्कूली शिक्षा का पूरा लाभ उठा पाने की स्थिति में नहीं हैं, उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षा के अन्य तरीके उपलब्ध कराये जायेगें।

- स्कूलों, सामुदायिक केन्द्रों और ऐसी ही अन्य संस्थाओं में शारीरिक स्वास्थ्य, शिक्षा, खेल और अन्य मनोरंजक तथा सांस्कृतिक और वैज्ञानिक गतिविधियों को बढ़ावा दिया जायेगा।

- अवसरों की समानता सुनिश्चित करने के लिये कमजोर वर्गों जैसे अनुसूचित जातियों और जनजातियों के बच्चों और गांव तथा शहरों में आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के बच्चों को विशेष सहायता उपलब्ध कराई जायेगी।

- विपन्न सामाजिक परिस्थितियों वाले, अपराधी बन चुके, भिखारी बनने को मजबूर और अन्य परेशानियों में जी रहे बच्चों को शिक्षा, प्रशिक्षण और पुनर्वास दिलाया जायेगा तथा उन्हें देश के लिये उपयोगी नागरिक बनाने में मदद की जायेगी।

- बच्चों को उपेक्षा, क्रूरता और शोषण से बचाने के लिये संरक्षित किया जायेगा।

- चौदह वर्ष से कम आयु के किसी भी बच्चे को जोखिम वाले कामों में लगाने की अनुमति नहीं दी जायेगी, न ही उन्हें भारी काम करने दिया जायेगा।

- शारीरिक रूप से विकलांग, संवेगात्मक रूप से उद्वेलित और मन्द बुद्धि बच्चों के विशेष उपचार, शिक्षा, पुनर्वास और देखभाल की व्यवस्था की जायेगी।

वर्ष 1994 के स्वतन्त्रता दिवस पर प्रधानमंत्री द्वारा की गई इस घोषणा से कि सन् 2000 तक जोखिमपूर्ण प्रक्रियाओं एवं व्यवसायों से बाल श्रम समाप्त कर दिया जायेगा, बाल श्रम के प्रति राष्ट्रीय जागरूकता और प्रतिबद्धता का पता चलता है। इस घोषणा के पश्चात सरकार ने कई दूरगामी समेकित कदम उठाये हैं ताकि बाल श्रम समस्या से प्रभावी ढंग से निपटा जा सके। इन्हीं प्रयासों के तहत सितम्बर 1994 में राष्ट्रीय बाल श्रम उन्मूलन प्राधिकरण की स्थापना की गई। इस प्राधिकरण के सदस्य भारत सरकार के श्रम, शिक्षा, महिला एवं बाल विकास, कल्याण, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण, ग्रामीण विकास, वस्त्र, वित्त तथा सूचना एवं प्रसारण मंत्रालयों/विभागों के सचिव हैं। प्राधिकरण के उद्देश्य इस प्रकार हैं:–

1. बाल श्रम उन्मूलन के लिये नीतियों और कार्यक्रमों का निर्धारण इस प्रकार करना कि जोखिमपूर्ण प्रक्रियाओं एवं व्यवसायों में लगे बाल श्रमिकों को प्राथमिकता दी जा सके।

2. बाल श्रम उन्मूलन से सम्बन्धित कार्यक्रमों, परियोजनाओं तथा योजनाओं के कार्यान्वयन की प्रगति का अनुश्रवण (मॉनीटर) करना।

3. सेंवाओं का अभिसरण सुनिश्चित करने के लिये सरकार के विभिन्न मन्त्रालयों द्वारा चलाये जा रहे बालकों से सम्बन्धित कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में सामंजस्य स्थापित करना।

इन कार्यक्रमों के अतिरिक्त भारत सरकार अपने विभिन्न अभिकरणों के माध्यम से अनेक कार्यक्रमों का कार्यान्वयन कर रही है। इनमें गरीबी उन्मूलन, आय में वृद्धि, बालकों के स्वास्थ्य मे सुधार एवं शिक्षा के स्तर में वृद्धि जैसे कार्यक्रम शामिल हैं। सरकार ऐसे कार्यक्रमों के माध्यम से जिला स्तर पर उपलब्ध सेवाओं का अभिसरण कारगर ढंग से करना चाहती है ताकि मौजूदा बाल श्रमिकों को पुनर्वासित किया जा सके और भविष्य के श्रमबल में बालकों के प्रवेश पर रोक लगाई जा सके। जिला स्तर पर कार्यान्वित की जा रही निम्नलिखित योजनाओं में बाल श्रमिकों तथा उनके माता–पिता को लाभ पहुँचाने का प्रयास किया जा रहा है:–

- समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (आई0आर0डी0पी0)
- जवाहर रोजगार योजना (जे0आर0वाई0)
- ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं एवं बच्चों का विकास (ड्वाकरा)
- जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (डी0पी0ई0पी0)
- इन्दिरा आवास योजना (आई0आर0वाई0)
- सुनिश्चित रोजगार योजना (ई0ए0एस0)
- स्कूली बच्चों के लिये दोपहर के भोजन की स्कीम

राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजनाओं का कार्यान्वयन जिला स्तर पर गठित उन परियोजना समितियों द्वारा भी किया जा रहा है जिनके अध्यक्ष जिलाधिकारी हैं। यही कारण है कि राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजनाओं तथा बाल श्रम से सम्बन्धित अन्य विभिन्न योजनाओं के बीच पारस्परिक तालमेल को महत्वपूर्ण समझा गया है।

राष्ट्रीय नीति :

भारत ने सदा से बाल श्रम की समस्या से निबटने के लिए सचेत नीति पर अमल किया है। इसके पीछे मूल भावना यही रही है कि सारे कामकाजी बच्चे भी बच्चे ही हैं और उन्हें भी स्वस्थ बहुमुखी विकास करने का अवसर दिया जाना चाहिए। जोखिम वाले उद्योगों में बच्चों के काम पर रोक लगाने वाले संवैधानिक प्रावधानों की चर्चा पहले ही की जा चुकी है। राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों के अनुसार भी सरकार को अपनी नीतियां मजदूरों के स्वास्थ्य और समृद्धि को ध्यान में रखकर बनानी चाहिए जिससे स्त्री–पुरूष और कम उम्र के बच्चों के साथ दुर्व्यव्हार न हो, उनका शोषण न हो और नागरिकों को आर्थिक मजबूरियों के चलते अपनी उम्र और क्षमता से बेहिसाब काम करने की मजबूरी न हो। बच्चों को खास रूप से स्वतंत्र और सम्मानजनक ढंग से स्वस्थ स्थिति में विकास का अवसर मिले।

इसी पृष्ठभूमि में सरकार ने 6–7 फरवरी, 1979 को पास प्रस्ताव के जरिए बाल मजदूरी के कारणों को जानने और उसके निदान के साथ ही बच्चों के संरक्षण और कल्याण सम्बन्धी सुझाव देने के लिए एम0एस0 गुरूपदस्वामी की अध्यक्षता में एक कमेटी का गठन किया। कमेटी को इन–इन क्षेत्रों में जांच करनी थी :–

- मौजूदा कानूनों को, उनकी पूर्णता को, उनको लागू करने की स्थिति को जांचना तथा उनको बेहतर ढंग से लागू करने तथा उनके दोषों को दूर करने के उपाय बताना।

- बाल श्रम के विभिन्न पहलुओं को देखना, उनके काम वाले विशेष क्षेत्रों को जांचना और उन नए क्षेत्रों के बारे में सुझाव देना जहां बाल मजदूरी पर रोक लगाने या व्यवस्थित करने के लिए कानून लागू करने की जरूरत हो।

- रोजगार में लगे बच्चों के लिए कल्याणकारी उपाय, प्रशिक्षण और अन्य ऐसी सुविधाओं को लागू करने सम्बन्धी सुझाव देना जो उनको लाभ पहुंचाएं।

कमेटी ने बाल मजदूरी के लिए बने कानूनी ढांचे और अन्य उपायों की पहुंच तथा सीमाओं की पहचान के लिए विस्तृत और पूरी गहराई वाला अध्ययन करने की योजना बनाई। इसने राजनेताओ, मजदूर संगठनों, नियोक्ताओं, बाल मजदूरों के मां–बाप, सरकारी संगठनों और आम लोगों से बाल मजदूरों के बारे में सूचनाएं जुटाने के लिए विस्तृत प्रश्नावली तैयार की और उनके पास भेजा। इस प्रकार जुटी सूचनाओं को जमा और विश्लेषित किया गया और इसका उपयोग 29 दिसम्बर, 1979 को सरकार को सौंपी रिपोर्ट में किया गया।

कमेटी ने माना कि मजदूरी और बाल मजदूरों के शोषण के बीच फर्क किया जाना चाहिए। इसने दोनो को समस्या माना, पर अलग–अलग तरह की। और, इस बात को रेखांकित किया कि बाल श्रम के बारे में आगे भी जो कदम उठाए जाएंगे उसमें इस बुनियादी बात को ध्यान में रखना हो। कमेटी की राय है :–

जब बच्चे को अपनी शारीरिक क्षमता से ज्यादा क्राम करना पड़ता है, जब काम का समय उसकी पढ़ाई के समय को, उसके खेलने–कूदने और आराम के समय को नष्ट करता है, जब मजदूरी काम के हिसाब से कम मिलती है और जब उसका काम उसके स्वास्थ्य और सुरक्षा की दृष्टि से उपयुक्त न हो तो मजदूरी उसके लिए अभिशाप बन जाती है।

श्रम मंत्रालय ने बाल श्रम के इन पहलुओं पर गौर किया। इसने बाल मजदूरों को शोषण से बचाने तथा बच्चों के शारीरिक और मानसिक विकास के लिए खतरा बनने वाले कामों से उन्हें बचाने की जरूरत महसूस की। साथ ही बच्चों के काम करने का माहौल साफ–सुथरा और सुरक्षित रहे, इसकी भी जरूरत महसूस की गई। यह भी माना गया कि बच्चों को बहुत–बहुत देर तक काम करने, रात्रि की पाली में काम करने से रोकने की जरूरत है। बिना जोखिम वाले कामों में भी कायदे–कानून लागू कराने और सभी कामकाजी बच्चों को विश्राम का अवकाश और छुट्टियाँ दिलाने का इंतजाम भी किया जाना चाहिए।

इन महत्वपूर्ण पहलुओं को ध्यान में रखते हुए सरकार ने बाल श्रम सम्बन्धी राष्ट्रीय नीति बनाई और अगस्त 1987 में संसद में घोषित की। राष्ट्रीय बाल श्रम नीति के तहत आई कार्ययोजना में ये बातें शामिल हैं :–

- विधायी कार्ययोजना ;
- जहां कहीं भी संभव हो सामान्य विकास कार्यक्रमों को भी बच्चों पर केन्द्रित करना ;
- बाल श्रमिकों की सघनता वाले क्षेत्रों के लिए खास तौर से अलग कार्ययोजनाएं बनाना।

विधायी कार्ययोजना :

विधायी कार्ययोजना बाल श्रम (निषेध एवं नियमन) कानून 1986, फैक्टरी कानून 1948, खदान कानून 1952, बागान श्रम कानून 1951 और बच्चों के रोजगार से सम्बन्धित प्रावधान वाले अन्य कानूनों को कड़ाई से और प्रभावी ढंग से लागू कराने की है।

सामान्य विकास कार्यक्रमों को बच्चों पर केन्द्रित करना :

शिक्षा, स्वास्थ्य, पौष्टिक आहार, समन्वित बाल विकास तथा गरीबों के लिए आमदनी, और रोगगार उपलब्ध कराने वाले अनेक राष्ट्रीय विकास कार्यक्रम अभी चल रहे हैं। इनका उपयोग ऐसी सामाजिक–आर्थिक स्थितियां बनाने के लिए किया जायेगा जिसमें बच्चों को काम पर भेजने की मजबूरियां कम हो और बच्चे कमाऊ रोजगार में जाने की जगह स्कूल जाने के लिए प्रेरित हों।

परियोजना आधारित कार्ययोजना :

इसके तहत उन इलाकों के लिए विशेष योजनाएं प्रस्तावित की गई जहाँ बड़ी संख्या में बाल मजदूर काम करते है। इनका जोर निम्नलिखित गतिविधियों पर होगाः

- इन योजनाओं वाले क्षेत्रों में बाल श्रम (निषेघ एवं नियमन) कानून 1986, फैक्टरी कानून 1948, खदान कानून 1952 और अन्य ऐसे कानूनों को लागू कराने के प्रयास तेज करना।
- कामकाजी बच्चों के परिवार को रोजगार और आमदनी बढ़ाने वाले गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों के दायरे में समेटना।

- बाल श्रमिकों के लिए औपचारिक और अनौपचारिक शिक्षा प्रबन्ध बढ़ाना तथा उनके माँ–बाप को शिक्षित करने के लिए वयस्क शिक्षा कार्यक्रम चलाना।
- कामकाजी बच्चों के लिए विशेष स्कूल खोलना, जहाँ शिक्षा के साथ रोजगार सम्बन्धी प्रशिक्षण, पौष्टिक आहार, स्वास्थ्य की देखरेख वगैरह का इंतजाम भी हो। अगर जरूरी हो तो रोजगार छोड़कर यहां आए बच्चों को कुछ नियमित छात्रवृत्ति भी दी जाए।
- सामाजिक संगठनों और अन्य माध्यमों से बाल श्रम के कुप्रभावों के प्रति चेतना फैलाना।

उत्तर प्रदेश में यदि बाल श्रमिकों की संख्या के संदर्भ में उपलब्ध आँकड़ों पर दृष्टिपात करें तो यह स्पष्ट होता है कि जहाँ 1971 में इनकी संख्या 1326726 थीं वहीं 1981 में यह संख्या 1436675 तथा 1991 में 1410086 अनुमानित है। बाल श्रमिकों की वर्तमान स्पष्ट संख्या ज्ञात नहीं है लेकिन निश्चित रूप से इस संख्या में निरन्तर वृद्धि ही हुई है। यदि स्वैच्छिक संगठनों द्वारा किये गये अध्ययनों की मानें तो यह संख्या करोड़ों में है। इन सब मत–मतान्तरों के बावजूद यह स्पष्ट है कि प्रदेश में बाल श्रम की समस्या अत्यन्त गम्भीर है। गरीबी, अशिक्षा, जनसंख्या वृद्धि, बेरोजगारी आदि ऐसे कारक हैं, जो इस समस्या को और बढ़ावा देते हैं।

उत्तर प्रदेश सरकार ने बाल श्रम समस्या के समाधान के लिये समय–समय पर विभिन्न प्रयास किये हैं। समस्या के समाधान के उद्देश्य से समय–समय पर अनेक श्रम अधिनियम पारित किये गये हैं जिससे बाल श्रम को निरूत्साहित एवं निषिद्ध किया जा सके। बाल श्रम (प्रतिषेध एवं विनियमन) अधिनियम, 1986 इस दिशा में सबसे नवीन एवं महत्वपूर्ण अधिनियम है। माननीय

सर्वोच्च न्यायालय द्वारा रिट याचिका संख्या–465/86 "एम0सी0 मेहता बनाम तमिलनाडु राज्य व अन्य" में पारित निर्णय दिनांक 10.12.96 के अनुपालन में बाल श्रमिकों के चिन्हीकरण की दिशा में सर्वेक्षण कार्यवाही को प्रदेश में एक सतत् प्रक्रिया के रूप में लिया गया है और तद्नुसार सर्वेक्षण वर्ष 1999 में तथा पुनः वर्ष 1999–2000 में सम्पन्न करवाये गये हैं। इसके अतिरिक्त श्रम अधिनियमों के अन्तर्गत नियमित निरीक्षणों एवं जांच कार्यवाहियों के माध्यम से भी बाल श्रमिकों का चिन्हीकरण किया गया है। इन सर्वेक्षणों के माध्यम से प्रदेश में 61835 बाल श्रमिक चिन्हित हो चुके हैं, जिनमें से खतरनाक प्रकृति के कार्यो एवं प्रक्रियाओं में 28862 एवं गैर खतरनाक प्रकृति के कार्यो एवं प्रक्रियाओं में 32973 बाल श्रमिक चिन्हित किये जा चुके है। इन चिन्हांकित बाल श्रमिकों में से कुल 52806 बाल श्रमिकों को विद्यालय में प्रवेशित कराया जा चुका है। इसके अतिरिक्त खतरनाक प्रक्रियाओं में चिन्हित बाल श्रमिकों के 4593 परिवारों के सक्षम वयस्क बेरोजगार सदस्य को शासन की विभिन्न रोजगारपरक योजनाओं के अन्तर्गत लाभान्वित कराया जा चुका है।[1]

उक्त के अतिरिक्त प्रदेश के 23 बाल श्रम बाहुल्य जनपदों में शासन द्वारा 1998–99 में रूपये 5.00 लाख प्रति जनपद की दर से कुल 1.15 करोड़ रूपये की धनराशि प्रदान की गई, जिसे सम्बन्धित जनपदों को उपलब्ध करा दिया गया है तथा सम्बन्धित जनपदों द्वारा इसका निवेश कराया जा चुका है। इससे अर्जित आय का उपयोग बाल श्रमिकों के पुनर्वासन में नियमावली के अनुरूप किया जायेगा।

बाल श्रम मूलतः एक सामाजिक समस्या है। अतः जन सामान्य में जनचेतना जागृत करने के उद्देश्य से विभिन्न कार्यशालाओं/सेमिनार्स का आयोजन

[1] A Report of Government of U.P., May, 2003

करके जन सामान्य की भागीदारी प्राप्त कर बाल श्रम उन्मूलन कार्यक्रम को गति प्रदान की जा रही है। बाल श्रम समस्या के निराकरण के उद्देश्य से सरकारी विभागों के अतिरिक्त जन-सामान्य का सहयोग प्राप्त करने के लिये जनपद एवं राज्य स्तरीय कार्यशालाओं का आयोजन भी किया जा रहा है। इसी दिशा में 01 से 07 फरवरी 2000 की अवधि में प्रदेश के समस्त जनपदों एवं विकास खण्डों में बाल श्रम उन्मूलन सप्ताह मनाया गया जिसमें बच्चों की रैली, चित्रकला, भाषण, गोष्ठी, दौड़ प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया।

स्वयं सेवी संस्थाओं द्वारा किये गये प्रयास:

राष्ट्रीय बाल श्रम नीति के तहत नये प्रयासों में सरकारी तथा गैर-सरकारी संगठनों, संस्थाओं तथा समुदाय के व्यापक सहयोग का महत्वपूर्ण स्थान है। इसका प्रमुख उद्देश्य है कि सभी उपलब्ध संसाधनों का यथासम्भव उपयोग कर बाल श्रम की जटिल समस्या का कोई समाधान खोज निकाला जाये तथा बाल श्रमिकों को काम से हटाने और पुनर्वासित करने के व्यापक कार्यक्रम का सफलतापूर्वक कार्यान्वयन किया जाये। राष्ट्रीय स्तर पर व्यापक सहयोग की यह अवधारणा राष्ट्रीय बाल श्रम उन्मूलन प्राधिकरण के गठन में उजागर हुई है। इस प्राधिकरण के सदस्य भारत सरकार के सम्बन्धित मंत्रालयों के सचिव हैं। स्थानीय स्तर पर यही अवधारणा बाल श्रम उन्मूलन के लिये जिला परियोजना समितियों के गठन में परिलक्षित होती है। यह अवधारणा सेवाओं के अभिसरण (कन्वर्जन्स) के लिये समिति के गठन में विशेष रूप से उजागर हुई है।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन तथा आइपेक कार्य-योजना के अन्तर्गत परियोजनाओं का कार्यान्वयन 50 गैर-सरकारी संगठनों द्वारा किया जा रहा है। आइपेक से सहायता प्राप्त कर पाँच केन्द्रीय ट्रेड यूनियनों ने बाल श्रम मुद्दे पर

जनसाधारण को संवेदनशील बनाने तथा जन–जागरण अभियान चलाये जाने का बीड़ा उठाया है। दो प्रमुख नियोजक संगठनों द्वारा भी इसी प्रकार के कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं। गैर–सरकारी संगठनों तथा स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा चलाये गये विभिन्न कार्यक्रमों में केवल उत्तर प्रदेश में बाल श्रमिकों की संख्या करोड़ों में दर्शाई गई है। इन कार्यक्रमों का मुख्य उद्देश्य काम कर रहे सभी बालकों को काम से हटाना और उन्हें पुनर्वासित करना रहा है किन्तु विभिन्न प्रशासनिक, वित्तीय एवं संभार तंत्रीय कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुये बाल श्रमिकों को काम से हटाने और पुनर्वासित करने की उत्तरोत्तर और अनुक्रमिक पद्धति अपनाई गई है। इसी आधार पर इन संगठनों द्वारा सर्वप्रथम जोखिमपूर्ण रोजगारों में लगे बच्चों को काम पर से हटाने और उनके पुनर्वास को प्राथमिकता दी गई है।

स्वयं सेवी संस्थाओं का सदैव से ही यह प्रयास रहा है कि वे बाल श्रमिकों से सम्बन्धित समस्याओं से सरकार को अवगत करा सकें, साथ ही समाज में इस समस्या के प्रति जागरूकता ला सकें। अधिकांश गैर–सरकारी संगठनों एवं स्वयंसेवी संस्थाओं का उद्देश्य रहा है कि सरकार द्वारा चलाई जा रही राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजनाओं की नीतियों में उन कतिपय आदर्श कार्यक्रमों को कार्यान्वित किया जा सके जिनमें निम्नलिखित मुख्य तत्वों का समावेश हो।

- जिन क्षेत्रों में बाल श्रमिकों को काम पर लगाये जाने की मनाही है, उन क्षेत्रों में नियमों को दृढ़ता से लागू करवाना।
- बाल श्रमिकों के माता–पिता को रोजगार उपलब्ध कराना।
- औपचारिक तथा अनौपचारिक शिक्षा का विस्तार करना।

- छात्रवृत्ति जैसे विभिन्न प्रोत्साहनों के माध्यम से स्कूलों में दाखिले की संख्या को बढ़ावा देना।
- जन–जागरूकता कार्यक्रम चलाकर जन–जागरण को बढ़ावा देना।
- सर्वेक्षण एवं मूल्यांकन कर इस समस्या के प्रति सरकार का ध्यान आकर्षित करना।

उत्तर प्रदेश में बाल श्रम की समाप्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली कुछ प्रमुख स्वयंसेवी संस्थायें जो विभिन्न परियोजनाओं के माध्यम से बाल श्रम उन्मूलन कार्यक्रमों का संचालन कर रही है निम्न हैं :–

क्रम संख्या	स्वयंसेवी / गैर सरकारी संस्थायें	परियोजनायें
1.	बंधुआ मुक्ति मोर्चा	1. बंधुआ बाल श्रमिकों की पहचान और मुक्ति (1992–93) 2. उत्तर प्रदेश के कालीन उद्योग में लगे बंधुआ बाल श्रमिकों की मुक्ति और बाल मजदूरी का विरोध (1994–95)
2.	द सेंटर ऑफ कन्सर्न फार चाइल्ड लेबर	1. ताला उद्योग में लगे बाल श्रमिकों को मदद पहुँचाना (1992–93)
3.	डिस्ट्रिक्ट कौन्सिल फार चाइल्ड वेलफ़ेयर, मुजफ्फरनगर	1. मुजफ्फरनगर (उ0प्र0) में बाल मजदूरी के विरूद्ध कार्ययोजना चलाना (1992–93)

4.	हैजाऊ सेवक संघ	1. कालीन उद्योग में लगे बाल श्रमिकों की स्थिति सुधारना (1992–93)
		2. वाराणसी – मिर्जापुर – भदोही इलाके के कालीन उद्योग में बाल श्रमिकों की भर्ती पर रोक तथा गढ़वा (उ0प्र0) के कालीन निर्माताओं के यहाँ से बाल मजदूरी समाप्त करना। (1994–95)
5.	सघन क्षेत्र विकास समिति	1. मिर्जापुर–वाराणसी क्षेत्र के कालीन उद्योग में बाल मजदूरी के विरूद्ध मुहिम (1992–93)
6.	इंडियन कौन्सिल फार चाइल्ड वेलफेयर	1. दियासलाई उद्योग में बाल मजदूरी समाप्त करने का प्रयास (1992–95)
7.	चिन्ड्रेन्स इमैशिपेशन सोसाइटी, मिर्जापुर	1. बुनकर परिवार के बच्चों की पढ़ाई में मदद (1994–95)

उपर्युक्त संस्थाओं के अतिरिक्त बहुत सी अन्य स्वयंसेवी संस्थायें भी बाल श्रम उन्मूलन सम्बन्धी कार्यक्रमों का संचालन अलग–अलग शहरों में कार्य कर रही हैं। उत्तर प्रदेश के श्रम मंत्रालय से सहायता–अनुदान पाने वाली कुछ अन्य प्रमुख स्वयं सेवी और गैर–सरकारी संस्थायें निम्न हैं :–

- ग्राम विकास सेवा समिति, इलाहाबाद।
- श्रीमती अम्बिका देवी हाई स्कूल कन्या विद्यालय, मिर्जापुर।
- संस्कृत भाषा विकास परिषद, सेवापुरी, देवरिया।

- चिन्ड्रेन इमैंशिपेशन सोसाइटी, प्रोजेक्ट माला, मिर्जापुर।
- अखिल भारतीय समाज कल्याण परिषद, देवरिया।
- बिजनौर सेवा संस्थान, बिजनौर।
- समाज कल्याण सेवा समिति, लखनऊ।
- जन–सेवा समिति, इलाहाबाद।
- बाल विकास एवं महिला कल्याण परिषद, गोंडा।
- कपिल बाल एवं महिला सेवा संस्थान, बस्ती।
- भारतीय जन–कल्याण एवं महिला विकास संस्थान, देवरिया।
- अवध महिला एवं बाल कल्याण समिति, फैजाबाद।

वर्तमान समय में सरकार के पास समाज के हर वर्ग और हिस्से तक पहुँचने लायक संरचना उपलब्ध नहीं है। देश के करोड़ों लोग ऐसी जगहों पर रहते हैं, ऐसे काम करते हैं जहाँ पहुँचना आसान नहीं है। ऐसे लोगों के सन्दर्भ में जस्टिस पी0एन0 भगवती का विचार है कि "ऐसे लोग मानवता का कम दिखाई देने वाला क्षेत्र हैं।" ऐसे में सरकार अपने ही बहुत सारे उन लोगों तक नहीं पहुँच सकती, जो वहाँ रहते तथा काम करते हैं। उन लोगों तक स्वयंसेवी संस्थायें आसानी से पहुँच सकती हैं, बशर्ते कि सरकार उन्हें सहयोग प्रदान करे। ऐसे दूरदराज के और मुश्किल इलाकों में भी अनेक स्वयंसेवी संस्थायें काम कर रही हैं तथा वहाँ रह रहे लोगों के दुखः दर्द में साझीदार बन रही हैं। अभी भी वे सरकार तथा लोगों के मध्य संवाद का माध्यम बनने का प्रयास कर रहीं हैं। उनमें से अनेक के पास निष्ठावान कार्यकर्ताओं की ऐसी फौज है जो विषम परिस्थितियों में भी सारे कष्ट उठाकर पूरी निष्ठा और लगन से अपने काम में लगी हुई हैं।

अध्ययन क्षेत्र में बाल श्रम उन्मूलन हेतु प्रयास एवं उनके प्रभाव :

बाल श्रमिकों की संख्या के सम्बन्ध में विभिन्न मत–मतान्तरों के बावजूद यह कटु सत्य है कि उत्तर प्रदेश में बाल श्रम समस्या बड़े पैमाने पर व्याप्त है। ऐसी स्थिति में इस समस्या को देखने का कोई भी नजरिया क्यों न हो, हमें यह सत्य पूरी ईमानदारी से स्वीकार कर लेना चाहिये कि उत्तर प्रदेश में बाल श्रम की समस्या वास्तव में चिन्ताजनक है, भले ही उनके विभिन्न रूप व कारण क्यों न हों।

बाल श्रम समस्या समाज से जुड़ी एक जटिल सामाजिक समस्या है, जिसे किसी एक प्रकार के प्रयास द्वारा समाप्त करना सम्भव नहीं है, क्योंकि प्रत्येक बाल श्रमिक के पीछे कोई भिन्न कारण अथवा आधार है। भारतीय गणतन्त्र की स्थापना के 50 वर्ष बाद भी हम 14 वर्ष से कम आयु के सभी बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की सुविधा भरकस प्रयासों के बावजूद उपलब्ध कराने में कामयाब नहीं हो पाये हैं। सब बच्चों को शिक्षा से न जोड़ पाने के पीछे अन्ततः सामाजिक विभेदीकरण के प्रमुख आर्थिक व सामाजिक कारक निर्धनता, अशिक्षा, बेरोजगारी, जनसंख्या वृद्धि, शोषण की प्रवृत्ति जैसे तथ्य उभरकर सामने आते हैं।

प्रदेश सरकार द्वारा विगत कुछ वर्षो में कानून के सहारे बाल श्रम समस्या के निवारण की दिशा में गम्भीर प्रयास किये गये हैं जिसके द्वारा प्रदेश के विभिन्न उद्योगों में कार्यरत लगभग 62000 बाल श्रमिकों का चिन्हांकन किया गया है। इसके अतिरिक्त दोषी नियोजकों के विरूद्ध न्यायालयों में अभियोजन भी दायर किये गये हैं। किन्तु बाल श्रम जैसी सामाजिक समस्या का निवारण, समस्या की गहराई के परिप्रेक्ष्य में सिर्फ कानून के बल पर सम्भव नहीं है। समस्या की गम्भीरता और कारकों के परिदृश्य में इसके निवारण की दिशा में समाज के सभी वर्गों, अभिभावकों, शिक्षाविद्‌ों, समाजशास्त्रियों, गैर–सरकारी स्वैच्छिक संस्थाओं, श्रमिक

संघों, उद्योग संघों, अधिवक्ताओं तथा प्रबुद्ध नागरिकों की सरकारी प्रयासों के साथ भागीदारी की आवश्यकता को दृष्टि में रखते हुये 'प्रवर्तन विभाग' की मानसिकता वाले श्रम विभाग द्वारा बाल श्रम उन्मूलन की प्रक्रिया में जन–चेतना जागृत करने के भी विभिन्न प्रयास निरन्तर किये जा रहे है। इसी परिप्रेक्ष्य में जन–सामान्य की भागीदारी प्राप्त कर इसे जन–आन्दोलन बनाने के उद्देश्य से प्रदेश के सभी 83 जनपदों में "बाल श्रम सप्ताह" के अन्तर्गत बाल श्रम प्रथा के विरूद्ध रैली व दौड़, दीवारों पर नारों का लेखन, चित्रकला, निबन्ध लेखन, वाद–विवाद प्रतियोगिता तथा विचार गोष्ठियों के आयोजन किये जा रहे हैं ताकि बाल श्रम प्रथा के विरूद्ध जन–मानस में वातावरण सृजन का विकास किया जा सके।

माननीय सर्वोच्य न्यायालय के आदेश पर प्रदेश के विभिन्न जनपदों में खतरनाक एवं गैर–खतरनाक उद्योगों में कार्यरत बाल श्रमिकों के चिन्हीकरण के लिये कराये गये सर्वेक्षणों से ज्ञात होता है कि प्रदेश में बड़े पैमाने पर बाल श्रमिकों का प्रयोग किया जा रहा है। इन बाल श्रमिकों के उन्मूलन हेतु सरकार द्वारा समय–समय पर किये गये प्रयासों को विभिन्न तालिकाओं द्वारा व्यक्त किया जा सकता है। तालिका संख्या–3.8. विभिन्न जनपदों में उद्योगों में कार्यरत बाल श्रमिकों के चिन्हाकंन का विवरण प्रस्तुत करती है।

तालिका संख्या–3.8

चिन्हित बाल श्रमिकों का विवरण

क्र0 सं0	जनपद का नाम	सर्वेक्षण वर्ष 1997–98		सर्वेक्षण वर्ष 1998–99		सर्वेक्षण वर्ष 1999–2000		सर्वेक्षण वर्ष 2003–04	
		खतरनाक	गैर– खतरनाक	खतरनाक	गैर– खतरनाक	खतरनाक	गैर– खतरनाक	खतरनाक	गैर– खतरनाक
1.	मुरादाबाद	775	1226	717	650	192	25	54	26
2.	मिर्जापुर	94	88	20	46	12	0	01	33
3.	सोनभद्र	289	134	56	64	51	83	06	32
4.	भदोही	187	63	177	109	51	0	0	39
5.	इलाहाबाद	4594	399	1680	0	670	54	22	171
6.	फिरोजाबाद	4537	441	216	13	18	41	21	84
7.	अलीगढ़	332	675	140	123	87	32	25	109
8.	मैनपुरी	7	12	9	5	1	0	0	3
9.	आगरा	90	462	37	139	26	5	25	37
10.	मथुरा	159	168	5	120	1	4	3	38
11.	लखनऊ	19	3114	64	219	35	28	38	139
12.	उन्नाव	0	109	50	216	9	4	12	52
13.	कानपुर नगर	47	556	99	539	12	0	0	213
14.	कानपुर देहात	25	51	0	0	18	10	0	5
15.	इटावा	25	39	12	14	0	2	0	16
	योग–	11180	7537	3282	2257	1183	288	207	1097

स्रोतः श्रम विभाग उत्तर प्रदेश, नवम्बर, 2005

तालिका से स्पष्ट होता है कि प्रदेश के विभिन्न जनपदों में बड़ी संख्या में बाल श्रमिकों का उपयोग खतरनाक एवं गैर–खतरनाक दोनो उद्योंगों में हो रहा है। सर्वाधिक संख्या मुरादाबाद, इलाहाबाद, फिरोजाबाद, अलीगढ़ तथा सोनभद्र जनपदों में पाई गयी है। वर्ष 1997–98 में खतरनाक उद्योंगों में कार्य कर रहे 11180 तथा गैर–खतरनाक उद्योंगों में कार्य कर रहे 7537 बाल श्रमिकों का चिन्हीकरण किया गया था। वर्ष 1998–99 के दौरान इन उद्योंगों में कार्यरत बाल

श्रमिकों में से खतरनाक उद्योंगों में 3282 तथा गैर–खतरनाक उद्योंगों में कार्यरत 2257 बाल श्रमिकों का चिन्हीकरण किया गया जो गत वर्ष की अपेक्षा काफी कम है। सरकारी प्रयासों के उपरान्त इन बाल श्रमिकों की संख्या में निरन्तर कमी दर्ज की गई है। वर्ष 1999–2000 में चिन्हित बाल श्रमिकों की संख्या में और भी कमी आई। वर्ष के दौरान खतरनाक उद्योंगों में कार्यरत 1183 तथा गैर–खतरनाक उद्योंगों में कार्यरत 288 बाल श्रमिकों का चिन्हांकन किया गया। यदि हम चिन्हित बाल श्रमिकों की वर्तमान संख्या पर दृष्टि डालें तो स्पष्ट होता है कि वर्ष 2003–04 के दौरान खतरनाक उद्योंगों में सिर्फ 207 बाल श्रमिकों का चिन्हाकंन किया गया जो पिछले वर्षो की तुलना में काफी कम है। गैर–खतरनाक उद्योंगों में वर्ष के दौरान 1097 बाल श्रमिकों का चिन्हाकंन किया गया जिसमें गतवर्ष की अपेक्षा अवश्य वृद्धि दर्ज की गई है।

प्रदेश सरकार ने विभिन्न वर्षो के दौरान चिन्हित किये गये बाल श्रमिकों के पुनर्वास के लिये भी प्रयास किये गये हैं। इन चिन्हित बाल श्रमिकों के शैक्षिक पुनर्वास के लिये वर्ष 2004–05 में किये गये प्रयासों का विवरण तालिका संख्या–3.9 में व्यक्त किया गया है।

तालिका संख्या–3.9

चिन्हित बाल श्रमिकों का शैक्षिक पुनर्वासन

क्र0 सं0	जनपद का नाम	खतरनाक उद्योग				गैर–खतरनाक उद्योग			
		चि0बा0 श्रमिक	विद्या0 में प्रवेश	प्रवासी व अन्य	प्रवेश हेतु अवशेष	चि0बा0 श्रमिक	विद्या0 में प्रवेश	प्रवासी व अन्य	प्रवेश हेतु अवशेष
1.	मेरठ	640	438	202	0	767	618	149	0
2.	मुरादाबाद	2311	1215	1097	5	2036	1998	38	0
3.	मिर्जापुर	152	107	44	1	204	155	49	0
4.	सोनभद्र	406	373	33	0	372	233	139	0
5.	भदोही	696	96	599	1	195	139	56	0
6.	इलाहाबाद	7007	6462	545	0	789	726	63	0
7.	फिरोजाबाद	4819	4776	43	0	608	555	53	0
8.	अलीगढ़	616	614	0	2	1006	834	0	172
9.	मैनपुरी	18	17	1	0	20	17	3	0
10.	आगरा	193	153	40	0	664	599	65	0
11.	मथुरा	198	172	26	0	330	262	68	0
12.	लखनऊ	241	231	8	2	4544	4400	142	2
13.	उन्नाव	76	60	16	0	670	421	249	0

14.	कानपुर नगर	161	161	0	0	1559	1556	0	3
15.	कानपुर देहात	43	43	0	0	82	76	0	6
16.	इटावा	49	23	14	12	84	81	0	0
	योग–	**17626**	**14941**	**2668**	**23**	**13930**	**12673**	**1074**	**83**

स्रोतः श्रम विभाग उत्तर प्रदेश, नवम्बर, 2005

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि वर्ष 2004–05 के दौरान प्रदेश के विभिन्न जनपदों में खतरनाक उद्योंगों में कुल 17626 बाल श्रमिकों का चिन्हांकन किया गया जिनमें से 14941 बाल श्रमिकों को विद्यालयों में प्रवेश दिलाया गया। 2668 बाल श्रमिक जो अपने पैतृक निवास स्थान से प्रवास करके विभिन्न जनपदों में रोजगार में संलग्न थे, उनको पुनः उनके गांवों या कस्बो में वापस भेजा गया तथा वहाँ पर उन्हें शैक्षिक वातावरण उपलब्ध कराने के प्रयास किये गये। 23 बाल श्रमिकों को विभिन्न कारणों से विद्यालयों में प्रवेश नहीं दिलाया जा सका। इसी प्रकार यदि गैर–खतरनाक उद्योंगों में चिन्हित किये गये बाल श्रमिकों के शैक्षिक पुनर्वासन पर दृष्टि डालें तो स्पष्ट होता हे कि इन उद्योंगों में विभिन्न जनपदों में कार्यरत कुल 13930 बाल श्रमिकों का चिन्हीकरण किया गया जिनमें से 12673 बाल श्रमिकों को विद्यालयों में प्रवेश दिलाया जा चुका है। 1074 बाल श्रमिकों को उनके पैतृक स्थानों पर वापस भेजा गया जबकि 83 बाल श्रमिकों को किन्हीं कारणों से विद्यालयों में प्रवेश नहीं दिलाया जा सका। इन बाल श्रमिकों के शैक्षिक पुनर्वास हेतु प्रयास किये जा रहे हैं।

विभिन्न जनपदों में बाल श्रमिकों के पुनर्वास के लिये समय–समय पर सरकार द्वारा अनेक परियोजनायें संचालित की जाती रही हैं जिनका उद्देश्य बाल श्रमिकों का सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षिक पुनर्वास करना है। वर्तमान समय में प्रदेश के ऐसे जनपदों में जहाँ पर बड़ी संख्या में बाल श्रमिक कार्यरत हैं सरकार द्वारा विभिन्न परियोजनाओं का संचालन किया जा रहा है। 31 मई 2000 को प्रदेश के विभिन्न प्रमुख जनपदों में संचालित की जा रही इन विभिन्न परियोजनाओं को तालिका संख्या– 4.0 द्वारा व्यक्त किया जा सकता है :–

तालिका संख्या–4.0
बाल श्रमिकों के पुनर्वास हेतु स्वीकृत परियोजनाओं की स्थिति

क्र0सं0	जनपद का नाम	परियोजना का नाम	स्वीकृत	संचालित	छात्र	अध्ययनरत छात्र
1	फिरोजाबाद	राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना, फिरोजाबाद	70	70	6500	5965
2	अलीगढ़	राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना, अलीगढ़	30	30	2500	2500
3	भदोही	राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना, भदोही	20	20	1000	1000
4	मिर्जापुर	राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना, मिर्जापुर	20	20	1000	1000
5	मुरादाबाद	राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना,मुरादाबाद	20	20	1000	1000

6	वाराणसी	राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना, वाराणसी	10	10	500	500
7	खुर्जा (बुलन्दशहर)	राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना, खुर्जा (बुलन्दशहर)	40	29	2000	1450
8	इलाहाबाद	राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना, इलाहाबाद	40	40	2000	2000
9	सहारनपुर	राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना, सहारनपुर	40	–	2000	–
10	कानपुर	राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना, कानपुर	40	–	2000	–
11	आजमगढ़	राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना, आजमगढ़	40	–	2000	–
	योग		**370**	**239**	**22500**	**15413**

जिन उद्योगों में बाल श्रमिकों का प्रयोग किया जा रहा था उनके सेवायोजकों के विरूद्ध कानूनी कार्यवाही की गई तथा उनसे आर्थिक दण्ड के रूप में बड़ी मात्रा में वसूली की गई है। वर्ष 2004–05 में ऐसे नियोक्ताओं से आर्थिक दण्ड के रूप में जो धनराशि वसूल की गई उसका विवरण तालिका संख्या–4.1 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या–4.1

सेवायोजकों के विरूद्ध दायर अभियोजन तथा निर्गत वसूली प्रमाण पत्र

क्र0 सं0	जनपद का नाम	ख0उ0 में चि0 बा0श्र0	सेवायोजकों की संख्या	वसूली प्रमाण पत्रों में निहित धनराशि	वसूल की गई धनराशि	न्यायालयों आदेश पर स्थगित धनराशि	निहित	वसूली योग्य अवशेष धनराशि
1.	मुरादाबाद	2317	1020	10760000	426924	430000	8629076	1274000
2.	मिर्जापुर	152	86	2840000	109545	660000	1600000	470455
3.	सोनभद्र	406	222	4820000	116600	180000	3500000	1023400
4.	भदोही	696	296	8980000	196313	360000	5209000	3214687
5.	इलाहाबाद	7007	486	50750000	344324	35900000	10100000	4405676
6.	झाँसी	526	218	7700000	549500	4511000	1220000	1419500
7.	उरई जालौन	103	53	1680000	202960	1140000	0	337040
8.	ललितपुर	29	21	340000	30000	300000	10000	0
9.	बांदा	26	22	520000	32000	200000	40000	248000
10.	महोबा	25	25	560000	34500	240000	140000	145500
11.	हमीरपुर	34	10	700000	60000	600000	20000	20000
12.	चित्रकूट	2	2	20000	20000	0	0	0
13.	आगरा	193	98	2800000	150757	419143	1900000	330100
14.	मथुरा	198	78	3680000	320942	1760000	660000	939058
15.	मैनपुरी	18	13	320000	0	40000	0	280000
16.	फिरोजाबाद	4819	2243	63300000	132000	184000	880000	62104000
17.	अलीगढ़	616	272	9200000	199158	2090000	3800000	3110842
18.	लखनऊ	241	158	3160000	184866	360000	1000000	2120000
19.	उन्नाव	76	47	900000	80000	20000	460000	340000
20.	कानपुर नगर	161	125	2520000	1099950	480000	380000	560050

21.	कानपुर देहात	43	22	760000	100000	80000	400000	180000
22.	इटावा	49	0	420000	39318	0	60000	320682
	योग–	**17737**	**5517**	**176730000**	**4429657**	**49954143**	**40008076**	**82842990**

स्रोतः श्रम विभाग उत्तर प्रदेश, नवम्बर, 2005

वर्ष 2004–05 में प्रदेश के विभिन्न जनपदों के खतरनाक उद्योगों में कार्यरत कुल 17737 बाल श्रमिकों का चिन्हीकरण किया गया जिन्हें रोजगार देने वाले सेवायोजकों की संख्या 5517 थी। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इन सेवायोजकों को निर्गत किये गये वसूली प्रमाण पत्रों के माध्यम से 176730000 रू0 की धनराशि वसूल किये जाने के आदेश दिये गये जिसके परिणामस्वरूप इन सेवायोजकों से अभी तक 4429657 रूपयों की वसूली की जा चुकी है। सेवायोजकों द्वारा इस सम्बन्ध में दायर की गई याचिकाओं के परिणामस्वरूप विभिन्न न्यायालयों ने 49954143 रू0 की धनराशि का भुगतान स्थगित कर सेवायोजकों को कुछ छूट प्रदान की। अभी भी इन सेवायोजकों से 82842990 रू0 की वसूली कियां जाना शेष है।

सेवायोजकों से वसूल की गई धनराशि को सरकार ने विभिन्न योजनाओं में निवेश किया तथा उसके एवज में लाभ एवं ब्याज भी अर्जित किया गया। ब्याज एवं लाभ सहित इस कुल धनराशि को बाल श्रमिकों के पुनर्वास एवं कल्याण के लिये व्यय किया गया है जिससे बड़ी संख्या में बाल श्रमिक लाभान्वित हुये हैं। बाल श्रमिकों के पुनर्वास हेतु व्यय की गई धनराशि का वर्णन तालिका संख्या–4.2 में किया गया है।

तालिका संख्या–4.2

जनपदीय बाल श्रम पुनर्वास एवं कल्याण निधि में अर्जित आय एवं उसके उपयोग का विवरण

क्र0 सं0	जनपद का नाम	कार्पस पूँजी के रूप में प्राप्त धनराशि	जनपद में कुल वसूल की गई धनराशि	कुल निवेशित धनराशि	अर्जित ब्याज की धनराशि	बाल श्रमिकों के पुनर्वास पर व्यय / उपयोग की गई धनराशि
1.	भदोही	500000	196313	696313	217052	110000
2.	रामपुर	500000	0	500000	136197	45053
3.	इलाहाबाद	500000	344324	844324	227790	0
4.	गोरखपुर	752678	44900	797578	61037	10460
5.	वाराणसी	1000000	399152	1399152	793872	38255
6.	गाजीपुर	500000	237640	737640	218375	281
7.	कानपुर नगर	500000	1099950	1599950	382785	25032
8.	कानपुर देहात	0	100000	100000	14923	0
9.	लखनऊ	752672	184866	937000	54359	0
10.	उन्नाव	752672	80000	833000	97406	0

तालिका से स्पष्ट होता है कि प्रमुख जनपदों में बाल श्रमिकों का बड़ी मात्रा में प्रयोग करने वाले सेवायोजकों से वर्ष 2003–04 के दौरान बड़ी धनराशि वसूल की गई जिसका विभिन्न कार्यो में निवेश किया गया। तालिका को देखने से स्पष्ट होता है कि भदोही के कालीन उद्योग में कार्यरत बाल श्रमिकों के पुनर्वासन के लिये प्रदेश सरकार ने लगभग 110000 रू0 की धनराशि व्यय की है। इसी प्रकार रामपुर, गोरखपुर, वाराणसी, गाजीपुर तथा कानपुर नगर में क्रमशः 45053, 10460, 38255, 281 तथा 25032 रू0 व्यय किये गये हैं। इस व्यय की गई धनराशि से बड़ी संख्या में बाल श्रमिक लाभान्वित हुये हैं।

उपर्युक्त वर्णित प्रयासों के अतिरिक्त भी प्रदेश सरकार के निर्देश पर श्रम विभाग द्वारा अनेकों अतिरिक्त प्रयास भी निरन्तर किये जा रहे हैं ताकि इस समस्या के स्थाई निदान हेतु ठोस रणनीति तैयार की जा सके। अब तक प्रदेश में 62000 से अधिक बाल श्रमिकों के चिन्हांकन, 35000 से अधिक बाल श्रमिकों के शैक्षिक पुनर्वासन तथा 2100 बाल श्रम प्रभावित परिवारों को रोजगार उपलब्ध कराये जाने के साथ ही राज्य सरकार द्वारा "उत्तर प्रदेश बाल श्रम पुनर्वास एवं कल्याण निधि" की स्थापना हेतु एक करोड़ रूपये की धनराशि उपलब्ध कराने, 23 बाल श्रम बाहुल्य जनपदों में गठित जनपद स्तरीय "बाल श्रम उन्मूलन जनपद समिति" को बाल श्रम उन्मूलन तथा पुनर्वास कार्यक्रम को सक्रिय रूप से संचालित करने हेतु 5 लाख रू0 प्रति जनपद की दर से उपलब्ध कराने का प्रावधान रखा गया है।

श्रम सचिव के अनुसार वर्जित व्यवसायों और प्रक्रियाओं में पाये गये बाल श्रमिकों के नियोजकों के विरूद्ध विधिक कार्यवाही के अन्तर्गत 5800 से अधिक अभियोजन दायर किये गये हैं। दूसरी ओर माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय दिनांक 10 दिसम्बर, 1996 में दिये गये निर्देशों के अनुसार उनसे 20,000 रू0 प्रति

बालक की दर से वसूली हेतु लगभग 23 करोड़ रू0 के वसूली प्रमाण पत्र जारी कर 39 लाख रू0 की धनराशि वसूल की जा चुकी है। दूसरी ओर श्रम मंत्रालय भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय बाल श्रम नीति के अन्तर्गत स्वीकृत राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना भी प्रदेश के 6 जनपदों में स्वीकृत कराई गई हैं। इस योजना के अन्तर्गत कार्य से हटाये गये बाल श्रमिकों को जहाँ एक ओर निःशुल्क शिक्षा, शिक्षण सामग्री प्रदान की जाती है, वहीं उन्हें पुष्टाहार तथा 100 रू0 प्रति छात्र प्रतिमाह की छात्रवृत्ति भी दिलाई जा रही है।

पंचम् अध्याय

बाल श्रमिकों की प्रमुख समस्यायें

औद्योगीकरण के बढ़ते हुये वेग ने बाल श्रम की समस्या को जन्म दिया। इसका कारण यह था कि उद्योगपति व कारखाने के मालिक अपने उत्पादन व्ययों को घटाने के लिये सस्ते से सस्ते श्रम का उपयोग करना चाहते थे। इस दृष्टि से बाल–श्रम ही सबसे सस्ता था। दूसरे, बच्चे अपने श्रम की सौदेबाजी नहीं कर सकते थे, उनसे जितने घण्टे चाहे उतने घण्टों तक काम लिया जा सकता था। काम करने की दशाओं के सम्बन्ध में भी वे कभी–भी आवाज नहीं उठाते थे। यही नहीं, उनके आवास अथवा कल्याण आदि के लिये भी मिल मालिकों को कोई व्यवस्था नहीं करनी पड़ती थी। मजदूरी के सम्बन्ध में भी कुछ तय नहीं किया जाता था। काम लेने के बाद थोड़े से पैसे देकर उन्हें विदा कर दिया जाता था। सेवायोजकों की दृष्टि से इन विविध लाभों के कारण बच्चों को काम पर लगाने की प्रवृत्ति बढ़ती गई। यह प्रवृत्ति केवल असंगठित उद्योगों में ही नहीं वरन् संगठित उद्योगों, बागानों, खनिज उद्योगों इत्यादि सभी प्रकार के व्यवसायों में पनपती गई।

बाल श्रमिकों के रोजगार में प्रवेश से न सिर्फ उन्हें विभिन्न समस्याओं का सामना करना पड़ता है बल्कि समाज में भी बहुत सी सामाजिक–आर्थिक समस्याओं का जन्म होता है। यह बिना किसी सन्देह के कहा जा सकता है कि परिस्थितियाँ कम आयु में बालकों को रोजगार में प्रवेश के लिये बाध्य करती हैं। हम यह स्पष्ट कर चुके हैं कि निर्धनता, उपेक्षा तथा अशिक्षा का वातावरण माता–पिता को अपने बालकों को रोजगार में प्रवेश कराने के लिये विवश करता है। भारत सरकार भी वर्ष 1979 में यह विचार व्यक्त कर चुकी है कि "व्यापक निर्धनता के साथ ही माता–पिता की बच्चों के प्रति उपेक्षा ही उन्हें रोजगार में प्रवेश करने के लिये बाध्य करती है। परिवार के मुखिया की निम्न आय, बेरोजगारी, किसी भी

प्रकार के पारिवारिक भत्ते का अभाव, बड़ा परिवार, आय अर्जित करने वाले व्यक्ति की मृत्यु, परिवार के वयस्क सदस्यों की शराब एवं अन्य सामाजिक बुराइयों में संलिप्तता, अनिवार्य शिक्षा के प्रावधानों का अभाव तथा अशिक्षा आदि बाल श्रम समस्या के प्रमुख कारण हैं।"[1]

श्रम ब्यूरों ने 1954 से घरेलू उद्योगों में बाल श्रम की मात्रा का अनुमान लगाने के उद्देश्य से राज्य सरकारों से सूचना एकत्रित की जिससे यह ज्ञात हुआ कि असम में बीड़ी तथा कपड़ा बुनाई उद्योग में बाल श्रम का बड़ी संख्या में उपयोग होता है। बिहार में बीड़ी चमड़ा अभ्रक व कांच के उद्योगों में बाल श्रम का अत्यधिक उपयोग होता है। बंगाल के कपड़ा बुनाई उद्योग में 50,000 बाल श्रमिक कार्य करते है। बंगाल के ही दियासलाई उद्योग (मिदनापुर तथा चौबीस परगना) में भी 50,000 बाल श्रमिक कार्य करते है। केरल राज्य के ट्रावनकोर–कोचीन क्षेत्र में 17,000 से अधिक बाल श्रमिक केवल कॉयर (Coir) उद्योग में लगे हुये है। यहाँ लड़कों की अपेक्षा लड़कियों की संख्या अधिक है। उत्तर प्रदेश में बाल श्रम ताला, खिलौना, बीड़ी, कपड़ा, बुलाई , काँच एवं चमड़ा उद्योग में लगा हुआ है। इन विभिन्न उद्योगों में बाल श्रमिक केवल कारखानों में ही नहीं, वरन् घरों पर भी काम करते है। बालकों के संरक्षकों का कहना है, चूँकि वे बच्चों को शिक्षित करने में असमर्थ है, अतः उन्हें काम करने के लिये भेजना पड़ता है जिससे परिवार की आय में वृद्धि हो। इस प्रकार देश के भावी कर्णधार सुकोमल बालकों को अत्यन्त अमानवीय परिस्थिति में रहकर जीवन व्यतीत करना पड़ रहा है।[2]

बाल श्रमिकों के कार्य में प्रवेश के परिणामस्वरूप उन्हें अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। बाल श्रमिकों पर पड़ने वाले हानिप्रद

---

[1] Committee on Child Labour, Government of India, 1980, P.P. 11 - 12
[2] Dr. S.C. Saxena : Labour Problems and Social Security, 1988 P. 320

प्रभावों को उनके अनुपयुक्त शारीरिक विकास, विभिन्न प्रकार की बीमारियां तथा शारीरिक विकलांगता, स्नायुतंत्र के विकार, समाज के दूसरे सदस्यों के साथ मेल मिलाप के अभाव तथा विचारों को व्यक्त करने की अयोग्यता के रूप में देखा जा सकता है। प्रस्तुत अध्याय में हम बाल श्रमिकों की प्रमुख समस्याओं का अध्ययन करने का प्रयास करेंगे।

अशिक्षा की समस्या:

बाल श्रमिकों के रोजगार में प्रवेश से न सिर्फ उनके बल्कि भावी पीढ़ी के शैक्षिक स्तर पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है, मुख्य रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में यह प्रभाव अधिक होता है। कम आयु में बच्चों को जिस शैक्षिक वातावरण की आवश्यकता होती है बाल श्रमिक प्रायः उन अवसरों से वंचित रहते हैं। बच्चों के द्वारा किया जाने वाला कोई भी कार्य जो उनके पूर्ण शारीरिक विकास में बाधक है तथा उन्हें शिक्षा से वंचित करता है बाल श्रम के अन्तर्गत आता है। शिक्षा सांस्कृतिक विकास, ज्ञान को अर्जित करने की योग्यताओं के विकास, नैतिकता के विकास में सहायक होती है जो व्यक्ति को समाज का योग्य नागरिक बनाती है। कोई भी समुदाय या समाज तब तक विकास नहीं कर सकता जब तक परिवार या समुदाय बालकों की शिक्षा को जिम्मेदारी के साथ पूरा नहीं करता। श्रमिक परिवारों में सामाजिक पिछड़ेपन तथा निर्धनता का मुख्य कारण अशिक्षा ही रहा है।

संयुक्त राष्ट्र की एक रिपोर्ट (1982) में यह कहा गया कि "बाल श्रम की सर्वाधिक समस्या उन देशों में है जहाँ पर अशिक्षा की दर सर्वाधिक तथा स्कूल जाने वाले बालकों की संख्या निम्नतम है।" यह कहा जाता है कि शिक्षित माता–पिता अपने बच्चों की शिक्षा के प्रति अधिक जागरूक होते हैं। अशिक्षित या

कम पढ़े–लिखे माता–पिता के लिये बच्चों की शिक्षा का महत्व कम होता है और इसी कारण वे उन्हें कम आयु में रोजगार में प्रवेश करने देते हैं।[1]

बच्चों तक शिक्षा की उपलब्धता तथा उनकी स्कूल में उपस्थिति की सफलता कुछ जैविक एवं मनोवैज्ञानिक तथ्यों पर निर्भर करती है। इस संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि संसार के कुछ क्षेत्रों में भूख और कुपोषण की समस्या बच्चों के विकासशील मस्तिष्क पर विपरीत प्रभाव डालती है और इस कारण वे उपलब्ध शिक्षा के अवसरों का पर्याप्त लाभ नहीं उठा पाते हैं। बच्चों को शिक्षा के अधिकार दिलाने के प्रयासों में निर्धनता सबसे बड़ी बाधा के रूप में सामने आती है। निर्धनता के कारण ही परिवार अपने बच्चों को विद्यालय भेजने में असमर्थ होते हैं क्योंकि वे विद्यालय फीस तथा अन्य विद्यालय सामग्री की लागतों को वहन करने में असमर्थ होते हैं। विद्यालय शिक्षा के पूर्णतः निःशुल्क होने पर भी ये परिवार अपने बच्चों को तभी विद्यालय भेजते हैं जब उनके कार्य से प्राप्त करने वाली आय पारिवारिक व्यय के लिये पर्याप्त होती है। विभिन्न अध्ययनों से भी इस बात की पुष्टि होती है कि बाल श्रमिक कार्य के उपरान्त बचे समय में ही विद्यालय जाते हैं। कुछ सामाजिक कारण भी बच्चों को शिक्षा से वंचित रखने के लिये उत्तरदायी होते हैं जिसका बालकों की अपेक्षा बालिकाओं पर अधिक बुरा प्रभाव पड़ता है। ग्रामीण एवं पिछड़े सामाजिक पर्यावरण वाले क्षेत्रों में बालिका शिक्षा पर प्रायः ध्यान नहीं दिया जाता है। अशिक्षित एवं निर्धन माता–पिता बालिका शिक्षा के पक्ष में नहीं होते हैं तथा वे उन्हें केवल घरेलू कार्यो तक ही सीमित रखना चाहते हैं।

शिक्षा का अधिकार एक आर्थिक एवं नैतिक आवश्यकता है। बच्चों के लिये पर्याप्त एवं उपयुक्त भोजन की व्यवस्था, कपड़ों एवं रहने के लिये उपयुक्त

---

[1] U.N.I. Report, Indian Express, November 19, 1993.

स्थान की व्यवस्था तथा उनके स्वास्थ्य की रक्षा आदि सभी कार्यो के लिये शिक्षा की आवश्यकता होती है।[1] परन्तु बाल श्रमिक प्रायः शिक्षा से पूर्णतः या आंशिक रूप से वंचित रहते हैं।

निर्धनता, अशिक्षा एवं बाल श्रम की उपस्थिति के मध्य धनात्मक सह–सम्बन्ध होता है। विभिन्न राज्यों में हुये अध्ययन इस बात की पुष्टि करते हैं। 5 से 9 आयु वर्ष के स्कूल जाने वाले बच्चों का अनुपात भिन्न–भिन्न राज्यों में भिन्न–भिन्न है। बिहार राज्य में यह अनुपात सबसे कम 31.47 प्रतिशत तथा केरल राज्य में अधिकतम 75.32 प्रतिशत है। सम्पूर्ण भारत में स्कूल जाने वाले बालकों का आनुपातिक प्रतिशत 44.47 है। बालिकाओं के संदर्भ में यह प्रतिशत अत्यधिक असन्तोषजनक है। स्कूल जाने वाली बालिकाओं की संख्या राजस्थान में सबसे कम 16.03 प्रतिशत तथा अधिकतम संख्या केरल राज्य में 75.17 प्रतिशत है। बालिकाओं के संदर्भ में राष्ट्रीय औसत 32 प्रतिशत है।[2]

बाल श्रमिकों से सम्बन्धित विभिन्न अध्ययनों में बच्चों के स्कूल न जाने के पीछे तीन कारण बताये गये। प्रथम कारण, स्कूलों की अपर्याप्त संख्या तथा शैक्षिक वातावरण का अभाव है। द्वितीय कारण, यह है कि ये विद्यालय बच्चों को आकर्षित करने में असफल रहे हैं तथा तृतीय कारण, यह रहा है कि निम्न आर्थिक स्थिति के कारण माता–पिता बच्चों को विद्यालय भेजने में असमर्थ होते हैं। स्वतन्त्रता के बाद प्राथमिक एवं सेकेण्डरी स्कूलों की संख्या में निश्चित रूप से कई गुना वृद्धि हुई है। इसी प्रकार अध्यापकों की संख्या में भी कई गुना वृद्धि हुई है परन्तु विद्यार्थियों और अध्यापकों की संख्या में आनुपातिक सम्बन्ध सन्तोषजनक न

---

[1] Sudheer Kumar – 'Child Labour and Education' in Children at Work Problems and Policy Options – B.R. Publishing Corporation, New Delhi, 1993, P.P. – 60 – 61.
[2] Sudheer Kumar – ' Child Labour and Education in children at work problems and policy options – B.R. Publishing Corporation, New Delhi, 1993 P.P. 60-61.

होने के कारण पिछले कुछ वर्षो में अध्यापकों के ऊपर अतिरिक्त बोझ पड़ा है जिसके परिणामस्वरूप शिक्षा के स्तर में गिरावट दर्ज की गई है। शिक्षा के स्तर में गिरावट तथा पर्याप्त शैक्षिक वातावरण का अभाव भी ग्रामीण एवं निर्धन बालकों को शिक्षा से दूर ले जाने का एक प्रमुख कारण रहा है। ऐसी परिस्थितियों में उनके समक्ष प्रश्न यह होता है कि वे कहाँ जायें? और निश्चित रूप से वे इस प्रश्न का उत्तर रोजगार में ढूँढ़ते हैं।

1991 की जनगणना के अनुसार लगभग 80 प्रतिशत बालकों का विद्यालयों में पंजीकरण 5 से 8 आयु वर्ष में होता है। लगभग 20 प्रतिशत बच्चे जो कभी भी विद्यालय नहीं जाते समाज के निम्नतम सामाजिक एवं आर्थिक समुदाय से सम्बन्धित होते हैं। ये बच्चे ग्रामीण या शहरी क्षेत्रों में श्रमिक बन जाते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में बीच में पढ़ाई छोड़ देने वाले बालकों की संख्या शहरी क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक होती है। श्रमिक कल्याण समिति के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि कार्यो एवं विद्यालयों के समय में समानता होने का परिणाम यह होता है कि इन क्षेत्रों के बालक स्थाई रूप से शिक्षा से वंचित हो जाते है। शहरी क्षेत्रों में बालकों के पढ़ाई बीच में छोड़ने के पीछे माता–पिता की स्कूली खर्चे उठाने में असमर्थता, माता–पिता की मृत्यु अथवा बीमारी, घरेलू कार्यो का बोझ, पारिवारिक व्यवसाय में सहायता, पढ़ाई में मन न लगना तथा अध्यापकों या अन्य लोगों का बुरा बर्ताव आदि कारण होते हैं। इस प्रकार ग्रामीण एवं शहरी जनसंख्या का एक बड़ा भाग शिक्षा के अवसरों से वंचित हो जाता है।

शोषण की समस्या:

अधिकांश विकासशील देशों में बाल श्रमिकों का विभिन्न उद्योगों एवं रोजगार कार्यो में प्रवेश माता–पिता या रिश्तेदारों एवं मित्रों के माध्यम से होता है। विभिन्न अध्ययनों में यह पाया गया कि 6 से 8 आयु वर्ष के बच्चों को सर्वप्रथम घरेलू कार्यो तथा रिपेयरिंग कार्यो में प्रवेश कराया जाता है। इस आयु के बाद वे उत्पादन इकाइयों तथा कारखानों में संलग्न हो जाते हैं। बाल श्रमिक इन सभी मामलों में पूर्णतया सेवायोजक पर निर्भर रहते हैं जो साधारणतया कार्य की दशाओं, कार्य के घण्टों तथा मजदूरी का स्वयं ही निर्धारण करते है। इस दिशा में किये गये अध्ययनों की रिपोर्टो से ज्ञात होता है कि ये बाल श्रमिक अत्यन्त अमानवीय दशाओं में कार्य करते हैं। उन्हें विभिन्न प्रकार के बुरे व्यवहारों का सामना करना पड़ता है जिसमें आर्थिक दण्ड, गाली–गलौज, अपमान तथा अनावश्यक दबाब जैसे दण्ड शामिल होते हैं।

अधिकांश बच्चे जिन्हें प्रशिक्षार्णियों के रूप में रोजगार में संलग्न किया जाता है उन्हें कार्य के दौरान बहुत कम सीखने को मिलता है जबकि उनके साथ नौकरों के समान व्यवहार किया जाता है तथा अत्यन्त निम्न मजदूरी दी जाती है। इन विषम परिस्थितियों में बहुत कम प्रशिक्षणार्थी ही अपना प्रशिक्षण पूरा कर पाते हैं। इन बालकों से नीरस तथा अत्यन्त कठिन परिश्रम वाले कार्य करवाये जाते हैं जो बालकों के स्वस्थ शारीरिक तथा मानसिक विकास के लिये खतरनाक होते हैं।

शहरी क्षेत्रों में विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत बाल श्रमिकों से अत्यन्त बुरा एवं शोषण युक्त, व्यवहार किया जाता है। उन्हें कठिन परिस्थितियों, जैसे–अत्यधिक तापमान में, धूल तथा धुयें के बीच, उपयुक्त हवा एवं प्रकाश के

अभाव, अस्वास्थकर वातावरण, दूषित पर्यावरण में पर्याप्त सुरक्षा उपकरणों के अभाव में कार्य करने के लिये बाध्य किया जाता है। इन कठिन परिस्थितियों में कार्य करने के कारण होने वाली दुर्घटना एवं बीमारियों के समय भी इन बाल श्रमिकों को किसी भी प्रकार की चिकित्सा सुविधा उपलब्ध नहीं कराई जाती।

आन्ध्र प्रदेश के मरकापुर क्षेत्र में स्लेट विनिर्माण उद्योग पर हुये अध्ययन से यह बात स्पष्ट हुई है कि वहाँ बच्चों को अत्यन्त विषम परिस्थितियों में कठोर श्रम करना पड़ता है। बच्चों के लिये कार्य दिवस का आरम्भ 6 बजे सुबह हो जाता है। उन्हें अपने घर से कार्य स्थल तक जाने के लिये 3–4 किमी0 पैदल चलना पड़ता है। अधिकांश के पास चप्पल तक नहीं होती, किन्तु उनसे उत्खनन स्थल पर 7 बजे सुबह पहुँच जाने की आशा की जाती है। वहाँ उन्हें 1 बजे दोपहर तक काम करना पड़ता है। गर्मी के दिनों में तापमान 44–45 डिग्री सेल्सियस तक चढ़ जाता है, ऐसी स्थिति में ये बच्चे धूप में प्यास से व्याकुल होने लगते हैं। धूप से जलती हवा और कठोर परिस्थितियों में इन बच्चों को 40 से 50 फीट गहराई से बेकार माल बाहर तक लाना पड़ता है। जिसमें अत्यधिक खतरा होता है। चूँकि खान में कोई उचित पगडण्डी की व्यवस्था नहीं होती, इसलिये यदि इनका पैर फिसल जाये तो उन्हें गहरी चोट भी लग सकती है। ऐसी कठिन परिस्थितियों में भी ये बच्चे काम करते रहते हैं। इनकी मजदूरी का निर्धारण नियोक्ता ही करते हैं। खानों में महिला एवं बाल श्रमिकों को एक दिन में 20 रूपये से अधिक नहीं मिलता। महिलाओं और बच्चों को अकुशल श्रमिकों की श्रेणी में रखा जाता है। [1]

---

[1] R. Vidyasagar, K. Suman Chandra and Y. Reddi : A study on on state industry of Markapur.

कार्य के घण्टे:

बाल श्रमिकों के कार्य के घण्टों में स्थान, व्यवसाय तथा कार्य की उपलब्धता के आधार पर अन्तर पाया जाता है। होटल एवं रेस्टोरेन्ट में कार्य करने वाले बच्चे सुबह से लेकर रात में अन्तिम ग्राहक के जाने तक कार्य करते रहते हैं। इसी प्रकार घरेलू नौकरों के रूप में कार्य करने वाले बच्चे भी 12 घण्टे से अधिक प्रतिदिन कार्य करते हैं। यद्यपि स्वरोजगार में संलग्न बाल श्रमिक प्रतिदिन कम घण्टों तक कार्य करते हैं।

संगठित क्षेत्र के व्यवसायों में ये श्रमिक प्रतिदिन 8 घण्टे कार्य करते हैं। बहुत से मामलों में वे बिना किसी विश्राम तथा मध्यावकाश के सप्ताह में सातों दिन कार्य करते हैं। कृषि कार्यो, उद्योगों एवं घरेलू कार्यो में जहाँ उन्हें विश्राम का समय मिलता है, वह अपर्याप्त होता है। साप्ताहिक अवकाश की अनुमति उन्हें कभी–कभी ही मिलती है। नियमित साप्ताहिक अवकाश उन्हें प्राप्त नहीं होता। अध्ययन क्षेत्र में कार्य के घण्टों के आधार पर संकलित किये गये आंकड़ों का प्रतिशत वितरण तालिका संख्या 4.3 में किया गया है।

तालिका संख्या–4.3

बाल श्रमिकों का कार्य के घण्टों के आधार पर प्रतिशत वितरण

क्रम संख्या	कार्य के घण्टे	बाल श्रमिकों की संख्या	प्रतिशत
1.	2–4	3	1.5
2.	4–6	11	5.5
3.	6–8	68	34.0
4.	8–10	97	48.5
5.	10 से अधिक	21	10.5
	कुल	**200.00**	**100.00**

तालिका से स्पष्ट है कि सर्वाधिक 48.5 प्रतिशत बालक श्रमिक 8 से 10 घण्टे प्रतिदिन कार्य करते हैं। 34.0 प्रतिशत बाल श्रमिक प्रतिदिन औसतन 6 से 8 घण्टे कार्य करते हैं जबकि 10.5 प्रतिशत श्रमिक 10 से भी अधिक घण्टे प्रतिदिन कार्य करने के लिये विवश हैं। अध्ययन के दौरान बहुत कम संख्या ऐसे बाल श्रमिकों की पाई गई जो निम्नतम कार्य के घण्टों तक कार्य करते है।

आर्थिक शोषण:

बहुत से ऐसे कारण होते हैं जिनके कारण सेवायोजक बालकों को रोजगार में रखने को प्राथमिकता देते हैं। बाल श्रम समिति ने बालकों को प्राथमिकता दिये जाने के निम्न कारण प्रमुख माने हैं।[1]

1. निम्न मजदूरी पर श्रम की उपलब्धता।
2. अपराध या शर्म की अनुभूति का कम होना।
3. व्यवसाय की मांग के हिसाब से निम्न स्तरीय कार्यो को करने में झिझक का अभाव।
4. जोश एवं तीव्रता से कार्य करने की क्षमता तथा थकावट का कम अनुभव।
5. अनुशासन और नियंत्रण की अधिक सम्भावना।
6. सीखने की तीव्र क्षमता।
7. रख–रखाव में मितव्ययी।
8. संगठन का अभाव।

इन उपरोक्त कारणों के कारण सेवायोजक बालकों को कार्य में रखने को प्राथमिकता देते हैं तथा न सिर्फ उनके साथ बुरा बर्ताव करते हैं बल्कि आर्थिक शोषण भी करते हैं। कम आयु के इन बालकों को मजदूरी के नाम पर धोखा दिया जाता है तथा उन्हें निम्नतम मजदूरी दी जाती है।

---

[1] Report of the Committee on Child Labour, Government of India, 1980; P. 11 – 12.

लीच लेविन (1978) ने मोरक्कों के कालीन उद्योग में कार्यरत बाल श्रमिकों के अध्ययन में अपने निष्कर्ष प्रस्तुत किये। "मोरक्कों में विधिक रूप से 12 वर्ष से कम आयु के बालकों को रोजगार में संलग्न करना प्रतिबन्धित है तथा अधिकतम 48 घण्टे प्रति सप्ताह कार्य की अनुमति है।" परन्तु जब दासता के विरूद्ध कार्य करने वाली एक समिति (Anti Slavery Society) ने 62 कारखानों का दौरा किया तो उन्होंने पाया कि केवल 8 कारखानों को छोड़कर अन्य सभी कारखानों में कम आयु की बालिकाओं को इन कार्यो में रखा गया है। इनमें से 28 कारखानों में तो 8 से 12 वर्ष की आयु की लगभग एक तिहाई बालिका श्रमिकों द्वारा कार्य किया जा रहा है। इन बालिकाओं की मजदूरी अत्यन्त निम्न थी तथा कुछ को तो कोई भी आर्थिक मजदूरी नहीं दी जा रही थी।[1]

इस प्रकार सेवायोजकों की निम्नतम लागत पर अधिकतम लाभ अर्जित करने की प्रवृत्ति पूर्ण रूप से शोषण का विषय है। दरअसल, बच्चों को इसी मानसिकता से कार्य पर रखा जाता है कि उन्हें ज्यादा श्रम के एवज में कम मजदूरी देनी होती है। इस प्रकार इन नन्हें बच्चों को हर हालत में बंधुआ मजदूर ही कहा जा सकता है। शिक्षा के अधिकार से वंचित किये जाने से भी ये बच्चे बंधुआ हुये तथा न्यूनतम मजदूरी से वंचित होने के कारण भी वे बंधुआ हुये।

स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्यायें:

स्वास्थ्य का आशय स्वस्थ एवं पूर्ण शारीरिक, मानसिक और सामाजिक विकास से हैं, न कि बीमारियों के अभाव और आधारभूत मानवीय अधिकार से। स्वास्थ्य के अधिकतम सम्भव स्तर को बनाये रखना समाज का सर्वाधिक महत्वपूर्ण लक्ष्य होना चाहिये। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये कुछ अन्य

[1] Ideas Forum 1981, UNICEF

सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों का भी महत्वपूर्ण प्रयास आवश्यक होता है। विकासशील देशों में विद्यमान निम्न स्वास्थ्य स्तर का सम्बन्ध निर्धनता एवं उससे सम्बन्धित समस्याओं भूख और कुपोषण के साथ–साथ विशेष व्यवसायों के व्यावसायिक खतरों एवं जोखिमों से है। खतरनाक प्रकृति के व्यवसायों में कार्यरत बाल श्रमिकों का शारीरिक एवं मानसिक विकास अवरूद्ध हो जाता है तथा कभी–कभी वे विकलांगता का शिकार भी हो जाते हैं। कुछ महत्वपूर्ण व्यवसाय जिनमें सर्वाधिक बाल श्रमिक पाये जाते हैं, माचिस उद्योग, काँच उद्योग, कालीन उद्योग, बीड़ी उद्योग, बेल्डिंग तथा लोहे से सम्बन्धित कार्य, मैकेनिक कार्य, पटाखा उद्योग, जरी उद्योग तथा हीरे की कटाई से सम्बन्धित कार्य आदि है। ये सभी कार्य बाल श्रमिकों के लिये अत्यधिक नुकसानदायक तथा शारीरिक एवं मानसिक विकास को अवरूद्ध करने वाले हैं। इसके अतिरिक्त सड़क के किनारे स्थित दुकानों, होटलों तथा रेस्टोरेन्ट में जहाँ वे धूल, धुयें और पानी के निरन्तर सम्पर्क में रहते हैं, में कार्यरत बाल श्रमिक प्रायः विभिन्न बीमारियों से ग्रस्त रहते हैं। मोटर गैरेजों एवं वर्कशाप आदि में ये श्रमिक बिना किसी सुरक्षा उपकरणों के कार्य करते हैं। इन श्रमिकों से धूप एवं वर्षा में भी कार्य की अपेक्षा की जाती है जिसके कारण भी उन्हें अनेक बीमारियों का सामना करना पड़ता है। ऐसे व्यवसायों जिनमें बाल श्रमिकों को हानिकारक रसायनों, धूल एवं आग के सम्पर्क में रहना पड़ता है, उनमें उनके स्वास्थ्य पर अत्यधिक बुरा प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार के व्यवसाय वयस्क श्रमिकों के लिये भी हानिकारक होते हैं, परन्तु बाल श्रमिकों पर इनका अधिक गम्भीर प्रभाव पड़ता है क्योंकि वे शारीरिक विकास की अवस्था में होते है तथा उनका शरीर इन खतरों का सामना करने में असमर्थ होता है क्योंकि उन्हें इन कार्यो से सम्बन्धित प्रशिक्षण भी नहीं दिया गया होता है।

निर्माण उद्योग में बालकों से प्रायः पानी भरने तथा सामान लाने, ले जाने सम्बन्धी कार्य लिये जाते हैं। वे प्रायः ऊँचाई से गिर कर प्रायः घायल तथा कभी–कभी गम्भीर रूप से घायल हो जाते हैं। भारी बोझा उठाने से बच्चों का शारीरिक विकास भी प्रभावित होता है। औजारों को प्रयोग करने के पूर्व अनुभव एवं प्रशिक्षण का अभाव, एकाग्रता का अभाव, अनियन्त्रित मशीनों के प्रयोग, विद्युत एवं विद्युत उपकरणों के असुरक्षित प्रयोग, बिना सुरक्षा उपकरणों, धूल, धुयें से युक्त कार्यस्थल, शुद्ध वायु एवं प्रकाश की अनुपलब्धता आदि के कारण बाल श्रमिक प्रायः दुर्घटनाओं एवं बीमारियों के शिकार होते रहते हैं। इनके अतिरिक्त कार्य के अधिक घण्टें, सन्तुलित भोजन के अभाव तथा शारीरिक निर्बलता के कारण भी बाल श्रमिक प्रायः विभिन्न बीमारियों से ग्रसित हो जाते हैं।

निम्न एवं असुरक्षित कार्य दशाओं में निरन्तर कार्य करने का परिणाम यह होता है कि बाल श्रमिक शारीरिक विकलांगता तथा कुरूपता का शिकार हो जाते हैं। भारी तथा कठिन कार्यो में संलग्न बाल श्रमिकों में इन बीमारियों तथा दुर्घटनाओं का प्रतिशत और भी अधिक हो जाता है क्योंकि सन्तुलित भोजन के अभाव में उन्हें प्राप्त होने वाली ऊर्जा तथा कार्य के लिये आवश्यक ऊर्जा में असन्तुलन की स्थिति व्याप्त रहती है। इसके परिणामस्वरूप उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता में कमी आ जाती है तथा वे प्रायः बीमारियों से ग्रसित रहने लगते हैं। चारकोल (लकड़ी का कोयला) तथा निर्माण उद्योग में बाल श्रमिक अपनी शारीरिक क्षमता से अधिक बोझ उठाते हैं। रिपेयरिंग की दुकानों में कार्य करने वाले बाल श्रमिक शुद्ध वायु एवं प्रकाश के अभाव, दूषित एवं शोरगुल वाले वातावरण में कार्य करते हैं। अनेक उद्योगों में वे मशीनों औजारों तथा ऐसे उपकरणों के साथ कार्य करते हैं जो प्रायः वयस्क श्रमिकों के लिये होते हैं। सुरक्षा, प्रशिक्षण एवं व्यक्तिगत सुरक्षा उपकरणों के अभाव के कारण दुर्घटनाओं में और भी वृद्धि होती है। अधिक

शोरगुल में निरन्तर रहने के कारण उनके बधिर होने का भी भय रहता है। अधिक गर्म तापमान, आद्र एवं धूल युक्त वातावरण के परिणामस्वरूप टी0बी0 जैसे संक्रामक रोग होने की सम्भावना बढ़ जाती है।

कालीन उद्योग में बाल श्रमिक निरन्तर स्वास्थ्य के लिये हानिकारक परिस्थितियों में कार्य करते हैं। लगातार एक ही स्थिति में खड़े रहने तथा कार्य की बारीकता के कारण उनके पैर, पीठ तथा आँखों सम्बन्धी विकृतियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। विभिन्न रंगों एवं रसायनों के सम्पर्क में रहने के कारण उनके हाँथों एवं अंगुलियों में संक्रमण हो जाता है। ऊन युक्त धूल में सांस लेने के कारण उन्हें फेफड़ों एवं श्वांस सम्बन्धी बीमारियाँ हो जाती हैं। ये खतरे कम रोशनी, हवादार रोशनदानों एवं खिड़कियों के अभाव तथा धुलाई की सुविधा के अभाव के कारण और अधिक बढ़ जाते हैं।[1] फर्नीचर उद्योग में कार्यरत बाल श्रमिकों को विभिन्न रसायनों जैसे पेन्ट, वार्निश, थिनर तथा अन्य रसायनिक घोलों आदि से कोई सुरक्षा प्रदान नहीं की जाती है। कभी–कभी सेवायोजक स्वयं भी इन खतरों से अनभिज्ञ होते हैं। ये अधिकांश रसायन त्वचा तथा श्वांस सम्बन्धी बीमारियों को उत्पन्न करते हैं। इन रसायनिक प्रभावों के कारण ही इन उद्योगों के बाल श्रमिकों को सिर दर्द तथा चक्कर आने की शिकायतें आम होती हैं।

महाराष्ट्र के गुब्बारे के कारखानों में बाल श्रमिकों को प्रतिदिन 8 से 9 घण्टे तक कार्य करना पड़ता है। इन फैक्ट्रियों के सम्बन्ध में मेडिकल रिपोर्ट बताती है कि लगातार कई–कई घण्टों तक गैस एवं एसिड की गन्ध में साँस लेने के

---

[1] Nadeem Mohsin – "Child Labour – Strategy for Combating risks – in Child at Work Problems and Policy Options", B.R. Publication Corporation, New Delhi, 1993, P – 259.

कारण ये श्वसन तन्त्र को प्रभावित करते हैं जिससे न्यूमोनिया, खाँसी तथा पक्षाघात जैसी बीमारियों का खतरा बना रहता है।[1]

ताला बनाने वाले कारखानों में, बच्चे, बफिंग मशीनों के साथ कठिन परिश्रम करते हैं। स्प्रे पेन्टिग औद्योगिक इकाइयों एवं अलमारी आदि बनाने वाली इकाइयों में अधिकांश पालिश करने वाले श्रमिक टी0बी0, अस्थमा, सिर दर्द तथा श्वांस सम्बन्धी अन्य बीमारियों से ग्रसित रहते हैं। बीड़ी उद्योग में कार्यरत बाल श्रमिकों को अनीमिया, अस्थमा, टी0बी0, कैन्सर आदि गम्भीर बीमारियाँ होने का अत्यधिक खतरा होता है क्योंकि वे लगातार तम्बाकू के सम्पर्क तथा अस्वास्थ्यकर वातावरण में रहते हैं। जरी–कढ़ाई के कार्यो में संलग्न बाल श्रमिक कम प्रकाश, शुद्ध हवा के अभाव तथा भीड़–भाड़ वाली जगहों पर कार्य करने के कारण आँखों सम्बन्धी बीमारियों तथा कभी–कभी अन्धेपन से ग्रस्त रहते हैं।

जूता पालिश, होटल एवं रेस्टोरेन्ट सेवाओं, घरेलू कार्यो, कूड़ा बीनने वाले कार्य, जानवर चराने का कार्य तथा खेतों में काम करने वाले बाल श्रमिक विभिन्न प्रकार की शारीरिक बीमारियों से ग्रसित रहते हैं। होटलों एवं रेस्टोरेन्ट में काम करने वाले श्रमिकों को किसी भी छोटे या बड़े शहर एवं सड़क के किनारे स्थित दुकानों में आसानी से देखा जा सकता है। ये बच्चे प्रायः शारीरिक खतरों जैसे ग्राहकों की सेवा के दौरान जलने, सब्जी काटने के दौरान अंगुलियों के कटने जैसी दुर्घटनाओं का शिकार होते रहते हैं। ग्राहकों और मालिकों द्वारा किये जाने वाले बुरे व्यवहार तथा गाली–गलौज के कारण ये श्रमिक मानसिक रूप से भी पीड़ित किये जाते हैं जिससे उनका मानसिक विकास अवरूद्ध हो जाता है। जूता पालिश एवं कूड़ा बीनने का कार्य करने वाले बच्चों के साथ भी बुरा व्यवहार एवं

---

[1] Nadeem Mohsin – "Child Labour – Strategy for Combating risks – in Child at Work Problems and Policy Options", B.R. Publication Corporation, New Delhi, 1993, P – 258.

गाली–गलौज किया जाना एक सामान्य कार्य है। इन सभी व्यवसायों में कार्यरत बाल श्रमिक प्रायः विभिन्न शारीरिक दुर्घटनाओं का शिकार होते रहते हैं।

ज्वर, सर्दी–जुकाम, पीठ दर्द, त्वचा सम्बन्धी बीमारियाँ आदि बाल श्रमिकों को होने वाली प्रायः सामान्य बीमारियाँ हैं। बाल श्रमिक अत्यन्त गन्दे कपड़े पहनते हैं तथा अज्ञानता के कारण इन बीमारियों के प्रति जागरूक न होने के कारण प्रायः प्रतिदिन स्नान भी नहीं करते हैं। जिन स्थानों पर वे कार्य करते हैं वहाँ पर भी पानी, स्नानघरों एवं शौचालयों का अभाव होता है। अधिकांश बाल श्रमिकों को बीमारियों के दौरान मालिकों के द्वारा कोई चिकित्सकीय सुविधा भी उपलब्ध नहीं कराई जाती है। अधिकांश बाल श्रमिक तम्बाकू, गुटखा आदि का सेवन करते हें जो उनके स्वास्थ्य पर और भी अधिक बुरा प्रभाव डालते हैं।

वयस्क श्रमिकों के साथ कार्य करने के कारण अधिकांश बाल श्रमिक उनकी अनेक बुरी आदतें भी सीख जाते हैं। विभिन्न अध्ययनों से ज्ञात होता है कि अधिकतर बात श्रमिक कार्य के दौरान या कार्य के बाद बीड़ी–सिगरेट पीने, पान मसाला खाने, शराब पीने या जुआँ खेलने जैसे बुरी आदतों के शिकार हो जाते हैं। कभी–कभी तो वयस्क श्रमिक उन्हें ऐसा करने के लिये विवश करते हैं। इसके अतिरिक्त वयस्क उन्हें ऐसा करने के लिये विवश करते हैं। इसके अतिरिक्त वयस्क श्रमिकों के द्वारा उनसे अनेक अनुचित, अनैतिक और अमानवीय कार्य भी कराये जाते हैं जिनसे उनका चारित्रिक पतन होता है साथ ही वे विभिन्न शारीरिक एवं मानसिक व्याधियों के शिकार हो जाते हैं। चिकित्सा के समुचित अभाव के कारण वे अपने को हमेशा के लिये खो देते हैं।

पुनर्वास की समस्याः

बाल श्रम की समस्या के प्रति समाज को संवेदनशील बनाने के लिये राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय जागरूकता के साथ ही साथ सम्मिलित प्रयास किये जाने की आवश्यकता है। समय–समय पर सरकार ने बाल श्रमिकों के पुनर्वास हेतु प्रयास किये हैं परन्तु ये प्रयास पर्याप्त सिद्ध नहीं हुये हैं जिसका प्रमुख कारण निर्धनता एवं बेरोजगारी की गम्भीर स्थिति है। सर्वोच्च न्यायालय ने अपने दिसम्बर 1996 के बाल श्रम से सम्बन्धित निर्णय में बाल श्रम के लिये निर्धनता को उत्तरदायी मानते हुये कहा कि जब तक परिवार के लिये आय की वैकल्पिक व्यवस्था नहीं हो पाती, तब तक बाल श्रम के पुनर्वास के लिये चलाये गये कार्यक्रम सफल नहीं हो सकते। यह निर्विवाद सत्य है कि देश में अधिकांश बाल श्रमिक पारिवारिक निर्धनता अथवा पारिवारिक बेरोजगारी के शिकार हैं। परिवार के सदस्यों को दो जून की रोटी उपलब्ध कराने के उद्देश्य से अभिभावकों द्वारा उन्हें असमय ही परिवार के बोझ को उठाने के लिये विवश किया जाता है। देश के करोड़ो लोग आज भी गरीबी रेखा से नीचे जीवन निर्वाह करने के लिये विवश हैं। लाखों नवयुवक आज भी ऐसे हैं जो रोजगार की तलाश में दर–दर भटक रहे हैं अथवा भरण पोषण के लिये आवश्यक अथवा क्षमता के अनुसार वांछित रोजगार से निम्न स्तर का अल्पकालिक रोजगार होने से परिवार के लिये वांछित आय प्राप्त नहीं कर पा रहे हैं। ऐसी परिस्थिति में अपने परिवार के छोटे–छोटे सदस्यों को विवशता में बाल श्रमिकों के रूप में श्रम बाजार में प्रवेश दिलाते हैं। कुछ परिवार ऐसे भी हैं, जिनमें कोई प्रौढ़ सदस्य नहीं है और मजबूरी में उन परिवार के बच्चों को श्रम बाजार की शरण लेनी पड़ रही है।

बाल श्रमिकों के पुनर्वास के लिये समय–समय पर सरकार एवं स्वयं सेवी संस्थाओं ने विभिन्न कार्यक्रम चलायें हैं। इसी के तहत राष्ट्रीय बाल श्रम

परियोजनाओं का प्रारम्भ 1988 में काँच, पीतल के बर्तन, ताला, कालीन, स्लेट, ईंट, माचिस, रत्न तथा बीड़ी (असंसाधित तम्बाकू तथा स्थानीय रूप से उपलब्ध तेंदू पत्तों से निर्मित सिगरेट) जैसे व्यवसायों तथा उद्योगों में काम कर रहे बालकों के पुनर्वास के लिये किया गया था।

राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजनायें स्थान विशेष पर आधारित समयबद्ध योजनायें हैं। इन परियोजनाओं का स्वरूप सहभागी है क्योंकि इनमें सरकारी और गैर–सरकारी अभिकरणों तथा समस्त समुदाय को एक सूत्र में जोड़ा गया है। काम कर रहे सभी बालकों को काम से हटाना और उन्हें पुनर्वासित करने के काम को साथ–साथ करना ही वांछनीय समझा गया है किन्तु विभिन्न प्रशासनिक, वित्तीय एवं संभार तन्त्रीय कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुये बाल श्रमिकों को काम से हटाने और पुनर्वासित करने की उत्तरोत्तर और अनुक्रमिक पद्धति अपनाई गई है। इसी आधार पर जोखिमपूर्ण रोजगारों में लगे बच्चों को काम पर से हटाने और उनके पुनर्वास को प्राथमिकता दी गई है। इन बाल श्रम परियोजनाओं का मुख्य उद्देश्य विशेष विद्यालयों की स्थापना करना है ताकि कार्य से मुक्त कराये गये बालकों की स्वास्थ्य, सुरक्षा, पोषण, अनौपचारिक शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण जैसी आवश्यकताओं को पूरा करना है। वर्तमान समय में भारत के बाल श्रमिक बाहुल्य राज्यों में लगभग 76 बाल श्रम परियोजनायें कार्य कर रही हैं।

बाल श्रमिकों के पुनर्वास के लिये चलाये जा रहे इन कार्यक्रमों की सफलता में एक अन्य महत्वपूर्ण बाधा सरकारी रवैया तथा व्यापक भ्रष्टाचार भी रहा है। अनेक महत्वपूर्ण कार्य योजनायें सरकारी विभागों द्वारा बरती गई लापरवाही एवं अनियमितताओं के कारण बीच में ही बन्द हो गई। इन बाल श्रमिकों को सुनहरे भविष्य का सपना दिखाया गया था लेकिन वे फिर उन्हीं तंग अंधेरी गलियों में जीने

के लिये अभिशप्त हैं। ये कहानी उन बाल श्रमिकों की है जिन्हें पुनर्वासित कर बाल श्रम विशेष विद्यालयों में दाखिल कराया गया था लेकिन विभागीय अनियमितताओं के चलते इन विद्यालयों को बन्द कर दिये जाने से यहाँ पढ़ रहे बच्चों का भविष्य फिर अन्धकारमय हो गया है।

बाल श्रमिकों को पुनर्वासित करने के लिये सुप्रीम कोर्ट के आदेश पर देशव्यापी सर्वे हुआ था। वर्ष 1997 तथा 1999 के मध्य विभिन्न शहरों में दो बार सर्वे किया गया। परन्तु बाल श्रमिकों को चिन्हित करने में घोर अनियमिततायें बरती गई परिणामस्वरूप इन श्रमिकों की नाम मात्र की संख्या सामने आई। इसके अतिरिक्त चिन्हित किये गये बाल श्रमिकों को सुप्रीम कोर्ट के आदेश के तहत पुनर्वासित करने की जिम्मेदारी श्रम विभाग को सौपी गई जिसका उद्देश्य था पढ़ाई–लिखाई से दूर रहे इन बच्चों को शिक्षित किये जाने के साथ ही रोजगारपरक प्रशिक्षण भी उपलब्ध कराया जाये ताकि आगे चलकर वे अपने पैरों पर खड़े हो सकें। इसके लिये विभिन्न विद्यालयों की स्थापना की गई तथा इन विद्यालयों को संचालित किये जाने की जिम्मेदारी कुछ गैर–सरकारी संस्थाओं को सौंपी गई। श्रम विभाग द्वारा शत–प्रतिशत वित्त पोषित इन विद्यालयों में बच्चों की निःशुल्क शिक्षा के साथ ही साथ किताब–कापी, मिड़ डे मील, आदि सुविधाओं के साथ ही प्रति छात्र 100 रूपये छात्रवृत्ति दिये जाने का प्रावधान भी था। घोषणा के अनुसार इन विद्यालयों को पाँच वर्ष तक संचालित किया जाना था। बाद में उन्हें मुख्य धारा के स्कूलों में दाखिल कराया जाना था। परन्तु घोषणा के विपरीत बहुत से विद्यालय छः माह से लेकर एक–दो वर्षो में बन्द हो गये तथा इन विद्यालयों में पढ़ रहे बाल श्रमिक फिर उन्हीं परिस्थितियों में काम करने के लिये अभिशप्त हैं। हाँलाकि बाल श्रमिकों को चिन्हित करने में की गई अनियमितता का मामला प्रदेश के राज्यपाल के समक्ष उठाया गया है। 'सेव चाइल्ड हुड' नामक गैर–सरकारी

संस्था ने अनियमितताओं के बावत विस्तृत रिपोर्ट राज्यपाल को भेजी है। चिन्हित किये गये बाल श्रमिकों को इंडस परियोजना के तहत पुनर्वासित किया जाना है। परियोजना के तहत अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन एवं भारत सरकार धन मुहैया कराती है।

बाल श्रमिकों के पुनर्वासन के समक्ष आने वाली एक अन्य समस्या उनका निम्न शैक्षिक स्तर भी है। इंडस बाल श्रम परियोजना के परियोजना निदेशक के अनुसार इस योजना के तहत दी जाने वाली वोकेशनल ट्रेनिंग में 14 से 17 वर्ष की आयु वाले बाल श्रमिकों को विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण दिये जा रहे हैं तथा वे इसमें रूचि भी दिखा रहे हैं। परन्तु ये प्रशिक्षण उन्हें रोजगार मुहैया करायेगा इसकी गारण्टी में संसय है। उन्होंने इसकी वजह बाल श्रमिकों का निम्न शैक्षिक स्तर बताया। विभाग ने प्रशिक्षण के इस पहल के मद्देनजर अब ऐसे व्यावसायिक प्रशिक्षण देने का प्रस्ताव बनाया है, जिसमें शैक्षणिक योग्यता की जरूरत कम पड़े। विभाग ने इस प्रस्ताव का खाका तैयार कर अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन को भेजा है। इस नये प्रस्ताव के तहत बाल श्रमिकों को 'इन्टरनेशनल स्कूल ऑफ सेडलरी एण्ड एक्सपोर्ट मैनेजमेंट' के तहत प्रशिक्षण देने का विचार किया जा रहा है जिसके बाद उन्हें रोजगार की गारण्टी होगी। वोकेशनल कोर्सो के क्रम में विभाग लड़कियों के लिये व्यवसायपरक ब्यूटीपार्लर जैसे कोर्स चलाना चाहता है जो उन्हें घर बैठे रोजगार दिला सके।

बाल श्रमिकों के पुनर्वास कार्यक्रमों की सफलता के लिये इनके माता–पिता को प्रौढ़ शिक्षा के माध्यम से जागरूक और उत्तरदायित्वपूर्ण बनाया जाना भी आवश्यक है। पर्याप्त प्रचार द्वारा जन भावनाओं को प्रेरित कर जन मानस को इस बुराई के प्रति संवेदनशील बनाया जा सकता है।

बाल श्रमिकों की पहचान भी उनके पुनर्वास में एक बाधा उत्पन्न करती है। देश में ऐसे बच्चों की कमी नहीं है जिनका न तो जन्म पंजीकरण है और न ही स्कूल जाते हैं। ऐसे बच्चों का पता लगाना सरकार के लिये ही नहीं बल्कि गैर सरकारी संस्थाओं के लिये भी मुश्किलात खड़ा कर देती है।

कुपोषण की समस्याः

भारतीय बच्चों में स्वास्थ्य एवं पोषण की स्थिति को अच्छा नहीं माना जा सकता है। भारत में 5 वर्ष तक के बच्चों में कुपोषण की स्थिति 53 प्रतिशत है। बालकों के कुपोषण की स्थिति का सर्वाधिक प्रमुख कारण व्यापक निर्धनता को माना जा सकता है। बाल श्रमिकों के संदर्भ में यह स्थिति और भी अधिक भयावह हो जाती हैं क्योंकि अपनी क्षमता से अधिक कार्य करने वाले इन बालकों को उसके लिये आवश्यक ऊर्जा प्राप्त नहीं हो पाती है। सन्तुलित भोजन के अभाव एवं अपनी क्षमता से अधिक कार्य करने के कारण इन बाल श्रमिकों का शारीरिक एवं मानसिक विकास अवरूद्ध हो जाता है तथा वे गम्भीर बीमारियों से ग्रस्त हो जाते हैं।

बच्चों में कुपोषण की स्थिति के संदर्भ में मौन पूर्वाग्रह के भी स्पष्ट प्रमाण होते हैं। बालकों में कुपोषण की स्थिति का पता लगाने के लिये डॉ0 शांति घोष द्वारा दिल्ली के एक अस्पताल में 7,636 बालक तथा 6,056 बालिकाओं पर किये गये एक अध्ययन में निष्कर्ष निकाला गया कि लगभग 66 प्रतिशत बालक एवं 76 प्रतिशत बालिकायें कुपोषण की शिकार हैं।[1] इसी प्रकार एक अन्य अध्ययन में पाया गया कि भारत में बालकों की तुलना में बालिकाओं में कुपोषण अधिक है। बाल श्रमिकों के विभिन्न बीमारियों से ग्रसित होने के पीछे संतुलित भोजन का अभाव मुख्य कारण रहा है। दूषित पर्यावरण एवं कार्यो की खतरनाक प्रकृति के

---

[1] Dr. G.K. Pathak – "Direction and Situation of Child Labour in India", Pratiyogita Darpan, 1999, P – 435.

कारण उत्पन्न होने वाली बीमारियों से बचाव के लिये आवश्यक प्रतिरोधक क्षमता असन्तुलित भोजन से प्राप्त नहीं हो पाती है, परिणामस्वरूप बालक इन बीमारियों से ग्रस्त बने रहते हैं।

राष्ट्रीय पोषण नीति के अनुसार निर्धनता एक स्थाई दुष्चक्र है। इसमें कारण और परिणाम का सम्बन्ध है। कम भोजन तथा पोषण, पोषक तत्वों का कम होना जिससे पोषण से जुड़ी बीमारियाँ तथा संक्रमण का होना, बच्चों का विकास ठीक से न होना, वयस्कों के शरीर का आकार छोटा होना, अपसामान्य उत्पादकता, सीखने की कम क्षमता, निर्धनता। राष्ट्रीय पोषण नीति में उल्लेख किया गया है कि लोगों में कम पोषण के कारण प्रोटीन–ऊर्जा, कुपोषण, लौह तत्व की कमी, विटामिन–ए की कमी तथा जन्म के समय बच्चों का वजन कम होना है। औद्योगिक तथा प्रवासी विशेषकर बाल श्रमिकों की पोषण सम्बन्धी समस्यायें विशेष हैं जिसमें शहरीकरण के साथ–साथ मौसमी कारण भी प्रभाव डालते हैं। विभिन्न अध्ययनों में यह पाया गया है कि 90 प्रतिशत बच्चे अपनी उम्र के हिसाब से कम वजन के हैं और 45.55 प्रतिशत सामान्य तथा गम्भीर किस्म के कुपोषण के शिकार हैं।[1] कुपोषण का सबसे गम्भीर प्रभाव ग्रामीण श्रमिकों तथा शहरी औद्योगिक श्रमिकों पर होता है।

किशोरावस्था बच्चे की वृद्धि तथा विकास का एक महत्वपूर्ण चरण है। इस आयु में शरीर के वजन और लम्बाई में पर्याप्त वृद्धि होती है। 7 से 12 आयु वर्ग के सामान्य बच्चों को लगभग 2300 कैलोरी ऊर्जा की आवश्यकता होती है जो उन्हें सन्तुलित भोजन से प्राप्त होती है। परन्तु विभिन्न अध्ययनों में यह पाया गया हैं कि बाल श्रमिकों को पर्याप्त मात्रा में सन्तुलित भोजन प्राप्त नहीं होता है। अधिक परिश्रम तथा सन्तुलित भोजन के अभाव में वे न केवल बीमारियों से ग्रस्त रहते हैं

---

[1] Dr. Sarala Gopalan – Position of Women's in India; A Report of National Commission for Women, 2001, P.P. 84 – 85.

बल्कि उनकी कार्य क्षमता में भी गिरावट आ जाती है। कुपोषण की समस्या से ग्रस्त इन बाल श्रमिकों का वर्तमान एवं भावी जीवन कष्टप्रद बना रहता है। 1975 में जॉन मैक्लॉयड ने अपनी पुस्तक 'Principles and Practice of Medicine' में उल्लेख किया कि आयु के अनुसार चिकित्सा विज्ञान द्वारा निर्धारित मानक के आधार पर अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि कार्यो में संलग्न बाल श्रमिकों की ऊँचाई तथा वजन सामान्य बच्चों की अपेक्षा कम होती है।[1]

अमानवीय कार्य दशाओं की समस्याः

बाल श्रमिकों को रोजगार के दौरान अनेक अमानवीय कार्य दशाओं में कार्य करना पड़ता है जिसका अध्ययन पिछले अध्यायों में भी किया जा चुका है। विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत बाल श्रमिक न केवल कठिन परिश्रम करते हैं बल्कि सामान्यतः 10 से 12 घण्टों तक कार्य करते हैं। उन्हें कोई साप्ताहिक अवकाश भी प्राप्त नहीं होता है। अधिकांश उद्योगों में बाल श्रमिकों को धूल, धुयें, गर्मी तथा गन्दगीयुक्त वातावरण में कार्य करना पड़ता है। अधिकतर लघु औद्योगिक इकाइयों में पर्याप्त प्रकाश एवं शुद्ध हवा के लिये रोशनदानों का अभाव होता है। ये लघु औद्योगिक इकाइयाँ प्रायः घनी बस्तियों में संकरी गलियों में स्थित होती हैं। अधिकांश व्यावसायिक इकाईयों, रिपेयरिंग की दुकानों, होटलों एवं रेस्टोरेन्ट आदि में कार्य करने वाले बाल श्रमिकों को छोटी–छोटी गलतियों के लिये शारीरिक, मानसिक एवं आर्थिक रूप से प्रताड़ित किया जाता है। कभी–कभी वयस्क श्रमिकों की गल्ती की सजा भी इन बच्चों को दी जाती है क्योंकि वे इसका प्रतिरोध करने में असमर्थ होते हैं। निर्माण कार्यो, खादानों तथा व्यावसायिक कृषि कार्यो में इन बाल श्रमिकों से उनकी क्षमता से अधिक बोझा उठवाने का कार्य लिया जाता है

[1] John Macleod – "Davidson's Principles and Practice of Medicine", 1975.

जिसके कारण अक्सर इनके साथ कोई न कोई दुर्घटना होती रहती है। दुर्घटना या बीमारी की स्थिति में भी उन्हें सेवायोजकों द्वारा किसी भी प्रकार की चिकित्सा व्यवस्था उपलब्ध नहीं करायी जाती है। बीमारी या दुर्घटना के कारण कार्य पर अनुपस्थित रहने की स्थिति में न सिर्फ उनकी मजदूरी में कटौती की जाती है बल्कि कभी–कभी उनके साथ गाली–गलौज और मार–पीट तक की जाती है।

अलीगढ़ के ताला उद्योग में बाल श्रमिकों पर हुये एक अध्ययन में पाया गया कि बड़ी संख्या में बच्चों ने आठ वर्ष की आयु पूरी करने से पहले ताला निर्माण प्रक्रिया में कार्य करना आरम्भ कर दिया था। अध्ययन में पाया गया कि बच्चों का सर्वाधिक अनुपात कल पुर्जे जोड़ने के कार्य में लगा हुआ है। हैण्ड प्रेस, कल पुर्जे जोड़ने और पैकिंग आदि प्रक्रियाओं में सिर्फ लड़कियों का प्रयोग किया जाता है जबकि सबसे कम बच्चे स्प्रे रंगाई में लगाये गये है। जिन प्रक्रियाओं में बच्चे नियोजित है उनमें पालिश लगाना, विद्युत लेपन, स्प्रे रंगाई और हैण्ड प्रेस पर कार्य करना शामिल है। ये प्रक्रियायें स्वास्थ्य के लिये सर्वाधिक खतरनाक हैं। हैण्ड प्रेस पर बच्चों रोजाना लगभग 10 घण्टे कार्य लिया जाता है। लापरवाही या मामूली गलती से उनकी उंगलियों छिन्न–भिन्न हो सकती हैं।

बाल श्रमिकों से सम्बन्धित विभिन्न अध्ययनों में यह पाया गया है कि औसतन 10 से 12 घण्टे प्रतिदिन कार्य करने वाले इन बाल श्रमिकों को कार्यावधि के दौरान नाम मात्र का विश्राम का समय मिलता है। अधिकांश स्थितियों में किसी भी प्रकार के मनोरंजक साधनों एवं कल्याण सम्बन्धी क्रियाकलापों का सर्वथा अभाव दृष्टिगत होता है।

षष्टम् अध्याय

निष्कर्ष एवं सुझाव

वर्तमान समय में एशिया एवं अफ्रीका के अधिकांश देशों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति को देखने से ज्ञात होता है कि वहाँ की बड़ी जनसंख्या का रहन–सहन का स्तर अत्यन्त निम्न है जिसके कारण बच्चों को कार्य की तलाश में श्रम बाजार में प्रवेश करना पड़ता है। ये बच्चे पारिवारिक आय में योगदान देने के लिये कार्य में प्रवेश करते हैं। पिछले कुछ दशकों में औद्योगीकरण तथा नगरीयकरण की तीव्र वृद्धि के परिणामस्वरूप नगरीय जनसंख्या में अप्रत्याशित वृद्धि हुई है। ग्रामीण क्षेत्रों एवं अन्य पिछड़े हुये क्षेत्रों के निर्धन व्यक्तियों को जीवन की आधारभूत सुविधायें भी उपलब्ध नहीं होती हैं अतः वे जीवन यापन के लिये रोजगार की तलाश में नगरीय क्षेत्रों की ओर प्रवास कर जाते हैं। नगरीय क्षेत्रों में ऐसे श्रमिकों को आसानी से जीवन यापन के लिये संघर्ष करते हुये देखा जा सकता है। ये श्रमिक अपने साथ अपने बच्चों को भी कार्य में लगा देते हैं। चूंकि संगठित क्षेत्रों में इन बाल श्रमिकों को आसानी से कार्य की उपलब्धता नहीं होती है अतः वे असंगठित क्षेत्रों में रोजगार में संलग्न हो जाते हैं।

अधिकतर विकासशील देशों में बच्चों को नगरीय क्षेत्र की औद्योगिक एवं सेवा इकाइयों में कार्य करते हुये आसानी से देखा जा सकता है। औद्योगिक इकाइयों के साथ–साथ ये बच्चे व्यावसायिक कृषि कार्यो में भी संलग्न होते हैं। सभी परिस्थितियों में ये श्रमिक न्यूनतम मजदूरी पर अधिक घण्टों तक कार्य करते हैं। संगठन के अभाव तथा आसानी से उपलब्धता के कारण सेवायोजक इन बाल श्रमिकों को आसानी से कार्य में रख लेते हैं। सेवायोजक इन बाल श्रमिकों के माध्यम से कम से कम लागत पर अधिकतम लाभ अर्जित करने का प्रयास करते हैं।

आर्थिक अनिश्चितताओं तथा मांग में होने वाले उतार–चढ़ाव के मद्देनजर भी कम लागत के कारण ये बाल श्रमिक सेवायोजकों को हानि से बचाते हैं।

विकासशील देशों में बाल श्रमिकों की अधिक संख्या के कारण नगरीय क्षेत्रों में वयस्क श्रमिकों के लिये रोजगार की सम्भावनायें क्षीण हो जाती है। अनेक देशों में नगरीय बेरोजगारी की दर 20 से 25 प्रतिशत तक है। इन परिस्थितियों में पारिवारिक आय अर्जित करने अथवा पारिवारिक आय में सहयोग देने के लिये बालकों का रोजगार में संलग्न होना आवश्यक हो जाता है। माता–पिता की बेरोजगारी अथवा निम्न आय के कारण कम आयु के बालकों को बाध्य होकर घरेलू नौकरों, लघु इकाइयों या सड़क के किनारे स्थित दुकानों या होटलों में बाल श्रमिकों के रूप में कार्य करना पड़ता है। सर्वाधिक बुरी स्थिति तब उत्पन्न हो जाती है जब ये बालक भीख मांगने अथवा वेश्यावृत्ति में लीन हो जाते है।

नगरीय एवं ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में व्याप्त बाल श्रम समस्या का प्रमुख कारण निर्धनता और बेरोजगारी है। बाल श्रम समस्या की उपस्थिति के अन्य प्रमुख कारण वयस्क श्रमिकों की अपर्याप्त आय, परिवारों का बड़ा आकार, प्रवासी प्रवृत्ति, पारिवारिक विघटन, अशिक्षा, अनिवार्य शिक्षा सम्बन्धी प्रावधानों का अभाव, ऋणग्रस्तता तथा माता–पिता की उपेक्षा आदि है।

भारत जैसे विकासशील देशों में प्रायः निर्धन परिवारों की सामाजिक सुरक्षा प्रावधानों का सर्वथा अभाव है जो बाल श्रम समस्या को बढ़ाने का प्रमुख कारण रहा है। माता–पिता की बीमारी अथवा दुर्घटना के कारण मृत्यु हो जाने पर बच्चों को बाध्य होकर काम में प्रवेश करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त पारिवारिक भत्ता प्रदान करने के प्राविधानों का अभाव रहा है। जिस कारण निर्धन व्यक्ति अपने

पारिवारिक स्तर को बनाये रखने में असमर्थ होते हैं तथा बालकों को आय अर्जित करने के लिये श्रम बाजार में प्रवेश करने की अनुमति प्रदान करते हैं। विधवा स्त्रियों को क्षतिपूर्ति हेतु दी जाने वाली धनराशि या पेन्शन से प्राप्त होने वाली धनराशि इतनी कम होती है। कि उन्हें बालकों की आय के बिना अपने पारिवारिक स्तर को बनाये रखने में बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। श्रम संरक्षण अधिनियमों को लागू करने एवं उनके प्रभावों का निरीक्षण करने में सरकार की विफलता भी बाल श्रम को बढ़ावा देने के लिये उत्तरदायी है।

विकसित एवं विकासशील दोनों ही प्रकार के देशों में बाल श्रम समस्या में निरन्तर वृद्धि के पीछे पूँजीवादी शक्तियों का हाथ रहा है। फ्रांस, जर्मनी और संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे विकसित देशों में भी औद्योगीकरण के प्रारम्भिक दिनों में बाल श्रम की समस्या एक सामाजिक बुराई के रूप में विद्यमान थी तथा श्रम कानूनों द्वारा उसे नियन्त्रित करने के प्रयास किये जा रहे थे। विकासशील देशो में मुख्यतः दक्षिण–पूर्वी एशिया में यह समस्या बहुत बड़े पैमाने पर व्याप्त है। एशिया के देशों में भारत में यह समस्या सर्वाधिक 25 प्रतिशत है। बाल श्रमिकों की निश्चित संख्या का पता लगाना तो अत्यन्त कठिन है, फिर भी अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार 1975 तक भारत में 10 से 14 आयु वर्ष के बाल श्रमिकों की संख्या 15.16 मिलियन थी जोकि चीन सहित विश्व के अन्य देशों से सर्वाधिक थी। 1981 की जनगणना के अनुसार भारत में बाल श्रमिकों की कुल संख्या 14.5 मिलियन थी जो कुल श्रम शक्ति का 5.5 प्रतिशत था। 1991 की जनगणना में बाल श्रमिकों की संख्या को 16.52 मिलियन बताई गई थी। विभिन्न अध्ययनों में भी बाल श्रमिकों की संख्या को खतरनाक बताया गया है। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण ने 27वीं चक्र की रिपोर्ट में बाल श्रमिकों की संख्या 17.4 मिलियन बताई थी, जबकि अखिल भारतीय सर्वेक्षण संस्था के द्वारा भारत में बाल श्रमिकों की संख्या 44 मिलियन अनुमानित की

गई। विभिन्न गैर सरकारी संगठनों के अनुसार देश में बाल श्रमिकों की संख्या 100 मिलियन तक आंकी गई है। वर्तमान समय में भारत में 5 से 14 आयु वर्ष के बालकों की कुल संख्या 297 मिलियन है जिनमें 116.2 मिलियन पूर्णकालिक विद्यार्थी, 12.7 मिलियन पूर्णकालिक बाल श्रमिक, 10.5 मिलियन बाल श्रमिक तथा 74.4 मिलियन बच्चे न तो विद्यार्थी हैं और न ही कामकाजी हैं। ये विद्यालयों में न जाने वाले बच्चे हैं।[1]

उत्तर प्रदेश को ऐसे राज्यों की श्रेणी में रखा जा सकता है जहाँ पर बड़ी संख्या में बाल श्रमिकों की उपस्थिति दर्ज की गई है। वर्ष 1971 में राज्य में बाल श्रमिकों की संख्या 13,26,726 तथा वर्ष 1991 में 14,10,086 थी।[2] राज्य सरकार द्वारा किये गये विभिन्न प्रयासों के बावजूद इस संख्या में निरन्तर वृद्धि ही हुई है क्योंकि प्रदेश की सामाजिक संरचना के कारण गरीबी, अशिक्षा, जनसंख्या वृद्धि, बेरोजगारी जैसे कारक इस समस्या को बढ़ावा देते हैं।

बाल श्रमिकों को प्रायः सभी प्रकार के संगठित एवं असंगठित क्षेत्रों में कार्य करते हुये देखा जा सकता है। इसके अतिरिक्त व्यावसायिक कृषि कार्यो में भी बाल श्रमिकों की बड़े पैमाने पर विद्यमानता देखी जाती है। शहरी क्षेत्रों में अधिकांश बाल श्रमिक ऐसे उद्योगों या क्षेत्रों में कार्य में संलग्न है जो या तो बाल श्रम कानून की सीमा से बाहर हैं या निरीक्षण से दूर और सेवा क्षमताओं के प्रभावशाली निर्धारण से परे हैं। इन उद्योगों को जीवित रखने में इन सस्ते और लचीले बाल श्रमिकों का अत्यधिक महत्वपूर्ण योगदान होता है।

वर्तमान अध्ययन उत्तर प्रदेश में विभिन्न उद्योगों एवं कार्यो में संलग्न बाल श्रमिकों पर आधारित है। इसके लिये इन कार्यो में संलग्न 400 बाल श्रमिकों

---

[1] Helen R. Seker – Child Labour: A Preview – V.V. Giri National Labour Organization, Noida (U.P.)
[2] U.P. Labour Organization Report, 1995.

के सर्वेक्षण को आधार बनाया गया है। अध्ययन का मुख्य उद्देश्य परिवार का आकार, शैक्षिक स्थिति, व्यावसायिक स्थिति, आय के स्तर, बच्चों के प्रति माता–पिता के विचार आदि के आधार पर परिवारों के सामाजिक–आर्थिक स्तर की स्थिति का पता लगाना है। अध्ययन में बाल श्रम समस्या के कुछ अन्य कारणों जैसे–सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा परम्परागत कारणों पर भी प्रकाश डाला गया है जो इस समस्या के लिये उत्तरदायी हैं। अध्ययन में बाल श्रमिकों की आयु, शिक्षा, योग्यता, प्रशिक्षण, कार्य की दशायें एवं वातावरण, शोषण, कार्य के घण्टे, आय स्तर आदि तत्वों पर भी विस्तृत रूप से ध्यान केन्द्रित किया गया है।

वर्तमान अध्ययन प्रमुख रूप से निम्नलिखित तत्वों को स्पष्ट करता है, (अ) किन कारणों से परिवार अपने बच्चों को श्रम बाजार में भेजने के लिये विवश होते हैं। (ब) बाल श्रमिकों से किस प्रकार के कार्य लिये जाते हैं तथा उनके शोषण की स्थितियाँ कैसी हैं। (स) अध्ययन क्षेत्र में कार्यरत बाल श्रमिकों पर कार्य के दौरान पड़ने वाले शारीरिक एवं मानसिक विकास में बाधक स्थितियाँ एवं उनके स्वास्थ्य का स्तर कैसा है। बाल श्रमिकों के कार्य के प्रति दृष्टिकोण को भी अध्ययन में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। श्रम कानूनों एवं अन्य सरकारी प्रयासों के फलस्वरूप बाल श्रम उन्मूलन हेतु किये गये प्रयासों एवं उनके प्रभावों को भी अध्ययन में विस्तृत रूप से प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

उत्तर प्रदेश के विभिन्न व्यवसायों एवं कृषि कार्यों में संलग्न बाल श्रमिकों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि सर्वाधिक 42.5 प्रतिशत बाल श्रमिक 10 से 12 आयु वर्ग के हैं जबकि 12 से 14 आयु वर्ग के श्रमिकों का प्रतिशत 31 है। लगभग 11 प्रतिशत बाल श्रमिकों की आयु 4 से 8 वर्ष के मध्य पाई गई। धार्मिक आधार पर प्रतिशत वितरण को देखने से

ज्ञात होता है कि सर्वाधिक 63.5 प्रतिशत बाल श्रमिक हिन्दू धर्म को मानने वाले तथा 33 प्रतिशत बाल श्रमिक मुस्लिम धर्म को मानने वाले हैं। अन्य धर्मो को मानने वाले बाल श्रमिकों का प्रतिशत नाममात्र का ही पाया गया।

जातिगत आधार पर प्रतिशत वितरण देखने से ज्ञात होता है कि 48.5 प्रतिशत बाल श्रमिक अनुसूचित जाति के, 38.5 प्रतिशत पिछड़े वर्ग के, 11.5 प्रतिशत सामान्य वर्ग के तथा केवल 1.5 प्रतिशत बाल श्रमिक अनुसूचित जनजाति से सम्बन्धित हैं।

बाल श्रमिकों के कार्य में प्रवेश का सर्वाधिक प्रमुख कारण निर्धनता रहा है। अध्ययन क्षेत्र में अधिकांश उत्तरदाता बाल श्रमिकों ने कम आयु में कार्य में प्रवेश का कारण निर्धनता को बताया। पारिवारिक निर्धनता के कारण लगभग 48.5 प्रतिशत बालक परिवार के आर्थिक सहयोग हेतु कार्य में संलग्न है। 21.5 प्रतिशत बाल श्रमिकों ने रोजगार में प्रवेश का कारण पढ़ाई में मन न लगने के कारण तथा 15.5 प्रतिशत बाल श्रमिक परिवार में व्यक्तियों की अधिक संख्या के कारण समस्त अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति के अभाव में श्रम बाजार में प्रवेश करते हैं। कुछ संख्या में बाल श्रमिक ऐसे भी पाये गये जो माता–पिता की मृत्यु हो जाने के कारण शारीरिक एवं मानसिक विकास के लिये आवश्यक संसाधनों से वंचित हो जाते हैं तथा विवश होकर परिवार के आर्थिक सहयोग के लिये श्रम बाजार में प्रवेश करते हैं।

अधिकांश बाल श्रमिक निर्धन परिवारों से सम्बन्धित होते हैं तथा निम्न आय स्तर के कारण प्रायः शिक्षा एवं मनोरंजन साधनों से वंचित रहते हैं। इन परिवारों द्वारा अपनी आय का सर्वाधिक बड़ा (63.51 प्रतिशत) भाग भोजन एवं ईंधन हेतु व्यय किया जाता है जबकि आय का मात्र 15 प्रतिशत भाग ही शिक्षा एवं

स्वास्थ्य सम्बन्धी आवश्यकताओं पर व्यय किया जाता है। अध्ययन में पाया गया कि सर्वाधिक 30.5 प्रतिशत बाल श्रमिक मात्र प्राइमरी कक्षा तक शिक्षा प्राप्त किये हैं जबकि 26.5 प्रतिशत बाल श्रमिक ऐसे पाये गये जिन्होंने किसी भी प्रकार की शिक्षा प्राप्त नहीं की। अध्ययन में कुछ ऐसे भी बाल श्रमिक पाये गये जो कार्य के साथ–साथ पढ़ाई भी कर रहे हैं।

कम आय वर्ग एवं निर्धन परिवारों में रहने वाले ये बाल श्रमिक प्रायः कुपोषण के शिकार होते हैं। गन्दे एवं अस्वास्थकर वातावरण में कार्य करने तथा निरन्तर प्रदूषित स्थानों एवं वस्तुओं के सम्पर्क में रहने के कारण इनमें त्वचा सम्बन्धी बीमारियों की भी अधिकता रहती है। इन बीमारियों के इलाज हेतु भी इन बाल श्रमिकों को प्रायः अप्रशिक्षित डाक्टरों या वैद्यों का ही सहारा लेना पड़ता है क्योंकि या तो उन क्षेत्रों में प्रशिक्षित डाक्टरों का अभाव दृष्टिगत होता है अथवा वे प्रशिक्षित डाक्टरों से अपनी निम्न आर्थिक स्थिति के कारण इलाज करा पाने में असमर्थ होते हैं।

अशिक्षा एवं किसी भी प्रकार की तकनीकी योग्यता के अभाव में वयस्क श्रमिकों का आय स्तर अत्यन्त निम्न होता है तथा वे सेवायोजकों की इच्छानुसार कार्य करने को विवश होते हैं। सेवायोजक उनकी इस मजबूरी का लाभ उठाते हैं तथा न्यूनतम मजदूरी पर इनसे अधिक घण्टों तक कार्य करवाते हैं। अध्ययन में पाया गया कि सर्वाधिक 39.0 प्रतिशत परिवारों की औसत मासिक आय 800 रू0 से 1000 रू0 तक है। 28.5 प्रतिशत परिवारों की औसत मासिक आय 1000 रू0 से 1200 रू0 के मध्य है। निम्न आय के कारण ही बहुत से परिवार ऐसे क्षेत्रों में प्रवास कर जाते हैं तथा बच्चों सहित शहरों या कस्बों में आकर बस जाते हैं। ये अधिकांश प्रवासी परिवार शहरी क्षेत्रों में झुग्गी–झोपड़ी या कच्चा घर बनाकर

रहते हैं जो कि नगरपालिका या रेलवे की भूमि पर स्थित होते हैं। बड़ी संख्या में ऐसे परिवार भी पाये गये जो किराये के मकानों में निवास करते हैं। इन परिवारों में विद्युत, पीने के पानी, शौचालय तथा अन्य सामाजिक सुविधाओं की उपलब्धता की स्थिति भी अत्यन्त शोचनीय है।

बाल श्रमिकों के कार्य में प्रवेश के परिणामस्वरूप उन्हें अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। बाल श्रमिकों पर पड़ने वाले हानिकारक प्रभावों को उनके अनुपयुक्त शारीरिक विकास, विभिन्न प्रकार की बीमारियों तथा शारीरिक विकलांगता, स्नायुतन्त्र के विकास, समाज के दूसरे सदस्यों के साथ विचारों को व्यक्त करने की अयोग्यता के रूप में देखा जा सकता है। शिक्षा के अभाव में न सिर्फ बाल श्रमिकों बल्कि सामाजिक विकास के मार्ग में भी अवरोधक होता है। बाल श्रमिकों को शिक्षा का अधिकार दिलाने के प्रयासों में निर्धनता सबसे बड़ी बाधा के रूप में सामने आती हैं। निर्धनता के कारण ही परिवार अपने बच्चों को विद्यालय भेजने में असमर्थ होते हैं। निःशुल्क शिक्षा व्यवस्था होने पर भी निर्धनता के कारण बालकों को स्कूल न भेजकर पारिवारिक आय में सहायता पहुँचाने के लिये काम पर भेजा जाता है। वर्तमान अध्ययन में पाया गया है कि अधिकतर बाल श्रमिकों के बीच में पढ़ाई छोड़ देने का कारण माता–पिता की स्कूली खर्चे उठाने में असमर्थता, माता–पिता की मृत्यु अथवा बीमारी, घरेलू कार्यो का बोझ, पढ़ाई में मन न लगना आदि है।

कम आयु वर्ग के ये अधिकांश बाल श्रमिक कार्य के दौरान पूर्ण रूप से सेवायोजकों की इच्छा पर निर्भर होते हैं जो इन श्रमिकों का शोषण करते हैं। इन बाल श्रमिकों को प्रायः सेवायोजकों के बुरे व्यवहार का सामना करना पड़ता है जिसमें आर्थिक दण्ड, गाली–गलौज, अपमान तथा अनावश्यक दबाव जैसे दण्ड

शामिल होते हैं। उन्हें अत्यन्त निम्न मजदूरी दी जाती है तथा प्रायः नौकरों जैसा व्यवहार किया जाता है। अध्ययन में पाया गया है कि अधिकतर बाल श्रमिकों को 8 से 12 घण्टे प्रतिदिन तक कार्य करना पड़ता है। सेवायोजकों की निम्नतम लागत पर अधिकतम लाभ अर्जित करने की प्रवृत्ति के कारण इन बाल श्रमिकों का शोषण होता है। अन्य शब्दों में हम कह सकते हैं कि इन बच्चों को बंधुआ मजदूर के रूप में रोजगार में रखा जाता है।

विभिन्न कार्यो में संलग्न बाल श्रमिकों के स्वास्थ्य स्तर को देखने से ज्ञात होता है कि अधिकांश बाल श्रमिक दूषित पर्यावरण में कार्य करने तथा पोषक आहार की कमी के कारण विभिन्न प्रकार की बीमारियों से ग्रस्त है। कुछ खतरनाक प्रकृति के व्यवसायों में कार्यरत बाल श्रमिक शारीरिक एवं मानसिक रूप से बीमार पाये गये। कहीं–कहीं पर तो बाल श्रमिक शारीरिक अपंगता का शिकार भी पाये गये। इन बाल श्रमिकों के द्वारा जो कार्य औद्योगिक इकाइयों में किये जाते हैं वे प्रायः नुकसानदायक तथा शारीरिक और मानसिक विकास को अवरूद्ध करने वाले हैं। होटलों एवं रेस्टोरेण्ट आदि में काम करने वाले बाल श्रमिक प्रायः धुयें एवं पानी के निरन्तर सम्पर्क में रहने के कारण बीमारियों से ग्रस्त रहते हैं। गैराजों एवं वर्कशाप आदि में काम करने वाले बाल श्रमिक अनेक खतरनाक कार्य बिना सुरक्षा उपकरणों की उपलब्धता के करते हैं। इस प्रकार अध्ययन में पाया गया कि दूषित वातावरण एवं अमानवीय कार्यदशाओं में कार्य करने वाले ये सभी श्रमिक विभिन्न प्रकार की बीमारियों से ग्रस्त बने रहते हैं।

सरकार द्वारा इन बाल श्रमिकों के पुनर्वास के लिये समय–समय पर प्रयास किये गये हैं परन्तु सामाजिक जागरूकता एवं पर्याप्त आंकड़ों की अनुपलब्धता तथा दोषपूर्ण सरकारी नीतियों के कारण ये प्रयास अपर्याप्त सिद्ध हुये

हैं। बड़ी संख्या में सेवायोजक बाल श्रम अधिनियमों एवं कानूनों को न मानते हुये बाल श्रमिकों को काम पर लगाते हैं। राजनीतिक प्रभाव या आर्थिक शक्ति के कारण उनके ऊपर कोई कार्यवाही नहीं की जाती जिससे इस समस्या के समाधान में बाधा उत्पन्न होती है।

प्रस्तुत अध्ययन से यह तथ्य भी उभरकर सामने आया है कि अपर्याप्त कर्मचारियों की बजह से बाल श्रम अधिनियमों के कार्यान्वयन और प्रवर्तन के लिये सभी औद्योगिक इकाइयों का प्रभावी ढंग से निरीक्षण करने में रूकावट आती है। श्रमिक प्रवर्तन अधिकारियों के साथ सहयोग नहीं करते और अपने बच्चों की आयु के झूठे प्रमाणपत्र रखते हैं और बताते हैं कि उनके बच्चों की आयु 14 वर्ष से अधिक है। इससे भी अधिक, श्रमिक भी प्रायः नियोक्ताओं का साथ देते हैं। क्योंकि उन्हे अपनी नौकरी जाने का खतरा रहता है।

इसके अतिरिक्त उद्योगों का ढांचा और उत्पादन की प्रकृति भी कानून के अप्रभावी कार्यान्वयन में सहयोग करती है। उदाहरण के लिये फिरोजाबाद में चूड़ी निर्माण कार्य गृह आधारित और गैर गृह आधारित दोनो ही क्षेत्रों में होता है। हालांकि फैक्ट्रियाँ और चूड़ी कटाई इकाइयां कारखाना अधिनियम के अधीन पंजीकृत हैं किन्तु शहर में कई छोटी इकाइयां भी हैं जो चोरी छिपे चल रही हैं। और काफी बडी मात्रा में चूड़ी निर्माण कार्य या तो इन इकाइयों में होता है या घरों में होता है जहाँ बडी संख्या में बच्चों को काम पर लगाया जाता है। इसलिये कई अपंजीकृत इकाइयों सहित इतनी अधिक इकाइयों को देखते हुए कानून का प्रवर्तन कठिन हो गया है। केवल इकाइयों की संख्या ही समस्या उत्पन्न नहीं करती क्योंकि इस समस्या को सम्भवतः प्रवर्तन तंत्र के आकार को बढ़ाकर हल किया जा सकता है – हलांकि इसकी अपनी भी कुछ सीमायें हैं यहाँ एक तथ्य यह भी है कि अधिकांश इकाइयाँ रातो रात खड़ी होती है और फिर गायब हो जाती है, उनके

साथ सम्पर्क बनाये रखना बहुत कठिन कार्य है, क्योंकि उनके लिये पंजीकरण की अपेक्षा नहीं रखी गई है।

इस प्रकार बाल श्रम को समाप्त करने में कानून का असर बहुत कम ही रहा है। कानून में आंतरिक खामियों के कारण कार्यान्वयन की स्थिति में बच्चों से जुड़ा मामला मानकर कम प्राथमिकता मिलने की भी समस्या खड़ी रहती है। इसके अतिरिक्त प्रशासनिक बाधायें, समय की कमी, प्रमाणीकरण करने वाले सर्जन के उपलब्ध न हो पाने आदि से भी अधिनियमों का प्रवर्तन और कठिन हो जाता है। तथापि सबसे महत्वपूर्ण समस्या उत्पादन के प्रबंध से जुड़ी हुई है जिसमें गृह आधारित और गैर गृह आधारित दोनो ही क्षेत्र लगे हुए हैं। उदाहरण के लिये यद्यपि फैक्ट्रियाँ कारखाना अधिनियम के अधीन पंजीकृत होती हैं, फिर भी अनेक ऐसी प्रक्रियायें हैं जिन्हे फैक्ट्रियों के बाहर कराया जाता है और इन कार्यों को चोरी छिपे चलने वाली छोटी इकाइयों को उप ठेके पर सौंपा जाता है। बाल श्रम से सम्बन्धित प्रावधान उन इकाइयों पर लागू नहीं होते जहाँ अधिष्ठाता द्वारा अपने परिवार के सहयोग से काम कराया जाता है। इसी प्रावधान का सहारा लेकर नियोक्ता यह दिखा सकता है कि अमुक बाल श्रमिक उसके अपने परिवार का सदस्य है। इसके अतिरिक्त छोटी गृह आधारित इकाइयों में निरीक्षकों के सामने नियोक्ता के बच्चों और बाल श्रमिकों के बीच अन्तर कर पाने में कठिनाई होती हैं क्योंकि आयु को साबित करने की जिम्मेदारी किसी भी तरह नियोक्ता की नहीं है अपितु यह इकाइयों को पहचानना और उनका नियमित रूप से निरीक्षण करना भी कई कारणों से मुश्किल होता है। पहली बात यह है कि जैसे ही वे निरीक्षण के लिये पहुंचते हैं, बाल श्रमिकों को कार्यशाला से हटा दिया जाता है। कानूनी परेशानियों से बचने के लिये बाल श्रमिकों का उपयोग करने वाले उद्योग गृह आधारित उत्पादन इकाइयों में जा रहे हैं और ठेकाकरण और उपठेकाकरण के रूप में उनके श्रम अत्यन्त विकेन्द्रीकृत प्रकृति क्रम सम्बन्ध है। इन विभिन्न कारणों से कानूनो का कार्यान्वयन

एक कठिन कार्य है। अन्य शब्दों में कानूनी बाध्यताओं से बचने के लिये मौजूदा अनौपचारिक श्रम सम्बन्ध मजबूत हो रहे हैं। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि इस प्रवृत्ति को मजबूत बनाने के स्थान पर, बाल श्रम के उपयोग को प्रतिसिद्ध करने वाले और अन्य श्रम कानूनों के कारण उत्पादन प्रक्रिया का विकेन्द्रीकरण हो रहा है। तथाकथित "कम्पनियाँ" या गृह आधारित इकाइयाँ इस प्रकार फल फूल रही हैं मानो कारखाना परिसर से बाहर निकल कर उसी कार्य को आसानी से चलाया जा सकता है। इस तथ्य से यह भी स्पष्ट होता है कि उत्पादन कार्य कारखाने में चलाया जा रहा है किन्तु उसके कार्य को विभिन्न स्वतंत्र इकाइयों में बांटा गया है जो उप ठेके पर पृथक रूप से चल रही है। इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि कानून नये कानून के विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया को मजबूती दी है। हाँलाकि इससे उत्पादन को पूरी तरह गृह आधारित इकाइयों में नहीं भेजा गया है।

हाँलाकि बाल श्रमिकों की पहचान करके उन्हें स्कूल भेजकर उनका पुनर्वास करने के लिये किये गये प्रयास सही दिशा में चल रहे हैं किन्तु अकेले शिक्षा की व्यवस्था करने से बाल श्रम की समस्या से छुटकारा नहीं पाया जा सकता है। इस समस्या के लिये एक व्यापक दृष्टिकोंण की आवश्यकता है जिसमें उन विभिन्न कारकों को ध्यान में रखा जाये जो बच्चों को श्रम बाजार में उतारने और उसमें बनाये रखने के लिये विवशता उत्पन्न करते हैं।

भावी नीति एवं सुझावः

बाल श्रम की समस्या न सिर्फ गम्भीर है बल्कि इसकी जड़े समाज की सामाजिक–आर्थिक स्थिति में गहराई से विद्यमान है, इस कारण इसके समाधान के लिये केवल एक दृष्टिकोण से सोचना अपर्याप्त होगा। चूंकि इस समस्या का कारण अनेक सामाजिक समस्यायें हैं अतः इसके समाधान के लिये विस्तृत

दृष्टिकोण की आवश्यकता है। बाल श्रम समस्या के स्थाई समाधान के लिये निम्नलिखित प्रमुख सुझाव दिये जा सकते है।

बालकों के संरक्षकों की आय इतनी पर्याप्त होनी चाहिये कि वे अपनी समस्त आवश्यकताओं को आसानी से पूरा कर सके। जब तक श्रमिक परिवारों को अपना जीवन निर्वाह करने के लिये अपनी मजदूरी के अतिरिक्त और आय की आवश्यकता रहेगी तब तक बाल श्रम को बराबर रोजगार पर लगाया जाता रहेगा। पाल डूग्लास के शब्दों में, "समाज के बच्चों को संरक्षण प्रदान करने का सबसे प्रभावपूर्ण ढंग बच्चों के माता–पिता को इतनी आय प्रदान करना है जिससे वह उनका उचित रूप से पालन–पोषण कर सके।" अतः इस सम्बन्ध में सरकार को बाल श्रमिकों के अभिभावकों को उचित मजदूरी एवं रोजगार दिलाने के लिये निश्चित रूप से गम्भीर प्रयास करने होंगे। इस सम्बन्ध में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की एक रिपोर्ट में भी उल्लेख मिलता है कि "बाल श्रम को रोकने की समस्या बच्चे के पालन–पोषण और सभी श्रमिकों को एक स्तर पर बनाये रखने योग्य जीवन निर्वाह मजदूरी देने से सम्बन्धित है।" अतः सरकार को इस दृष्टि से प्रभावी कदम उठाने की आवश्यकता है।

भारत की वर्तमान परिस्थितियों में निर्धनता के पूर्ण रूप से उन्मूलन की आशा करना मृगतृष्णा मात्र है, अतः सरकार को चाहिये कि बाल श्रमिकों से सम्बन्धी अधिनियमों को अधिक कठोरता से लागू करें। इन अधिनियमों का उल्लंघन करने वाले सेवायोजकों को कठोर दण्ड देने की व्यवस्था की जानी चाहिये।

सन्तुलित क्षेत्रीय विकास कार्यक्रमों को महत्व प्रदान करने के साथ ही साथ ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार वृद्धि के लिये नियमों के निर्माण की आवश्यकता पर बल दिया जाना चाहिये। इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों में भूमि की उर्वरता बढ़ाने,

ऋण उपलब्ध कराने, उन्नत किस्म के बीजो, खादों तथा तकनीकी विकास के साथ–साथ स्वास्थ्य एवं अन्य सामाजिक सेवाओं के विकास की सम्भावनाओं पर बल दिया जाना चाहिये तथा इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये नियमों एवं कानूनों का निर्माण किया जाना चाहिये।

जिन उद्योगों में बच्चों को कार्य पर लगाया गया है, उन उद्योगों में उनकी शिक्षा का भी साथ–साथ प्रबन्ध होना चाहिये। पद्मिनी सेन गुप्ता के शब्दों में "चूंकि जीवन में शिक्षा का काफी महत्व है और आर्थिक दबाव इतना अधिक है कि बच्चों को भी अपना तथा परिवार का पेट पालने के लिये काम करने की आवश्यकता है, इसलिये बेसिक शिक्षा का आदर्श 'पढ़ो और कमाओ' ही इसका एकमात्र उपाय मालूम पड़ता हैं।"[1] श्रम जाँच समिति ने भी कहा है कि "श्रमिकों की भावी सन्तानों की ओर ध्यान देना सरकार का कर्तव्य है और सरकार को इस ओर ध्यान देना चाहिये कि कहीं बालकों का बचपन स्कूलों में पढ़ने, शिशुगृहों में पालित–पोषित होने तथा खेल के मैदानों के स्थानों पर कारखानों व कार्यशालाओं के गन्दे स्थानों में तो नष्ट नहीं हो रहा है।" अतः इस हेतु सरकार को चाहिये कि वह अनिवार्य शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन तथा अन्य कल्याण योजनाओं की व्यवस्था करें।

बाल श्रम समस्या के संदर्भ में सामाजिक जागरूकता लाने तथा सामाजिक दृष्टिकोण में शीघ्रातिशीघ्र परिवर्तन किये जाने की आवश्यकता है। बच्चों का शारीरिक एवं मानसिक विकास हमारा राष्ट्रीय कर्तव्य होना चाहिये। इसके प्रति समाज में जागरूकता लाने की आवश्यकता है। स्वयंसेवी संस्थायें इस समस्या के

---

[1] Smt. Gupta Padmini Sen : Child Labour as a Social Problem, P 93.

समाधान में उपयुक्त भूमिका निभा सकती हैं। अतः सामाजिक सेवा कार्यक्रमों में इनकी भागीदारी को सुनिश्चित किये जाने की आवश्यकता है।

शिक्षा एवं प्रशिक्षण सुविधाओं का विस्तार करने के लिये उन्हें निश्चित रूप से निर्धनता निवारण कार्यक्रमों एवं नियमों से सम्बद्ध किया जाना चाहिये। लोगों की आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षा एवं प्रशिक्षण सुविधाओं को जिम्मेदारी के साथ पहुँचाने का प्रयास किया जाना चाहिये। इसके लिये विशेष शैक्षिक तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रमों का संचालन किया जाना चाहिये।

समय–समय पर प्राथमिक स्तर पर बच्चों का पंजीकरण किया जाना चाहिये तथा निःशुल्क अनिवार्य शिक्षा को प्रमुखता के साथ लागू करना सरकार का प्रमुख उद्देश्य होना चाहिये। इसके अतिरिक्त सरकार को अनिवार्य रूप से स्वयं सेवी संस्थाओं के माध्यम से अनौपचारिक शिक्षा के प्रसार, स्वास्थ्य सेवा, पोषण तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रमों के विस्तार के लिये वित्तीय सहायता प्रदान करनी चाहिये। इन कार्यक्रमों का लाभ बाल श्रमिकों तक निश्चित रूप से पहुँचाया जाना चाहिये।

राष्ट्र के दीर्घकालीन हित की दृष्टि से सरकार को गांव–गांव में ऐसे स्कूल खोलने चाहिये जिनमें बच्चों को पढ़ाने लिखाने के अलावा उनसे खेती–बाड़ी या किसी शिल्प का कामकाज कराया जाये। उन्हें बकायदा पारिश्रमिक दिया जाये। उनकी मदद से जो उत्पादन हो उसकी बिक्री से यह पारिश्रमिक दिया जा सकता है। ऐसी हालत में माता–पिता भी बच्चों को आसानी से स्कूल भेजने के लिये तैयार हो जायेंगे। बच्चे भी पढ़ने–लिखने के साथ–साथ कुछ विशेष योग्यता प्राप्त कर सकेंगे जो भविष्य में उनके काम आयेगा।

बच्चों को काम देने पर रोक लगाने के बजाये ऐसे कानून बनाना आवश्यक और उचित है जिसमें बच्चों का शोषण रोका या कम किया जा सके। इस सम्बन्ध में अन्तर्राष्ट्रीय कानून भी हैं जिन्हें कठोरता के साथ लागू किया जा सकता है। साथ ही ऐसे उद्योगों की सूची को क्रमशः बढ़ाया जा सकता है जिनमें बच्चों को रोजगार नहीं दिया जायेगा। साथ ही उनके काम के घण्टे, अवकाश, छुट्टी आदि को नियमों के अन्दर लाया जाना चाहिये।

समस्या का समाधान करने के लिये उसकी जड़ों को समाप्त करना आवश्यक होता है। महिला कल्याण कार्यो और गैर–घरेलू आर्थिक क्रियाओं में उनकी भागीदारी बढ़ाने की आवश्यकता है जिससे वे अपने बच्चों की आवश्यकताओं को पूरा कर उनकी कार्य में संलिप्ता को समाप्त करने में योगदान दे सकें। इसके अतिरिक्त परिवार नियोजन कार्यक्रमों एवं नियमों को सख्ती से लागू किये जाने की आवश्यकता है। परिवार में एक या दो बच्चों के नियम को सख्ती से लागू किया जाना चाहिये। स्वास्थ्य सुविधाओं का प्रसार किया जाना चाहिये।

सामाजिक दृष्टिकोण को परिवर्तित करने की आवश्यकता है जिससे लोगों को समस्या की गम्भीरता के प्रति जागरूक किया जा सके। इसके लिये संचार साधनों को विकसित कर गांव–गांव तक इसकी पहुँच को सुनिश्चित किया जाना चाहिये।

बाल मजदूरी समाप्त करने और काम से मुक्त कराये गये बच्चों के पुनर्वास के मामले में मीडिया की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है उसको लोगों को सूचित करने के साथ ही उनके मन में बैठे भ्रमों और भ्रांतियों को दूर करना है। इस प्रश्न पर संवेदनाशीलता पैदा करनी होगी और इस सम्बंध में व्यक्त किये जा रहे संदेहों को दूर करना होगा। यदि हम एक व्यवस्थित मीडिया और संचार पैकेज तैयार करें

जिसमें सामाजिक रूप से प्रासंगिक विषय हों तथा जिसमें इसके केन्द्रीय संदेश को प्रसारित करने की विधि हो तो कोई भी इस कामे में मीडिया की केन्द्रीय भूमिका पर सवाल खड़ा नहीं कर सकता । इस सम्बंध में प्रश्न यह उठता है कि सबसे प्रभावी प्रिंट मीडिया है या इलेक्ट्रानिक मीडिया या संचार मीडिया या लोक संचार के माध्यम। इसका जवाब यह है कि इन तीनों माध्यमों के साथ ही और भी कई माध्यमों की आवश्यकता इस काम में है। हमें एक बहुत ही व्यवस्थित मीडिया कार्ययोजना बनानी होगी जिससे पारंपरिक और आधुनिक दोनों ही तरह के माध्यमों को इस काम में लगाया जा सके। सारा ध्यान इस बात पर दिया जाना चाहिए कि बच्चों से काम कराने का क्या नुकसान हो रहा है। इसका एहसास एक साथ नियोक्ताओं, निर्माताओं, निर्यातकों, ठेकेदारों एजेटों और बच्चों के माता पिता को भी कराया जाना चाहिए। जोखिम वाले उद्योगों में काम करने वाले बच्चों की बदहाली को सामने रख कर इन सभी लोगों के मन में इस सवाल पर संवेदना जगाई जा सकती है।

आज जनसंचार के निश्चित माध्यमों (टी0वी0, रेडियो, प्रेस आदि) से सभी क्षेत्रों (शहरी, अर्द्धशहरी और ग्रामीण) में एक समान रूप से अपनी बात नहीं पहुचाई जा सकती है। निम्न तालिका से भी इस बात की पुष्टि होती है –

तालिका संख्या – 4.4
जनसंचार माध्यमों की पहुंच
(12 वर्ष से अधिक उम्र के लोगों का प्रतिशत)

संचार का माध्यम	अखिल भारतीय	शहरी	ग्रामीण
टी0वी0 के दर्शक	44.5	75.4	32.8
अखबारों के पाठक	33.3	58.1	24.0
रेडियो के श्रोता	19.7	21.1	19.2

श्रोत – सेन्टर फार मीडिया स्टडीज, नई दिल्ली

चूंकि अभी भी मीडिया की पहुंच सीमित ही है, इसलिये हमें इसमें निवेश बढ़ाकर इसका आधार बढ़ाने की भी आवश्यकता है, और अपने उद्देश्य को पाने के लिये एक – एक कदम आगे बढाये जाने की आवश्यकता है।

जन–जागरण अभियान चलाकर सामान्य जनता को बाल श्रम उन्मूलन कार्यक्रमों से जोड़ा जाना चाहिये। इसके अतिरिक्त बाल श्रम उन्मूलन कानूनों के माध्यम से बाल श्रमिकों को प्रदत्त अधिकारों की जानकारी जन साधारण तक पहुँचाया जाना चाहिये ताकि सामान्य जनता उनके अधिकारों की रक्षा के प्रति जागरूक हो सके।

असंगठित क्षेत्रों में कार्यरत बाल श्रमिकों के संरक्षण का प्रयास किया जाना चाहिये। इसके लिये प्रवासी परिवारों के लिये आय अर्जित करने सम्बन्धी कार्यक्रमों, व्यावसायिक प्रशिक्षण वर्कशाप, परिवार कल्याण कार्यक्रमों तथा समाज के कमजोर वर्गो के लिये विकासात्मक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाना चाहिये। बाल श्रमिकों के पुनर्वास के लिये गम्भीर प्रयास किये जाने चाहिये। पुनर्वासित बाल श्रमिकों के भावनात्मक, मनोवैज्ञानिक एवं शारीरिक विकास के लिये समुचित चिकित्सीय सुविधा की व्यवस्था की जानी चाहिये। स्वास्थ्य सेवाओं जैसे स्वच्छ जल एवं शौचालय की व्यवस्था की जानी चाहिये जिससे उन्हें जल–जनित बीमारियों से बचाया जा सके। कुपोषण एवं विटामिन की कमी से होने वाली बीमारियों की रोकथाम के लिये सुरक्षित खाद्य सामग्री, आवश्यक दवाइयों तथा विटामिन की गोलियों की आपूर्ति को सुनिश्चित किया जाना चाहिये। व्यावसायिक बीमारियों से सुरक्षा के लिये नियमित चिकित्सीय जाँच की व्यवस्था की जानी चाहिये। इन कार्यक्रमों से निश्चित रूप से बाल श्रमिकों के स्वास्थ्य स्तर में सुधार होगा।

शहरी क्षेत्रों के निर्धनों के कल्याण के लिये श्रेष्ठ रोजगार योजना जैसे विकास कार्यक्रमों का समुचित कार्यान्वयन किया जाना चाहिये ताकि परिवारों को निर्धनता की रेखा से ऊपर लाया जा सके।

ऐसे नगरीय क्षेत्रों में जहाँ बाल श्रम समस्या सर्वाधिक है सामुदायिक केन्द्रों की स्थापना की जानी चाहिये। इन केन्द्रों के माध्यम से शिक्षा, स्वास्थ्य, प्रशिक्षण कार्यक्रमों जैसे–बाइण्डिगं, बढ़ईगीरी, गेटिश निर्माण, पैकिंग, साइकिल रिपेयरिंग, लिफाफे एवं ग्रीटिंग निर्माण, फोटोग्राफी तथा मनोरंजन कार्यक्रमों का संचालन किया जाना चाहिये जिससे बाल श्रमिकों का चहुँमुखी विकास हो सके।

बाल श्रम समस्या को प्रभावी रूप से कम करने के लिये श्रम प्रवर्तन अधिकारियों को एक अधिक सघन प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिये ताकि वे निरीक्षण और अभियोजन सम्बन्धी कार्यवाई को कुशलता पूर्वक संचालित कर सके। इसके साथ ही साथ समस्त प्रयासों की अधिक गहरी और व्यापक पहुँच को सुनिश्चित करने के लिये नियोक्ताओं, श्रम विभागों और अन्य सरकार तथा गैर सरकारी प्रयासों और हस्तक्षेपों के मध्य तारतम्य बढ़ाया जाना चाहिये।

नियमों और कानूनों को सख्ती से लागू करने के लिये राज्य सरकारों को बाल श्रम उन्मूलन के लिये प्रभावी कदम उठाने चाहिये ताकि बाल श्रम अधिनियम में वर्णित व्यवसायों में बाल श्रमिकों की संलिप्तता को समाप्त किया जा सके। इन कानूनों का उल्लंघन करने पर कठोर दण्ड की व्यवस्था की जानी चाहिये। इसके लिये निरीक्षकों की नियुक्ति की जा सकती है।

जिन उद्योगों में नियोक्ता आसानी से मजदूरी कम या अधिक कर लेते हैं वहाँ बड़े मजदूरों की जगह बाल श्रमिक आसानी से ले लेते हैं। भारत में 1948 के न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अनुसार बालकों को अधिक से अधिक साढ़े

चार घण्टे काम लेने और व्यस्क श्रमिकों की आधी मजदूरी देने का प्रावधान है। अनौपचारिक क्षेत्र में मजदूरी के समय को मापने की कोई निश्चित व्यवस्था नहीं है, इसलिये व्यवहार में बाल श्रमिकों से काम तो पूरे दिन लिया जाता है किन्तु उन्हे मजदूरी सिर्फ आधी दी जाती है। इसी कानून में यह प्रावधान भी है कि मजदूरी नकद या वस्तुओं के रूप में भी दी जा सकती है। देश के अलग – अलग भागों में आवश्यक वस्तुओं के रूप में भी दी जा सकती है। देश के अलग – अलग भागों में आवश्यक बस्तुओं (चावल, गेंहूँ, दाल, मोटे अनाजों) के दाम एकदम अलग – अलग हैं, इसलिये किसी क्षेत्र में धान, गेंहू या मोटे अनाज के रूप में दी जाने वाली मजदूरी रूपये में कितनी हुई, इसके साथ ही तौल से कम सामान देना या इसमें धोखा करने के मामले भी जुड़े हैं। इसलिये वस्तुओं के रूप में मजदूरी की व्यवस्था अन्ततः श्रमिक के लिये नुकसानदेह बैठती है। साधारणतः यह माना जाता है कि जब सामान्य श्रम बाजार में कानून के चलते या स्थानीय समाज द्वारा स्वंय से काम के घण्टे और मजदूरी तय हो तब नियोक्ता बाल श्रमिकों के स्थान पर वयस्क श्रमिकों को काम पर लेना पसंद करते हैं, क्योंकि बच्चे उनके जितना काम नहीं कर पाते। इसलिये यदि न्यूनतम मजदूरी अधिनियम को सख्ती से लागू किया जाये और बाजार के हिसाब से न्यूनतम मजदूरी की दरें संशोधित होती रहें तो इससे भी बाल श्रमिकों की संख्या पर अंकुश लगाने में मदद मिलेगी।

अन्त में श्रम विभाग उत्तर प्रदेश द्वारा जनसाधारण से की गई अपील का वर्णन करना उपयुक्त होगा जो कि इस समस्या के समाधान के लिये जन–जागरूकता उत्पन्न कर सकती है "देश, काल, परिस्थितिवश, कुप्रचलन एवं अनैतिक प्रथायें, अवांछित परम्पराएं, दुष्प्रवृत्तियों के रूप में समाज में जगह बना लेती हैं जिन्हें मिटाना आवश्यक होता है। अनैतिक प्रथाएं, परम्पराएं तथा दुष्प्रवृत्तियां, किसी भी कारण क्यों न पनपती रही हों, उन्हें जानना, मिटाना हर

व्यक्ति का कर्तव्य है, इसके निदान का स्थायी उपाय जन–चेतना जाग्रह कर, व्यापक विरोध प्रकट कर, जनमानस को संवेदनशील बनाने से संभव है।

बाल श्रम समस्या समाज से जुड़ी हुई एक सामाजिक समस्या है और किसी भी सामाजिक समस्या या समाज में फैली कुप्रथा का निवारण, सामाजिक सम्बन्धों में व्याप्त मान्यताओं, मापदण्डों के अन्तर्गत सामाजिक सोंच व चिन्तन में बदलाव लाने पर ही किया जाना संभव व स्वीकार्य होता है।

आज विश्व में शान्ति व मानवता के सिद्धान्तों को अपनाने पर बल देने वाले हमारे राष्ट्र की अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर बाल श्रम के अधिकाधिक उपयोग के कारण आलोचना हुई है। हम यह अच्छी तरह से समझते व मानते है कि समाज के ये नन्हें पौधे पूरी तरह बढ़कर वृक्ष बनने से पहले ही मुरझाने लगते है। इससे न केवल परिवार व समाज की क्षति होती है, अपितु राष्ट्र के भावी स्वस्थ नागरिक कम होते है।

देश की इस ज्वलन्त समस्या के निदान में समाज के प्रत्येक नागरिक का आह्वान है कि वह स्वैच्छिक/ गैर सरकारी/ सरकारी संस्था से जुड़कर इस कुप्रथा को समाप्त करने में सहयोग प्रदान करे।"

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

REFERENCES

1. A. Bequele : Towards a Global programme of action plan on Child Labour – I.L.O., Geneva (1985).
2. A. Bouhdiba : Exploitation of child labour, New York (1982).
3. A. Davin, Child Labour, the working class family and domestic ideology in 19th century, Development and change – London (1982).
4. Abdul Aziz, Urban poor and urban informal sector, Ashish Publishing House, New Delhi (1984).
5. A.N. Das, "On Human Bondage" in Main Stream No. 35, (1976).
6. B.N. Juyal : Child Labour in Carpet Industry of Mirzapur, Bhadohi, A situational Analysis, I.L.O., New Delhi 1993.
7. B. Kumar and Gita Viswas : A study of Problems of working Children in Lock making industry of Aligarh, 1992.
8. Child Labour in India – "The Indian Journal of Public administration, Vol. XXV, July – Sept. 1979, P-3.
9. Committee on child Labour, Government of India, 1980, PP-11 – 12.
10. Chaudhari K. – "Bonded Labour" EPW No. 10, 1978.
11. Connelll and Others – Migration from rural areas – University Press – London (1976).
12. Dr. Sarala Gopalan – Position of Women's in India, A Report of National Commission for women, 2001, PP – 84 – 85.
13. D.J. Nandekar : Occupational Preparation of out of school youth, Manpower Journal, Vol. VIII, July – Sept. (1972).
14. D. Detray : Children's work activities in Malaysia population and development review, New York (1983).

15. D.A. Naidu : Child Labour participation in India – A Statewise census Analysis, International Institute for population studies, Bombay, (1977 – 78).

16. Dr. G.K. Pathak – "Direction and Situation of Child Labour in India", Pratiyogita Darpan, 1999,

17. Economic Survey, 2002 – 03.

18. E. Boulding : Children's Rights and the wheel of life, New Brunswick Transaction Books (1979).

19. G.P. Mishra and P.N. Pandey, "Child Labour in Glass Industry" A.P.H. Publishing Corporation, New Delhi.

20. "Glass Factories of Firozabad; The Plight of Workers" EPW, November 15th, 1986.

21. Giri V.V. : Labour Problem in Indian Industry.

22. Gerry Rodgers and Guy Standing : The Economic Rules of Children in Low-Income Countries, (Geneva, ILO, 1979) Population and Labour Policies Programme, working paper No. 81.

23. G. Nair : Plight of Child Labour, Commerce, Vol. 156 No. 4017, May, (1988).

24. G. Rodgers and G. Standing : Economic Roles of Children in Low Income Countries, International Labour Reivew, 120(1), Jan-Feb. (1981).

25. Helan R. Seker : Child Labour: A Preview, V.V. Giri, National Labour Organization, Noida, U.P.

26. Heather and Vijay Joshi : Surplus Labour and the City: A Study of Bombay, 1976.

27. Indira Sharma, Bipin Kumar and K.B. Padma Deo : Child Labour in India – An Anatomy, in Children at work problems and Policy Options, B.R. Publishing Corporation, Delhi, 1993.

28. Institute of Industrial Relations, University of Philippines – Child Labour in Philippines, Wood based and clothing Industries, in competing child labour, ILO Geneva Edited by Assefa and J.C. Boyden, 1988.

29. Ideas Forum 1981, UNICEF.

30. Institute of Public Opinion, Monthly Commentary on Indian Economic Condition, December, 1973..

31. Indira Bhargawa – 'Health Situation of working children', in child labour and Health Prolems, Edited by Usha S. Naidu and Kamini R. Kapadia, T.I.S.S. Bombay, 1985.

32. I.L.O. Minimum Age Convention (No. 138), 1973, Article, 1.

33. I.L.O. Minimum Age for admission to Employment Report IB (1),

34. I.L.O. Minimum Age Convention (No. 138), 1973, Article, 7.

35. I.L.O. Recommendation No. 146.

36. Institute of Public Opinion, Monthly Commentary on Indian Economic Conditions, Dec. 1973.

37. John Macleod, Davidson's : Principles and Practice of Medicine, 1975.

38. Jenesh Chandra Kulshrestha : Child Labour in India, Ashish Publishing House, New Delhi, 1978.

39. J.C. Kulshrestha : Child Labour in India, Ashish Publishing House, 1987.

40. J. Challis, D. Elliman : Child workers today, Anti-Slavery Society, London, Sunbury, Quartermaine House Ltd., (1979).

41. J.C. Caldwell : Population growth and socio-economic change in West Africa, Columbia University Press, (1975).

42. J. Tellis, Nayak : Urban Girls Earn and Learn, Social Welfare, Vol. 22, (1975).

43. Kulashestha D. and K. Sharma : Child Labour in Muradabad Metal Ware Industry, The Economic Times, October 19th, 1980.

44. Kulkarni and Parasuram : Preventing and Promotive Health Service, in Child Labour and Health Problems, Edited by Usha S. Naidu and Kamini R. Capadia, T.I.S.S. Bombay, 1985.

45. K. Shiv Prasad and B. Ramachandran Yogi : Magnitude of Child Labour in India, Some Policy Prescriptions in Children at work problems and policy options, B.R. Publication Corporation, New Delhi, 1993.

46. L.B. Costin : School and employment protection and opportunity, McGraw Hill Book Company, New York (1972).

47. L. Swepstion : Child Labour, its regulation by ILO, Standards and National Legislation, International Labour Review, Geneva (1982).

48. Laxmidhar Mishra – Bharat Men Bal Mazdoor : Najuk Bachapan, Muskil Zimmedari, Sep. 2000.

49. Meena Galliara : Profile of an Indian Child, Social Welfare Vol. XXXXVI, No. 6, Sept. 1989.

50. Malvika Patnaik : " Child Labour in India" – The Indian Journal of Public Administration, Vol. XXV. July – Sept. – 1979

51. Madan G.S. : Review of Legal Provisions Relating too facilities for and working conditions of Employed children – The Impact on their Health Education and Development.

52. Meera Verma and Neeta Verma : Incidence of Female child labour in India, in children at work problems and policy options, B.R. Publication Corporation, Delhi, 1993.

53. M.R. Rosenzweig : The Demand for children in farm households – Journal of Political Economy, Vol. 85, No. 1, (1977).

54. M.R. Rosenzweiz and R.E. Evension : Fertility, Schooling and the Economic Contribution of Children in Rural India – An Economic Analysis, Econometrica, Vol. 45, No. 5, (1977).

55. M.T. Cain : Economic Activities of Children in a Village in Bangladesh in Rural Household studies in Asia – Singapore University Press (1980).

56. M. Shah : Child Labour – A Threat to health and development defence for children, International Labour Review, Geneva (1985).

57. Nadeem Mohsin : Child Labour – Strategy for Combating Risks – in Child at work problems and Policy options, B.R. Publication Corporation, New Delhi, 1993.

58. National Institute of Public Co-operation and Child Development - Seminar Recommendations.

59. National Policy for children, Department of Social Welfare, August, 1974, Indian Labour Journal Vol. 27, December, 1986.

60. P.N. Shah : Working children – Health Problems in Child Labour, Edited by Usha, S. Naidu and Kamini R. Kapadia, T.I.S.S., Bombay, 1985, P-65.

61. P. Pellet : Malnutrition, Health and Development, Food and Nutrition Bulletin, Vol. 3, No.1, (1981).

62. P. Saraswati : Education of child labour in the Rural Sector in India, AICC Economic Review, Vol. XX, (1969).

63. P. Chan : Forgotton little people, A Study of Urban Child Labour in a Developing Economy, Asian Economies – Seoul (1980).

64. Prof. Smt. Acharji : Child Labour in India (Unpublished) Read in Seminar Organized by NIPCCD in Nov. 1975.

65. Report of the Committee on Child Labour, Government of India, 1980.

66. Report of the National Commission on Labour, New Delhi, 1969, .

67. Robert et.al. : (1921), In a Study State of New York Burear of Women in Industry. The Health of working child, Sup. Bulletin, No. 134, December, 1924.

68. Recommendations of Seminar on Employment of Children, Organized by NIPCCD, New Delhi, Held in Nov. 1975.

69. Report of the Royal Commission on Labour, London, 1933.

70. Report of National Commission on Labour, 1969.

71. Rao, D.L.P. : An Analysis of Kinship Economy and Religion of Jatapee – "A Tribe in Andhra Pradesh".

72. Report of I.L.O. quoted in the book "Need of Children", Published by UNICEF.

73. Report of the National Commission on Labour, 1969.

74. R.D. Singh and G.S. Schuh : The Economic contribution of farm children and the household fertility, Decisions – Evidence from a Developing Countries, Brazil – Indian Journal of Agricultural Economics, Vol. 41, No. 1, (1986).

75. R.N. Pandey : Child Labour, Social Welfare, XXVI (4), July, (1979).

76. R. Porter : Child Labour in Hong-Kong and related problems – A brief Review, International Labour Review, Geneva, (1975).

77. Sudheer Kumar : Child Labour and Education in Children at work problems and policy options, B.R. Publishing Corporation, New Delhi, 1993.

78. Salazar : "Child Labour in Columbia – Bogta's" quarries and Brickyards, in Combating child Labour, I.L.O. Geneva, Edited by Assefa and J.C. Bogden, 1988, PP-54 – 55.

79. A.R. Desai and SD Pillai : A Profile of an Indian Slum, University of Bombay Press – Bombay (1972).

80. Sudama Singh and Maya Singh : 'The Problems of child labour' – Indian Journal of Labour Economics, Vol. 33, No. 4, October – December, (1990).

81. S. Benerjee : Child Labour in Thailand, A General Review Anti-Slavery Society – London, (1980).

82. S. Benerjee : Child Labour in India – A General Review with case studies of the brick making and Zari Embroidery Industry, Anti-Slavery Society – London (1979).

83. Smt. Gupta, Padmini Sen: "Child Labour as a Social Problems."

84. Smt. Khandar : M. Report on the Situation of Children and Youth in Greater Bombay, 1970.

85. T.S. Papola : Urban Informal Sector in Developing Economy, Delhi: Vikas Publishing House, 1981, P-4.

86. The Punjab Shop and Commercial Establishment Act, 1958, Article, 29.

87. T.S. Papola : Informal Sector – Concept and possibilities, Economic and Political Weekly, Vol. XV, No. 18, May, (1980).

88. T.S. Rajam : Is the child labour participation rate Declining? Social Welfare, Vol. XXXIII, No. 2, May, (1986).

89. U.N.I. Report, Indian Express, November 19, 1993.

90. UNICEF, An Analysis of the Situation of Children in India Draft Report, New Delhi, (1984).

91. Vishwa Mitra : Growth of Informal Sector in Punjab's Urban Economy; A Case study of Patiala City, 1984.

92. Vijay Verma, Child Labour – Need for Social Awareness, Yojana, Vol. XXIII (2), November, (1979).

93. W. Theodore Schultz : The High Value of Human Time, Population Equilibrium Journal of Political Economy, No. 82, (1974).

प्रश्नावली

प्रश्नावली

1. नाम :
2. पिता का नाम :
3. आयु :
4. जाति :
5. धर्म :
6. जन्म स्थान :

पारिवारिक स्थितिः

7. आपका परिवार कैसा है?

   (क) एकल परिवार (ख) संयुक्त परिवार

8. आपके परिवार में कुल कितने सदस्य है?

   (क) 1 (ख) 2 (ग) 3 (घ) 4 (च) इससे अधिक

9. आपके परिवार में कुल कितने सदस्य शिक्षित है?

   (क) 1 (ख) 2

   (ग) 3 (घ) सभी शिक्षित

   (च) सभी अशिक्षित

10. आपने किस् कक्षा तक शिक्षा प्राप्त की है?

    (क) प्राथमिक (ख) पूर्व माध्यमिक (ग) माध्यमिक (घ) इण्टर

11. क्या आप काम के साथ–साथ स्कूल भी जाते है?

    (क) हाँ (ख) नहीं

12. आपकी पढ़ाई बीच में छोड़ने का क्या कारण है?

    (क) पढ़ाई में मन नहीं लगता (ख) माता–पिता की आर्थिक स्थिति

    (ग) विद्यालय सुविधा का अभाव (घ) अध्यापकों का बुरा बर्ताव

    (च) अन्य कारण

13. कम आयु में कार्य में प्रवेश का क्या कारण रहा है?

(क) निर्धनता (ख) बड़ा परिवार (ग) अशिक्षा

(घ) माता–पिता की उपेक्षा (च) काम सीखने की इच्छा

14. आप जिस मकान में रहते है उसकी स्थिति क्या है?

(क) कच्चा घर (ख) झुग्गी–झोपड़ी (ग) पक्का घर

15. आपका मकान किस प्रकार का है?

(क) पैत्रक (ख) किराये का (ग) अवैध

16. आपका निवास स्थान कहा है?

(क) गाँव में (ख) कस्बे में (ग) शहर में

17. क्या आपको विद्युत व्यवस्था उपलब्ध है?

(क) हाँ (ख) नहीं

18. क्या आपके माता–पिता शिक्षित हैं ?

(क) हाँ (ख) नहीं (ग) पता नहीं।

19. क्या आपके माता पिता ऋणग्रस्त हैं ?

(क) हाँ (ख) नहीं (ग) पता नहीं।

20. यदि हाँ तो ऋण प्राप्ति के स्रोत क्या है ?

(क) महाजन या साहूकार (ख) सरकार

(ग) बैंक या वित्तीय संस्था (घ) अन्य

21. क्या आपके माता–पिता किसी प्रकार की बीमारी से ग्रस्त रहते हैं ? यदि हाँ तो बीमारी क्या है ?

(क) दमा या खांसी (ख) टी0बी0

(ग) कुपोषण जनित बीमारियाँ (घ) कैंसर (ड़) अन्य

22. उपलब्ध विद्युत व्यवस्था किस प्रकार की है?

(क) वैध कनेक्शन (ख) अवैध (कटिया)

(ग) किराये पर (घ) अन्य

23. क्या आपके निवास में शौचालय व्यवस्था है? यदि हाँ तो उसका प्रकार क्या है?

(क) सीवर लाइन (ख) सोख्ता (ग) शुलभ शौचालय

24. आप अपनी आय का सर्वाधिक भाग किसमें व्यय करते है?

(क) भोजन एवं ईधन (ख) शिक्षा (ग) स्वास्थ्य

(घ) आवास (ड) मनोरंजन (च) अन्य

25. क्या आपको किसी प्रकार की सरकारी सहायता प्राप्त होती है?

(क) हाँ (ख) नहीं (ग) कभी–कभी (घ) कभी नहीं

रोजगार सम्बन्धी स्थितिः

26. आपने रोजगार किस प्रकार प्राप्त किया?

(क) स्वयं (ख) माता–पिता या रिश्तेदारों की मदद से (ग) अन्य

27. रोजगार में प्रवेश करने का मुख्य उद्देश्य क्या रहा है?

(क) परिवार आय में वृद्धि के लिये (ख) काम सीखने एवं अनुभव के लिये

(ग) परिवार में आय अर्जित करने वाले किसी अन्य सदस्य के न होने के कारण

28. प्रतिदिन कार्य के घण्टों की संख्या क्या है?

(क) 2–4 घण्टे (ख) 4–6 घण्टे (ग) 6–8 घण्टे (घ) इससे अधिक

29. कार्य के दौरान आराम के घण्टों की संख्या क्या है?

(क) 0–1 घण्टे (ख) 1–2 घण्टे (ग) कुछ नहीं

30. साधारणतयः कार्य में अनुपस्थित रहने का कारण क्या रहता है?

(क) बीमारी (ख) आलस्य (ग) त्यौहारों के दौरान

(घ) सेवायोजक के बुरे बर्ताव के कारण

31. कार्य के दौरान अनुपस्थित रहने पर सेवायोजक का क्या व्यवहार रहता है?

(क) मजदूरी में कटौती (ख) मार–पीट (ग) गाली–गलौज

(घ) काम से हटा देने की धमकी

32. आपको मजदूरी कैसे प्राप्त होती है?

(क) प्रतिदिन (ख) साप्ताहिक (ग) महीने में (घ) वर्ष में

33. आपकी औसत मासिक आय क्या है?

(क) 200 से 500 रू0 (ख) 500 से 800 रू0

(ग) 800 से 1200 रू0 (घ) इससे अधिक

34. क्या आप अपने काम से संतुष्ट है?

(क) हाँ (ख) नहीं

35. क्या आप आगे भी इसी काम को करते रहना चाहते है?

(क) हाँ (ख) नहीं

36. यदि आप अपने वर्तमान कार्य से संतुष्ट नहीं हैं तो उसका कारण क्या है?

(क) अत्यधिक कठिन परिश्रम (ख) घर से अधिक दूरी (ग) निम्न मजदूरी

(घ) प्रदूषित वातावरण (च) सेवायोजक का बुरा व्यवहार

37. आपको औसतन महीनें में कितनी छुट्टियाँ मिलती है?

(क) 1 (ख) 2 (ग) 3 (घ) 4 (च) इससे अधिक

38. क्या सेवायोजक द्वारा आपके साथ अच्छा बर्ताव किया जाता है? यदि नहीं तो उसका क्या कारण है?

....

39. बीमारी या दुर्घटना के समय क्या आपको किसी प्रकार की चिकित्सीय सुविधा उपलब्ध होती है?

(क) हाँ (ख) नहीं (ग) कभी–कभी (घ) कभी नहीं

40. क्या अपनी आय का कुछ भाग आप निम्न कार्यो पर व्यय करते है?

(क) बीड़ी–सिगरेट (ख) सिनेमा (ग) जुआँ या तास (घ) अन्य

41. क्या आप भविष्य के लिये कुछ धन बचाते है?

(क) हाँ (ख) नहीं

42. बुरी आदतों में प्रवेश का कारण क्या रहा है?

(क) दोस्तों या रिश्तेदारों के कारण (ख) मानसिक तनाव (ग) अन्य कारण

43. आप प्रायः किस प्रकार की बीमारी से पीड़ित रहते है?

(क) खाँसी (ख) बुखार (ग) श्वांस सम्बन्धी

(घ) त्वचा सम्बन्धी (ङ) अन्य

44. बीमार होने पर आप इलाज किससे करवाते है?

(क) पंजीकृत डाक्टर (ख) झोला छाप डाक्टर (ग) झाँड–फूंक

(घ) वैद्य (ङ) अन्य

45. क्या आप सेवायोजक के व्यवहार से संतुष्ट है?

(क) हाँ (ख) नहीं (ग) पता नहीं

46. क्या आपको मजदूरी के अतिरिक्त कोई अन्य सहायता प्रदान की जाती है?

(क) हाँ (ख) नहीं (ग) कह नहीं सकते

47. क्या पुलिस या अन्य विभागीय व्यक्तियों द्वारा आपको प्रताड़ित किया जाता है?

(क) हाँ (ख) नहीं (ग) कभी–कभी (घ) कभी नहीं